

श्रीगीताजीकी महिमा ।

वास्तवमें श्रीमद्भगवद्गीताका माहात्म्य वाणीद्वारा वर्णन करनेके लिये किसीका भी सामर्थ्य नहीं है, क्योंकि यह एक परम रहस्यमय ग्रन्थ है । इसमें संपूर्ण वेदोका सार सार सग्रह किया गया है, इसका नस्कृत इतना सुन्दर और सरल है कि, थोडा अभ्यास करनेसे मनुष्य उसको सहज ही समझ सकता है, परन्तु इसका आशय इतना गम्भीर है कि, आजीवन निरन्तर अभ्यास करते रहनेपर भी उसका अन्त नहीं आता । प्रतिदिन नये नये भाव उत्पन्न होते रहते हैं, इसमें यह सदा ही नवीन बना रहता है । एव एकाग्रचित्त होकर श्रद्धा, भक्तिमहित विचार करनेसे इसके पद पदमें परम रहस्य भरा हुआ प्रत्यक्ष प्रतीत होता है । भगवान्‌के गुण, प्रभाव और मर्मका वर्णन जिस प्रकार इस गीताशास्त्रमें किया गया है, वैसा अन्य ग्रन्थोंमें मिलना कठिन है, क्योंकि प्रायः ग्रन्थोंमें कुछ न कुछ गाम्भारिक विषय मिला रहता है, परन्तु “श्रीमद्भगवद्गीता” एक ऐसा अनुपमेय शास्त्र भगवान्‌ने कहा है कि जिसमें एक भी शब्द सदुपदेशमें ग्वाली नहीं है । इसीलिये श्रीवेदव्यासजीने महाभारतमें गीताजीका वर्णन करनेके उपरान्त कहा है कि —

गीता सुगीता कर्तव्या किमन्यैः शास्त्रविस्तरैः ।

या स्वयं पद्मनाभस्य मुखपद्माद्विनिःसृता ॥

गीता सुगीता करनेयोग्य है अर्थात् श्रीगीताजीको भरी प्रकार पढ़कर अर्थ और भावमहित अन्न कारणमें धारण कर लेना मुख्य कर्तव्य है जो कि स्वयं श्रीपद्मनाभ विष्णु भगवान्‌के मुखपरविन्दमें

नभः	= आकाश	धार्त-	= { धृतराष्ट्र-
च	= और	राष्ट्राणाम्	= { पुत्रोके
पृथिवीम्	= पृथिवीको	हृदयानि	= हृदय
एव	= भी		
व्यनु-	= { गन्दायमान	व्यदारयत्	= { विदीर्ण
नादयन्	= { करते हुए		= { कर दिये

अथ व्यवस्थितान्दृष्ट्वा धार्तराष्ट्रान्कपिध्वजः ।

प्रवृत्ते शस्त्रसंपाते धनुरुद्यम्य पाण्डवः ॥ २० ॥

हृषीकेशं तदा वाक्यमिदमाह महीपते ।

मेनयोरुभयोर्मध्ये रथं स्थापय मेऽच्युत ॥ २१ ॥

अथ, व्यवस्थितान्, दृष्ट्वा, धार्तराष्ट्रान्, कपिध्वजः,

प्रवृत्ते, शस्त्रसंपाते, धनुः, उद्यम्य, पाण्डव ॥ २० ॥

हृषीकेशम्, तदा, वाक्यम्, इदम्, आह, महीपते,

मेनयोः, उभयोः, मध्ये, रथम्, स्थापय, मे, अच्युत ॥ २१ ॥

महीपते	= हे राजन्	धार्तराष्ट्रान्	= धृतराष्ट्रपुत्रोको
अथ	= उसके उपरान्त	दृष्ट्वा	= देखकर
कपिध्वज	= कपिध्वज	तदा	= उस
पाण्डव	= अर्जुनने	शस्त्रसंपाते	= { शस्त्र चलनेकी
व्यवस्थि-	= गते हुए	प्रवृत्ते	= { तैयारीके
नान् }			= { समय

मोहको त्याग करके अतिशय श्रद्धा, भक्तिपूर्वक अपने बालकोंको अर्थ और भावके सहित श्रीगीताजीका अध्ययन करावे, एवं स्वयं भी इसका पठन और मनन करते हुए भगवान्की आज्ञानुसार साधन करनेमें तत्पर हो जाय, क्योंकि अति दुर्लभ मनुष्यके शरीरको प्राप्त होकर अपने अमूल्य समयका एक क्षण भी दुःखमूलक क्षणभंगुर भोगोंके भोगनेमें नष्ट करना उचित नहीं है ।

श्रीगीताका प्रधान विषय ।

श्रीगीताजीमें भगवान्ने अपनी प्राप्तिके लिये मुख्य दो मार्ग बताये हैं । एक मात्स्ययोग, दूसरा कर्मयोग । उनमें—

(१) संपूर्ण पदार्थ सृजनृष्णाके जलकी भांति अथवा स्वप्नकी सृष्टिके मदरा मायामय होनेमें मायाके कार्यरूप संपूर्ण गुण ही गुणोंमें वर्तते हैं, ऐसे समझकर मन, इन्द्रियो और शरीरद्वारा होनेवाले संपूर्ण क्रमोंमें कर्तापनके अभिमानमें रहित होना (अ० ५ श्लो० ८, ९) तथा सर्वव्यापी सच्चिदानन्दधन परमात्माके स्वरूपमें एकीभावमें नियमित रहते हुए एक सच्चिदानन्दधन वासुदेवके सिवा अन्य किमीके भी होनेपनेका भाव न रहना, यह तो मात्स्ययोगका भावन है ।

(२) और सब कुछ भगवान्का समझकर सिद्धि, अग्निसिद्धिमें समन्वयभाव रखते हुए आभक्ति और फलकी इच्छाका त्याग करके भगवत्-आज्ञानुसार केवल भगवान्के ही लिय सब कर्मोंका आचरण करना (अ० २ श्लो० ४८, अ० ५, गे० १०) तथा श्रद्धा भक्तिपूर्वक मन, शरीर और शरीरमें सब प्रकार भगवान्के शरण होकर नाम गुण और प्रगल्भमहिता उनके स्वरूपका निरन्तर चिन्तन करना (अ० ६ गे० ४७) यह निष्ठात्म कर्मयोगका भावन है ।

अर्थोक्ति-

कुलक्षये	= { कुलके नाश होनेसे	कृत्स्नम्	= संपूर्ण
सनातनाः	= सनातन	कुलम्	= कुलको
कुलधर्माः	= कुलधर्म	अधर्मः	= पाप
प्रणश्यन्ति	= नष्ट हो जाते हैं	उत	= भी
धर्मे	= धर्मके	अभिभवति	= { बहुत दबा लेता है
नष्टे	= नाश होनेसे		

पापकी वृद्धि-
से वर्णमकरताकी
उत्पत्ति ।

अधर्माभिभवात्कृष्ण प्रदुष्यन्ति कुलस्त्रियः।

स्त्रीषु दुष्टासु वाष्ण्येय जायते वर्णसंकरः ॥४१॥

अधर्माभिभवात् , कृष्ण, प्रदुष्यन्ति, कुलस्त्रिय ,
स्त्रीषु, दुष्टासु, वाष्ण्येय, जायते, वर्णसंकर ॥४१॥

तथा-

कृष्ण	= हे कृष्ण	(और)
अधर्मा-	= { पापके अधिक	वाष्ण्येय = हे वाष्ण्येय
भिभवात्	= { बढ़ जानेसे	स्त्रीषु = स्त्रियोंके
कुलस्त्रिय	= कुलकी स्त्रियाँ	दुष्टासु = दूषित होनेपर
प्रदुष्यन्ति	= { दूषित हो जाती है	वर्णसंकरः = वर्णसंकर
		जायते = उत्पन्न होता है

वर्णमकरता- संकरो नरकायैव कुलघ्नानां कुलस्य च ।

से पितरों को नरककी प्राप्ति । पतन्ति पितरो ह्येषां लुप्तपिण्डोदकक्रियाः ॥४२॥

मकर , नरकाय, एवं, कुलघ्नानाम्, कुलस्य, च,
पतन्ति, पितर , हि, एषाम्, लुप्तपिण्डोदकक्रिया ॥४२॥

मोहको त्याग करके अनिश्चय श्रद्धा, भक्तिपूर्वक अपने बालकोंको अर्थ और भावके सहित श्रीगीताजीका अध्ययन करावे, एवं स्वयं भी ज्युसका पठन और मनन करते हुए भगवान्की आज्ञानुसार साधन करनेमें तत्पर हो जाय, क्योंकि अति दुर्लभ मनुष्यके शरीरको प्राप्त होकर अपने अमूल्य समयका एक क्षण भी दुःखमूलक क्षणभंगुर भोगोंके भोगनेमें नष्ट करना उचित नहीं है ।

श्रीगीताका प्रधान विषय ।

श्रीगीताजीमें भगवान्ने अपनी प्राप्तिके लिये मुख्य दो मार्ग बताया है । एक साख्ययोग, दूसरा कर्मयोग । उनमें—

(१) संपूर्ण पदार्थ मृगतृष्णाके जलकी भांति अथवा स्वप्नकी सृष्टिके सदृश मायामय होनेमें मात्राके कार्यरूप संपूर्ण गुण ही गुणोंमें वर्तते हैं, ऐसे समझकर मन, इन्द्रियो और शरीरद्वारा होनेवाले संपूर्ण क्रमोंमें कर्तापनके अभिमानमें रहित होना (अ० ५ श्लो० ८, ९) तथा सर्वव्यापी सच्चिदानन्दधन परमात्माके स्वरूपमें एकीभावमें निर्य म्यित रहते हुए एक सच्चिदानन्दधन वासुदेवके सिवा अन्य किमीके भी होनेपनेका भाव न रहना, यह तो साख्ययोगका साधन है ।

(२) और सब कुछ भगवान्का समझकर सिद्धि, अग्निद्धिमं नमस्तस्मात् राग्यते हुए आत्मिकी और फलकी इत्याका त्याग करके भगवत्-आज्ञानुसार केवल भगवान्के ही लिय सब क्रमोंका आचरण करना (अ० २ श्लो० १८, अ० ५, गे० १०) तथा श्रद्धा भक्तिपूर्वक मन, प्राणी और शरीरमें सब प्रकार भगवान्के शरण होकर नाम गुण आर प्रसादमयित उनके स्वरूपका निरन्तर चिन्तन करना (अ० ६ गे० १७) यह निष्काम कर्मयोगका साधन है ।

उक्त दोनों साधनोंका परिणाम एक होनेके कारण वास्तवमें अभिन्न माने गये हैं (अ०५, श्लोक ४,५), परन्तु साधनकालमें अधिकारी-भेदमें दोनोंका भेद होनेके कारण दोनों मार्ग भिन्न भिन्न बताये गये हैं। (अ० ३ श्लो० ३)। इसलिये एक पुरुष दोनों मार्गोंद्वारा एक कालमें नहीं चढ़ सकता, जैसे श्रीगङ्गाजीपर जानेके लिये दो मार्ग होने हुए भी एक मनुष्य दोनों मार्गोंद्वारा एक कालमें नहीं जा सकता। उक्त साधनोंमें कर्मयोगका साधन मन्याम आश्रममें नहीं बन सकता, क्योंकि मन्याम आश्रममें कर्मोंका स्वरूपमें भी त्याग कहा है और मन्त्रयोगका साधन सभी आश्रमोंमें बन सकता है।

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं
 विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम् ।
 लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यातुमर्हं
 वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम् ॥

अर्थ—जिसकी आकृति अतिशय शान्त है, जो शेषनागकी शय्यापर शयन किये हुए है, जिसकी नाभिमें कमल है, जो देवताओं का भी ईश्वर और संपूर्ण जगत्का आधार है, जो आकाशके सदृश सर्वत्र व्याप्त है, नीलमेघके समान जिसका वर्ण है, अतिशय सुन्दर जिसके संपूर्ण अङ्ग हैं, जो योगियोंद्वारा ध्यान करके प्राप्त किया जाता है, जो संपूर्ण लोकोका स्वामी है, जो जन्ममरणरूप भयका नाश करनेवाला है, ऐसे श्रीलक्ष्मीपति, कमलनेत्र विष्णु भगवान्‌को मैं (शिरमें) प्रणाम करता हूँ ।

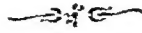
यं ब्रह्मा वरुणेन्द्ररुद्रमरुतः स्तुन्वन्ति दिव्यैः स्तवै-
 र्वेदः साङ्गपदक्रमोपनिषदैर्गायन्ति यं सामगाः ।

ध्यानावस्थिततद्गतेन मनसा पश्यन्ति यं योगिनो
 यस्यान्तं न विदुः सुरासुरगणा देवाय तस्मै नमः ॥

अर्थ—ब्रह्मा वरुण इन्द्र, रुद्र और मरुद्वरुण दिव्य स्तोत्रोंद्वारा जिसकी स्तुति करते हैं, सामवेदके गानेवाले अङ्ग, पद, क्रम और उपनिषदोंके सहित वेदोंद्वारा जिसका गायन करते हैं, योगीजन ध्यानमें स्थित तद्गत हुए मनमें जिसका दर्शन करते हैं, देवता और असुरगण (कोई भी) जिसके अन्तको नहीं जानते उस (परम पुरुष नागयण) देवके लिये मेरा नमस्कार है ।

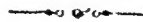
श्रीपरमात्मने नमः

श्रीमद्भगवद्गीतामाहात्म्यम्



गीताशास्त्रमिदं पुण्यं यः पठेत्प्रयतः पुमान् ।
विष्णो पदमवाप्नोति भयशोकादिवर्जितः ॥१॥
गीताव्ययनगीलस्य प्राणायामपरस्य च ।
नैव सन्ति हि पापानि पूर्वजन्मकृतानि च ॥२॥
मलनिर्मोचनं पुमा जलस्नानं दिने दिने ।
सकृद्गीताम्भसि स्नानं ससारमलनाशनम् ॥३॥
गीता सुगीता कर्तव्या किमन्यै शास्त्रविस्तरैः ।
या स्वयं पद्मनाभस्य मुखपद्माङ्घ्रिनिःसृता ॥४॥
भारतामृतसर्वस्य विष्णोर्वक्त्राङ्घ्रिनिःसृतम् ।
गीतागङ्गोदकं पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते ॥५॥
सर्वोपनिषदो गावो देव्या गोपालनन्दनः ।
पायो वन्द्य सुधीर्भोक्ता दुग्धं गीतामृतं महत् ॥६॥

एष शास्त्रं देवकीपुत्रगीत-
मेको देवो देवकीपुत्र एव ।
एषो मन्त्रस्तस्य नामानि यानि
सर्मात्येकं तस्य देवस्य सेवा ॥७॥





श्रीवर्कविहारी

ॐ श्रीपरमात्मने नमः

नारायण नमस्कृत्य नरैश्चैव नरोत्तमम् ।

देवां सरस्वता व्याम ततो जयमुदीरयेत् ॥

अथ श्रीमद्भगवद्गीता

भाषाटीकासहित

पहिला अध्याय

प्रधान विषय—१ से ११ तक दोनों सेनाओंके प्रधान प्रधान शूर-
वीरोंकी गणना और नाम रंका कथन, (१२-१९) दोनों सेनाओंकी शस्त्र-
ध्वनिगा कथन, (२०-२७) अर्जुनद्वारा सेनानिरीक्षणका प्रसन्न, (२८-४७)
मोक्षने व्याप्त हुए अर्जुनके कायरता, स्नेह और शोकयुक्त वचन ।

एतराष्ट्र उवाच

धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता युयुत्सवः ।

मामकाः पाण्डवाश्चैव किमकुर्वत संजय ॥ १ ॥

पदच्छेद

धर्मक्षेत्रे, कुरुक्षेत्रे, समवेता युयुत्सवः ।

मामकाः पाण्डवाः च, एव किम् अकुर्वत, संजय ॥ १ ॥

अन्वय

शब्दार्थ

अन्वय

शब्दार्थ

एतराष्ट्र बोला—

संजय = हे राजा

कुरुक्षेत्रे = कुरुक्षेत्रमें

धर्मक्षेत्रे = धर्मभूमि

समवेताः = इकट्ठे हुए

युयुत्सव	= युद्धकी इच्छावाले	एव*	
सामका	= मेरे	पाण्डवा	= पाण्डुके पुत्रोंने
च	= और	किम्	= क्या
		अकुर्वत	= किया

सजय उवाच

दृष्ट्वा तु पाण्डवानीकं व्यूढं दुर्योधनस्तदा ।
आचार्यमुपसंगम्य राजा वचनमब्रवीत् ॥ २ ॥

दृष्ट्वा तु पाण्डवानीकम्, व्यूढम्, दुर्योधन, तदा,
आचार्यम्, उपसंगम्य, राजा, वचनम्, अब्रवीत् ॥ २ ॥

इसपर सजय बोला—

तदा	= उस समय	दृष्ट्वा	= देखकर
राजा	= राजा	तु	= और
दुर्योधन	= दुर्योधनने	आचार्यम्	= द्रोणाचार्यके
व्यूढम्	= व्यवस्थितकरके	उपसंगम्य	= पास जाकर
			(यह)
पाण्डवा-	= { पाण्डवोंकी	वचनम्	= वचन
गम्य	= { मेनाको	अब्रवीत्	= कहा

पश्यन्ता पाण्डुपुत्राणामाचार्य महतीं चमूम् ।

व्यूढा द्रुपदपुत्रेण तव शिष्येण धीमता ॥ ३ ॥

आचार्य	= हे आचार्य	व्यूढाम्	= { व्यूहाकार खडी की हुई
तव	= आपके	पाण्डु-	} = पाण्डुपुत्रोकी
धीमता	= बुद्धिमान्	पुत्राणाम्	
शिष्येण	= शिष्य	एताम्	= इस
		महतीम्	= बड़ी भारी
		चमूम्	= सेनाको
द्रुपदपुत्रेण	= { द्रुपदपुत्र धृष्टद्युम्नद्वारा	पश्य	= देखिये

पाण्डवों के अत्र शूरा महेष्वासा भीमार्जुनसमा युधि ।
न प्रधान युयुधानो विराटश्च द्रुपदश्च महारथः ॥ ४ ॥
रथों के

अत्र, शूरा, महेष्वासा, भीमार्जुनसमा, युधि,
युयुधान, विराट, च, द्रुपद, च, महारथ ॥ ४ ॥

अत्र = इस (सेना) में (सन्ति) = है (जैसे)

महेष्वासाः = { बड़े बड़े युयुधानः = सात्यकि
धनुषवाले च = और

युधि = युद्धमें विराटः = विराट

भीमार्जुन- = { भीम और च = तथा
समा = { अर्जुनकेसमान महारथः = महारथी

शूरा = बहुतमें शूवीर द्रुपदः = राजा द्रुपद

॥] धृष्टकेतुश्चेकितानः काशिराजश्च वीर्यवान् ।

पुरजित्कुन्तिभोजश्च शैब्यश्च नरपुङ्गवः ॥ ५ ॥

धृष्टकेतु, चेकितान, काशिराज, च, वीर्यवान्,

पुरजित, कुन्तिभोज, च, शैब्य, च, नरपुङ्गव ॥ ५ ॥

च	= ओर	पुरुजित्	= पुरुजित्
वृष्टकेतु	= वृष्टकेतु	कुन्तिभोज	= कुन्तिभोज
त्रैकितान	= त्रैकितान	च	= और
च	= तथा	नरपुङ्गव	= { मनुष्योमे श्रेष्ठ
वीर्यवान्	= वीर्यवान्	शैव्य	= शैव्य
काशिराज	= काशिराज		

युधामन्युश्च विक्रान्त उत्तमौजाश्च वीर्यवान् ।

नौमद्रो द्रौपदेयाश्च सर्व एव महारथाः ॥ ६ ॥

युधामन्यु , च विक्रान्त , उत्तमौजा , च, वीर्यवान् ,

नौमद्रो द्रौपदेया , च, सर्वे, एव, महारथा ॥ ६ ॥

च	= और	च	= और
विक्रान्त	= पराक्रमी	द्रौपदेया	= { द्रौपदीके पाचो पुत्र
युधामन्यु	= युधामन्यु		(यह)
च	= तथा		
वीर्यवान्	= वीर्यवान्	सर्वे	= सर्व
उत्तमौजा	= उत्तमौजा	एव	= ही
नौमद्रो	(युधामन्यु)	महारथाः	= महारथी हे
॥ ६ ॥	(वीर्यवान्)		

अन्त उतृ विशिष्टा ये तान्निबोध द्विजोत्तम ।

नन्दनं सम नैन्यम्य मंजार्थं तान्ब्रवीमि ते ॥ ७ ॥

द्विजोत्तम = हे ब्राह्मणश्रेष्ठ	ते = आपके
अस्माकम् = हमारे पक्षमे	संज्ञार्थम् = जाननेके लिये
तु = भी	मम = मेरी
ये = जो जो	सैन्यस्य = सेनाके
विशिष्टाः = प्रधान हैं	(ये) = जो जो
तान् = उनको	नायकाः = सेनापति हैं
(आप)	तान् = उनको
निबोध = समझ लीजिये	ब्रवीमि = कहता हूँ

द्वयाधनद्वारा भवान्भीष्मश्च कर्णश्च कृपश्च समितिंजयः ।

अपना पेनाके
प्रधान प्रधान
सहायियों के
नामोंका कथन ।

अश्वत्थामा विकर्णश्च सौमदत्तिस्तथैव च ॥ ८ ॥

भवान्, भीष्म च, कर्ण , च, कृप , च, समितिंजय ,

अश्वत्थामा विकर्ण , च, सौमदत्ति , तथा, एव, च ॥ ८ ॥

एक तो म्वयम्—

भवान्	= आप	च	= तथा
च	= और	तथा	= वैसे
भीष्म	= पितामह भीष्म	एव	= ही
च	= तथा	अश्वत्थामा	= अश्वत्थामा
कर्णः	= कर्ण	विकर्णः	= विकर्ण
च	= और	च	= और
समितिंजय	= मगधमविजयी	सौमदत्तिः	= { सौमदत्तका पुत्र मृगिश्रवा
कृप	= कृपाचार्य		

अन्ये च बहवः शूरा मदर्थे त्यक्तजीविताः ।
 नानाशस्त्रप्रहरणाः सर्वे युद्धविशारदाः ॥ ६ ॥
 अन्ये च, बहवः शूरा, मदर्थे, त्यक्तजीविता,
 नानाशस्त्रप्रहरणाः, सर्वे, युद्धविशारदा ॥ ९ ॥

तथा—

अन्ये	= और	मदर्थे	= मेरे लिये
च	= भी	त्यक्त-	= { जीवनकी आजाको त्यागनेवाले
बहवः	= बहुतसे	जीविता.	
शूरा	= शूरीय	सर्वे	= सबके सब
नानाशस्त्र-	{ अनेक प्रकार- के शस्त्र अस्त्रो- मे युक्त	युद्ध-	} = युद्धमें चतुर हैं
प्रहरणाः		विशारदा	

अन्यानि तदस्माकं बलं भीष्माभिरक्षितम् ।

पर्यानि त्विदमेतेषा बलं भीष्माभिरक्षितम् ॥ १० ॥

अन्यानि तदस्माकं बलं, भीष्माभिरक्षितम्,
 पर्यानि त्विदमेतेषा बलं, भीष्माभिरक्षितम् ॥ १० ॥

भीमामि- रक्षितम्	= { भीमद्वारा रक्षित	बलम्	= सेना
एतेषाम्	= इन लोगोंकी	पर्याप्तम्	= { जीतनेमे सुगम है
इदम्	= यह		

भीष्मको रक्षा- अयनेषु च सर्वेषु यथाभागमवस्थिताः ।
के लिये द्रोणादि भीष्ममेवाभिरक्षन्तु भवन्तः सर्व एव हि ॥११॥
सूतकीरोंके प्रति
हृदाधन जो अयनेषु, च, सर्वेषु, यथाभागम्, अवस्थिता,
प्रेरणा। भीष्मम्, एव, अभिरक्षन्तु, भवन्त, सर्वे, एव, हि ॥११॥

च	= इमलिये	सर्वे	= सबके सब
सर्वेषु	= सब	एव	= ही
अयनेषु	= मोर्चोंपर	हि	= नि सन्देह
यथा- भागम्	= { अपनी अपनी जगह	भीष्मम्	= { भीष्म- पितामहकी
अवस्थिताः	= स्थित रहने हुए	एव	= ही
भवन्तः	= आपलोग	अभिरक्षन्तु	= { सब आग्ने रक्षा करें

हृदाधनवो तस्य संजनयन्हर्षं कुरुवृद्धः पितामहः ।
प्रपन्नतासे लिये मिहनादं विनद्योच्चैः शङ्खं दध्मौ प्रतापवान् ॥१२॥
नापना गर्वपर
शङ्ख बजाता। तस्य, नजनयन हर्षम्, कुरुवृद्ध, पितामह,
मिहनादम् विनद्य उच्चैः, शङ्खम्, दध्मौ, प्रतापवान् ॥१२॥

वृक्रोदरः = भीमसेनने महाशङ्खम् = महाशङ्ख

पौण्ड्रम् = पौण्ड्र नामक | दध्मौ = वजाया

युधिष्ठिर, नकुल और सहदेवद्वारा अनन्तविजयं राजा कुन्तीपुत्रो युधिष्ठिरः ।

शङ्खोंका वजाया नकुलः सहदेवश्च सुघोषमणिपुष्पकौ ॥१६॥

नाना । अनन्तविजयम्, राजा, कुन्तीपुत्र, युधिष्ठिर, नकुल, सहदेव च, सुघोषमणिपुष्पकौ ॥ १६ ॥

कुन्तीपुत्रः = कुन्तीपुत्र च = तथा

राजा = राजा

युधिष्ठिरः = युधिष्ठिरने सहदेवः = सहदेवने

अनन्त-विजयम् = { अनन्तविजय नामक शङ्ख (और) सुघोषमणि-पुष्पकौ = { सुघोष और मणिपुष्पक नामवाले शङ्ख (वजाये)

काश्यश्च परमेष्वासः शिखण्डी च महारथः ।

धृष्टद्युम्नो विराटश्च सात्यकिश्चापराजितः ॥१७॥

काश्य, च, परमेष्वास, शिखण्डी, च, महारथ,

धृष्टद्युम्न, विराट, च, सात्यकि, च, अपराजित ॥ १७ ॥

परमेष्वासः = श्रेष्ठ वनुषवाला शिखण्डी = शिखण्डी

काश्य = काशिराज च = और

च = और धृष्टद्युम्न = धृष्टद्युम्न

महाराज = महाराज | च = तथा

विराटः = राजा विराट
 च = और
 अपराजितः = अजेय
 सात्यकिः = सात्यकि

१] द्रुपदो द्रौपदेयाश्च सर्वशः पृथिवीपते ।
 सौमद्रश्च महाबाहुः शङ्खान्दध्मुः पृथक्पृथक् ॥

द्रुपद द्रौपदेया च, सर्वशः, पृथिवीपते,
 नोमद्र च महाबाहुः, शङ्खान्, दध्मुः, पृथक्, पृथक् ॥ १८ ॥

तथा-

द्रुपदः = राजा द्रुपद
 च = और
 सौमद्रः = { सुमद्रापुत्र
 अभिमन्यु
 द्रौपदेयाः = { द्रौपदीके
 पञ्चो पुत्र
 पृथिवीपते = हे राजन्
 पृथक् = अलग
 पृथक् = अलग
 च = और
 शङ्खान् = शङ्ख
 दध्मुः = बजाये
 महाबाहुः = { बली
 मुजावाला

पाण्डवनेना
 वा शङ्खान्निसे
 धृमराष्ट्रपुत्रे,
 तत्पुत्रोऽपि विना
 तोता ।

स घोषो धार्तराष्ट्राणां हृदयानि व्यदारयत् ।
 नभश्च पृथिवीं चैव तुमुलो व्यनुनादयन् ॥ १६ ॥

म घोषः धार्तराष्ट्राणाम् हृदयानि, व्यदारयत्
 नभश्च पृथिवीम् च एव तुमुलः, व्यनुनादयन् ॥ १७ ॥
 तुमुलः = भयानक
 घोष = गजदने
 च = और
 म = उग्र

नभः	= आकाश	धार्त-	= { धृतराष्ट्र-
च	= और	राष्ट्राणाम्	= { पुत्रोक्ते
पृथिवीम्	= पृथिवीको	हृदयानि	= हृदय
एव	= भी		
व्यनु-	= { शब्दायमान	व्यदास्यत्	= { विदीर्ण
नादयन्	= { करते हुए		= { कर दिये

अथ व्यवस्थितान्दृष्ट्वा धार्तराष्ट्रान्कपिध्वजः ।

प्रवृत्ते शस्त्रसंपाते धनुरुद्यम्य पाण्डवः ॥२०॥

हृषीकेशं तदा वाक्यमिदमाह महीपते ।

मेनयोरुभयोर्मध्ये रथं स्थापय मेऽच्युत ॥२१॥

। अथ. व्यवस्थितान्, दृष्ट्वा, धार्तराष्ट्रान्, कपिध्वज, प्राप्ते, शस्त्रसंपाते, धनु, उद्यम्य, पाण्डव ॥ २० ॥
हृषीकेशम्, तदा, वाक्यम्, इदम्, आह, महीपते,
मेनयो, उभयो, मये, रथम्, स्थापय, मे, अच्युत ॥ २१ ॥

महीपते	= हे राजन्	धार्तराष्ट्रान्	= धृतराष्ट्रपुत्रोको
अथ	= उमके उपरान्त	दृष्ट्वा	= देखकर
कपिध्वज	= कपिध्वज	तदा	= उम
पाण्डव	= अर्जुनने	शस्त्रसंपाते	= { शस्त्र चलनेकी
व्यवस्थि-	= मटे हुए	प्रवृत्ते	= { तैयारीके
तान्			= { समय

अध्याय १

धनुः	= वनुष	अच्युत	= हे अच्युत
उद्यम्य	= उठाकर	मे	= मेरे
हृषीकेशम्	= { हृषीकेश श्रीकृष्ण महाराजसे	स्थम्	= स्थको
इदम्	= यह	उभयोः	= दोनों
वाक्यम्	= वचन	सेनयोः	= सेनाओंके
आह	= कहा	मध्ये	= बीचमें
		स्थापय	= खड़ा करिये

दुर्योधनजी यावदेतान्निरीक्षेऽहं योद्धुकामानवस्थितान् ।
 मेनामें धाये
 हुए शूराओंको
 देखनेको लिये
 खलुनया न्देच्छा
 प्रगट कराया ।
 कैर्मया सह योद्धव्यमस्मिन्नरणसमुद्यमे ॥२२॥
 यावत्, एतान्, निरीक्षे, अहम्, योद्धुकामान्, अवस्थितान्,
 कैं, मया, मह, योद्धव्यम्, अस्मिन्, रणसमुद्यमे ॥२२॥

यावत्	= जवतक	अस्मिन्	= इस
अहम्	= मे	रणसमुद्यमे	= { युद्धरूप व्यापारमें
एतान्	= इन	मया	= मुझे
अवस्थितान्	= स्थित हुए	कैं	= कित कितके
योद्धुकामान्	= { युद्धकी कामना वालोंको	मह	= साथ
निरीक्षे	= { अच्छी प्रवार देख द (कि)	योद्धव्यम्	= { युद्ध करना योग्य है

योत्स्यमानानवेक्षेऽहं य एतेऽत्र समागताः ।

धार्तराष्ट्रस्य दुर्बुद्धेर्युद्धे प्रियचिकीर्षवः ॥२३॥

योत्स्यमानान्, अवेक्षे, अहम्, ये, एते, अत्र, समागताः,

धार्तराष्ट्रस्य, दुर्बुद्धे, युद्धे, प्रियचिकीर्षवः ॥२३॥

और-

दुर्बुद्धे	= दुर्बुद्धि	अत्र	= इस सेनामें
धार्तराष्ट्रस्य	= दुर्योधनका	समागताः	= आये हैं
युद्धे	= युद्धमें	(तान्)	= उन
प्रिय- चिकीर्षव	= { कल्याण चाहनेवाले	योत्स्य- मानान्	= { युद्ध करने- वालोंको
ये	= जो जो	अहम्	= मैं
एते	= ये राजालोग	अवेक्षे	= देखूंगा

स जय उवाच

एवमुक्त्वा हृषीकेशो गुडाकेशेन भारत ।

नेनयोरुभयोर्मध्ये स्थापयित्वा रथोत्तमम् ॥

भीमद्रोणप्रमुखतः सर्वेषां च महीक्षिताम् ।

उवाच पार्थ पश्यैतान्समवेतान्कुरूनिति ॥

उक्तं उक्तं हृषीकेश, गुडाकेशेन, भारत,

नेनये उभयो, मये, स्थापयित्वा, रथोत्तमम् ॥ २४ ॥

भीष्मद्रोणप्रमुखतः, सर्वेषाम्, च, महीक्षिताम्,
उवाच, पार्थ, पश्य, एतान्, समवेतान्, कुरुन्, इति ॥ २५ ॥

मजय बोला-

भारत	= हे वृत्तगाष्ट	च	= और
गुडाकेशेन	= अर्जुनद्वारा	सर्वेषाम्	= सम्पूर्ण
एवम्	= इस प्रकार	महीक्षिताम्	= { राजाओंके सामने
उक्तः	= कहे हुए	रथोत्तमम्	= उत्तम रथको
हृषीकेशः	= { महाराज श्रीकृष्ण- चन्द्रने	स्थापयित्वा	= खड़ा करके
उभयोः	= दोनों	इति	= ऐसे
सेनयोः	= सेनाओंके	उवाच	= कहा कि
मध्ये	= बीचमें	पार्थ	= हे पार्थ
भीष्मद्रोण- प्रमुखतः	= { भीष्म और द्रोणाचार्यके सामने	एतान्	= इन
		समवेतान्	= इकट्ठे हुए
		कुरुन्	= कोंग्वोंको
		पश्य	= देख

गजुनका
नेना नेनामे
गिम् एण दान्ध
पावो दखना ।

तत्रापश्यत्स्थितान् पार्थः पितृन्थ पितामहान् ।
आचार्यान्मातुलान्भ्रातृन्पुत्रान्पौत्रान्सखींस्तथा ॥
श्वशुरान्सुहृदश्चैव सेनयोरुभयोरपि ।

तत्र, अपश्यत्, स्थितान्, पार्थ, पितृन्, अथ, पितामहान्,
आचार्यान्, मातुलान्, भ्रातृन्, पुत्रान्, पौत्रान्, सखीन्,
तथा श्वशुरान्, सुहृदः, च, एव, सेनयोः, उभयोः, अपि ।

अथ	= उसके उपरान्त	मातुलान्	= मामोको
पार्थः	= पृथापुत्र अर्जुनने	भ्रातृन्	= भाइयोको
तत्र	= उन	पुत्रान्	= पुत्रोको
उभयोः	= दोनो	पौत्रान्	= पौत्रोको
अपि	= ही	तथा	= तथा
सेनयोः	= सेनाओंमे	सखीन्	= मित्रोको
स्थितान्	= स्थित हुए	श्वशुरान्	= ससुरोको
पितृन्	= { पिताके भाइयोको	च	= और
पितामहान्	= पितामहोको	सुहृदः	= सुहृदोको
आचार्यान्	= आचार्योंको	एव	= भी
		अपश्यत्	= देखा

तान्समीध्य स कौन्तेयः सर्वान्वन्धूनवस्थितान् ॥

कृपया परयाविष्टो विषीदन्निदमब्रवीत् ।

—त. सर्वा य, स, कौन्तेय, सर्वान्, वन्धून्, अवस्थितान् ॥

कृपया परया, आविष्ट, विषीदन्, इदम्, अब्रवीत् ।

इम प्रकार—

तान्	= उन	स	= वह
अवस्थितान्	= गटे हुए	परया	= अत्यन्त
वन्धून्	= वन्धु	कृपया	= करुणामे
विषीदन्	= वन्धुओं को	आविष्टः	= युक्त हुआ
निदमम्	= निदम	कौन्तेय	= कुन्तीपुत्र अर्जुन

विषीदन्=शोक करता हुआ

इदम् = यह

अत्रवीत्=बोला

भर्जुन उवाच

स्वजनोको दृष्ट्वेमं स्वजनं कृष्ण युयुत्सुं समुपस्थितम् ॥२८॥

युद्धके भिये

तैयार देखकर

भर्जुनके शरीर

और मनमें वाच-

रता और बोला

वर्जित चिह्नोके

होनेवा वदन ।

सीदन्ति मम गात्राणि मुखं च परिशुष्यति ।

वेपथुश्च शरीरे मे रोमहर्षश्च जायते ॥२९॥

दृष्ट्वा, इदम्, स्वजनम्, कृष्ण, युयुत्सुम्, समुपस्थितम् ॥२८॥

सीदन्ति, मम, गात्राणि, मुखम्, च, परिशुष्यति,

वेपथु, च, शरीरे, मे, रोमहर्ष, च, जायते ॥२९॥

कृष्ण = हे कृष्ण

इदम् = इस

युयुत्सुम् = { युद्धकी
डच्छावाले

समुपस्थितम् = खडे हुए

स्वजनम् = { स्वजन-
समुदायको

दृष्ट्वा = देखकर

मम = मेरे

गात्राणि = अङ्ग

सीदन्ति = { शिथिल
हुए जाते हैं

च = और

मुखम् = मुख (भी)

परिशुष्यति = सूखा जाता है

च = और

मे = मेरे

शरीरे = शरीरमे

वेपथुः = कम्प

च = तथा

रोमहर्षः = रोमाञ्च

जायते = होता है

[१] गाण्डीवं संसते हस्तात्त्वक्चैव परिदह्यते ।

न च शक्नोम्यवस्थातु भ्रमतीव च मे मनः ॥३०॥

गाण्डीवम्, समते, हस्तात्, त्वक्, च, एव, परिदह्यते,

न च शक्नोमि अवस्थानुम्, भ्रमति, इव, च, मे, मनः ॥३०॥

तथा—

हस्तात्	= हाथसे	मे	= मेरा
गाण्डीवम्	= गाण्डीव वस्तु	मनः	= मन
संसते	= गिरता है	भ्रमति इव	= { भ्रमति सा हो रहा है
च	= और	(अतः)	= इसलिए (मैं)
त्वक्	= त्वचा	अवस्थातुम्	= खड़ा रहनेको
एव	= भी	च	= भी
परिदह्यते	= { बहुत जलती है	न शक्नोमि	= समर्थ नहीं हूँ
न	= तथा		

निमिच्चानि च पश्यामि विपरीतानि केशव ।

न च श्रेयोऽनुपश्यामि हत्वा स्वजनमाहवे ॥३१॥

निमिच्चानि च पश्यामि, विपरीतानि, केशव,

न च श्रेयः अनुपश्यामि हत्वा, स्वजनम्, आहवे ॥३१॥

और—

केशव	= हे केशव	च	= भी
निमिच्चानि	= २. निमि	विपरीतानि	= विपरीत (ही)

पश्यामि	= देखता हूँ (तथा)	श्रेयः	= कल्याण
आहवे	= युद्धमे	च	= भी
स्वजनम्	= अपने कुलको	न	= नहीं
हत्वा	= मारकर	अनुपश्यामि	= देखता

स्वजनवधमे न काङ्क्षे विजयं कृष्ण न च राज्यं सुखानि च ।
 किं नो राज्येन गोविन्द किं भोगैर्जीवितेन वा ॥
 भोग और सुख
 आत्मीको धर्तुन
 का न चाहना ।

और—

कृष्ण	= हे कृष्ण (मैं)	(काङ्क्षे)	= चाहता
विजयम्	= विजयको	गोविन्द	= हे गोविन्द
न	= नहीं	नः	= हमे
काङ्क्षे	= चाहता	राज्येन	= राज्यसे
च	= और	किम्	= क्या (प्रयोजन है)
राज्यम्	= राज्य	वा	= अथवा
च	= तथा	भोगैः	= भोगोंसे (और)
सुखानि	= सुखोको (भी)	जीवितेन	= जीवने (भी)
न	= नहीं	किम्	= क्या (प्रयोजन है)

[„] येषामर्थे काङ्क्षितं नो राज्यं भोगाः सुखानि च ।

त इमेऽवस्थिता युद्धे प्राणांस्त्यक्त्वा धनानि च ॥

येषाम्, अर्थे, काङ्क्षितम्, न, राज्यम्, भोगा, सुखानि, च,
 ते, इमे, अवस्थिता, युद्धे, प्राणान्, त्यक्त्वा, धनानि, च ॥३३॥

क्योंकि—

नः	= हमें	इमे	= यह सब
येषाम्	= जिनके	धनानि	= धन
अर्थे	= लिये	च	= और
राज्यम्	= राज्य	प्राणान्	= { जीवन-
भोगाः	= भोग		(कीआशा)को
च	= और	त्यक्त्वा	= त्यागकर
सुखानि	= सुखादिक	युद्धे	= युद्धमें
काङ्क्षितम्	= इच्छित हैं	अवस्थिताः	= खडे हैं
ते	= वे (ही)		

अर्जुनका त्रिलोकीके राज्य के लिये भी आचार्याः पितरः पुत्रास्तथैव च पितामहाः ।

आचार्यादि स्व-जनोको न मारनेकी इच्छा प्रगट करना

मातुलाः श्वशुराः पौत्राः श्यालाः संबन्धिनस्तथा ॥
आचार्या , पितर , पुत्रा , तथा , एव , च , पितामहा ,
मातुला , श्वशुरा , पौत्रा , श्याला , संबन्धिन , तथा ॥३४॥

जो कि—

आचार्याः	= गुरुजन	मातुलाः	= मामा
पितरः	= ताऊ चाचे	श्वशुराः	= ससुर
पुत्राः	= लडके	पौत्राः	= पोते
च	= और	श्यालाः	= साले
तथा	= वैसे	तथा	= तथा
एव	= ही		(और भी)
पितामहाः	= दादा	संबन्धिनः	= सम्बन्धी लोग है

[„] एतान्न हन्तुमिच्छामि घ्नतोऽपि मधुसूदन ।

अपि त्रैलोक्यराज्यस्य हेतोः किं नु महीकृते ॥

एतान्, न, हन्तुम्, इच्छामि, घ्नत, अपि, मधुसूदन,

अपि, त्रैलोक्यराज्यस्य, हेतो, किम्, नु, महीकृते ॥३५॥

इसलिये-

मधुसूदन	= हे मधुसूदन (मुझे)	एतान्	= इन सबको
घ्नतः	= मारनेपर	हन्तुम्	= मारना
अपि	= भी (अथवा)	न	= नहीं
त्रैलोक्य-	= { तीन लोकके राज्यके	इच्छामि	= चाहता (फिर)
राज्यस्य		महीकृते	= { पृथिवीके लिये (तो)
हेतोः	= लिये	नु किम्	= कहना ही क्या है
अपि	= भी (मैं)		

अर्जुनका निहत्य धार्तराष्ट्रान्नः का प्रीतिः स्याज्जनार्दन ।

३५ न भगवतायी

वापुर्वोको भी

मग्नमे पाप

समयना ।

पापमेवाश्रयेदस्मान् हत्वैतानाततायिनः ॥३६॥

पाप निहत्य, धार्तराष्ट्रान्, न, का, प्रीति, स्यात्, जनार्दन,

पापम्, एव, आश्रयेत्, अस्मान्, हत्वा, एतान्, आततायिन ॥

जनार्दन	= हे जनार्दन	प्रीतिः	= प्रसन्नता
धार्तराष्ट्रान्	= { दृतराष्ट्रके पुत्रोंको	स्यात्	= होगी
निहत्य	= मारकर (भी)	एतान्	= इन
नः	= हमे	आततायिनः	= आततायियोंको
का	= क्या	हत्वा	= मारकर (तो)

अस्मान् = हमें

पापम् = पाप

एव = ही

आश्रयेत् = लगेगा

स्वजनाको मारनेकी योग्य-
ताना निरूपण । तस्मान्नाहं वयं हन्तुं धार्तराष्ट्रान्स्वबान्धवान् ।
स्वजनं हि कथं हत्वा सुखिनः स्याम माधव ॥

तस्मात्, न, अहं, वयम्, हन्तुम्, धार्तराष्ट्रान्, स्वबान्धवान्,
स्वजनम्, हि, कथम्, हत्वा, सुखिनः, स्याम, माधव ॥३७॥

तस्मात् = इससे

माधव = हे माधव

स्वबान्धवान् = अपने बान्धव

धार्तराष्ट्रान् = { धृतराष्ट्रके
पुत्रोंको

हन्तुम् = मारनेके लिये

वयम् = हम

न अहः = योग्य नहीं है

हि = क्योंकि

स्वजनम् = अपने कुटुम्बको

हत्वा = मारकर (हम)

कथम् = कैसे

सुखिनः = सुखी

स्याम = होंगे

लोभके कारण
दुःखादि की

कुलनाशक काम
प्रवृत्तिदेखकर भी

अजुनका अपने

लिये उममे

निवृत्त होनेसे

योग्य समझना ।

यद्यप्येते न पश्यन्ति लोभोपहतचेतसः ।

कुलक्षयकृतं दोषं मित्रद्रोहे च पातकम् ॥३८॥

यद्यपि, एते, न, पश्यन्ति, लोभोपहतचेतसः,

कुलक्षयकृतम्, दोषम्, मित्रद्रोहे, च, पातकम् ॥३८॥

यद्यपि = यद्यपि

लोभोपहत-

चेतम = { लोभमे
भ्रष्टचित्त हुए

एते = यह लोग

कुलक्षयकृतम् = { कुलके
नाशक

दोषम्	= दोषको	पातकम्	= पापको
च	= और	न	= नहीं
मित्रद्रोहे	= { मित्रोंके साथ विरोध करनेमे	पश्यन्ति	= देखते हैं

[,] कथं न ज्ञेयमस्माभिः पापादस्मान्निवर्तितुम् ।

कुलक्षयकृतं दोषं प्रपश्यद्विर्जनार्दन ॥३६॥

कथम्, न, ज्ञेयम्, अस्माभिः, पापात्, अस्मात्, निवर्तितुम्,
कुलक्षयकृतम्, दोषम्, प्रपश्यद्विः, जनार्दन ॥३९॥

परन्तु—

जनार्दन	= हे जनार्दन	अस्मात्	= हम
कुलक्षयकृतम्	= { कुलके नाश करनेमे होने हुए	पापात्	= पापमे
दोषम्	= दोषको	निवर्तितुम्	= हटानेके लिये
प्रपश्यद्विः	= जाननेवाले	कथम्	= क्यों
अस्माभिः	= हमलोगोंको	न	= नहीं
		ज्ञेयम्	= { विचार करना चाहिये

कुलक्षये प्रणश्यन्ति कुलधर्माः सनातनाः ।

कुलका नागने

धर्मका हानि और

पापका वृद्धि ।

धर्मे नष्टे कुलं कृत्स्नमधर्माऽभिभवत्युत ॥४०॥

कुलक्षयः, प्रणश्यन्ति, कुलधर्माः, सनातना

धर्मे, नष्टे कुलम्, कृत्स्नम्, अधर्माः, अभिभवति, उत ॥४०॥

अर्थोक्ति-

कुलक्षये	= { कुलके नाश होनेसे	कृत्स्नम्	= सपूर्ण
सनातनाः	= सनातन	कुलम्	= कुलको
कुलधर्माः	= कुलधर्म	अधर्मः	= पाप
प्रणश्यन्ति	= नष्ट हो जाते हैं	उत	= भी
धर्मे	= धर्मके		
नष्टे	= नाश होनेसे	अभिभवति	= { बहुत दबा लेता है

पापकी वृद्धि-
से वर्णमकरताकी
उत्पत्ति ।

अधर्माभिभवात्कृष्ण प्रदुष्यन्ति कुलस्त्रियः।

स्त्रीषु दुष्टासु वाष्ण्येय जायते वर्णसंकरः ॥४१॥

अधर्माभिभवात्, कृष्ण, प्रदुष्यन्ति, कुलस्त्रिय,
स्त्रीषु, दुष्टासु, वाष्ण्येय, जायते, वर्णसंकर ॥४१॥

तथा-

कृष्ण	= हे कृष्ण		(और)
अधर्मा-	= { पापके अधिक	वाष्ण्येय	= हे वाष्ण्येय
भिभवात्	= { बढ़ जानेसे	स्त्रीषु	= स्त्रियोंके
कुलस्त्रिय	= कुलकी स्त्रियाँ	दुष्टासु	= दूषित होनेपर
प्रदुष्यन्ति	= { दूषित हो जाती है	वर्णसंकरः	= वर्णसंकर
		जायते	= उत्पन्न होता है

वर्णमकरता- संकरो नरकायैव कुलघ्नानां कुलस्य च ।

से पितरों को
नरककी प्राप्ति ।

पतन्ति पितरो ह्येषां लुप्तपिण्डोदकक्रियाः ॥४२॥

मकर, नरकाय, एव, कुलघ्नानाम्, कुलस्य, च,
पतन्ति, पितर, हि, एषाम्, लुप्तपिण्डोदकक्रिया ॥४२॥

और वह-

संकर = वर्णमकर
 कुलघानाम् = कुलप्रानियोको
 च = और
 लुप्तपिण्डो-
 दकक्रिया = { लोप हुई पिण्ड
 और जलकी
 क्रियावाले

कुलस्य = कुलको
 नरकाय = { नरकमे ले
 जानेके लिये
 एव = ही (होता है)
 एषाम् = इनके
 पितरः = पितरलोग
 हि = भी
 पतन्ति = गिर जाने हैं

वर्णमकर- दोषैरेतैः कुलघानां वर्णमंकरकारकैः ।

कारक जोषोने

जातिधर्म और

कुलधर्मा नामा दोष

एत, कुलघानाम्, वर्णमंकरकारकै,

उत्पाद्यन्ते, जातिधर्मा कुलधर्मा, च शाश्वता ॥४३॥

और-

एतैः = इन
 वर्णसुधार- } = वर्णमंकरकारक
 कारक }
 दोष = जोषोने
 कुलघानाम् = कुलप्रानियोको
 शाश्वता = अनानन
 कुलधर्मा = कुलधर्म
 च = और
 जातिधर्मा = जातिधर्म
 उत्पाद्यन्ते = नष्ट हो जाते हैं

कुलधर्मके

उत्पन्नकुलधर्माणां मनुष्याणां जनार्दन ।

जातिधर्मके नरके

नरकेऽनियतं वासो भवतीत्यनुशुश्रुम् ॥

प्राप्ति ।

उत्पन्नकुलधर्माणां मनुष्याणां जनार्दन,

नरके अनियतम् वासो भवति इति, अनुशुश्रुम् ॥४४॥

तथा-

जनार्दन	= हे जनार्दन	नरके	= नरकमे
उत्सन्नकुल-	= { नष्ट हुए	वासः	= वास
धर्माणाम्	= { कुलधर्मवाले	भवति	= होता है
मनुष्याणाम्	= मनुष्योंका	इति	= ऐसा
अनियतम्	= { अनन्त		(हमने)
	= { कालनक	अनुशुश्रुम्	= सुना है

राज्यके लोभ से स्वजनोंको मारनेमें पाप समझकर अर्जुन-अहो, वत, महत्पापम्, कर्तुम्, व्यवसिता, वयम्, का पश्चात्ताप करना । यद्राज्यसुखलोभेन हन्तुं स्वजनमुद्यताः ॥४५॥

अहो	= अहो	व्यवसिताः	= तैयार हुए हैं
वत	= शोक है (कि)	यत्	= जो कि
वयम्	= { हमलोग (बुद्धि-मान् होकर भी)	राज्यसुख-लोभेन	= { राज्य और सुखके लोभसे
महत्पापम्	= महान् पाप	स्वजनम्	= अपने कुलको
कर्तुम्	= करनेको	हन्तुम्	= मारनेके लिये
		उद्यताः	= उद्यत हुए हैं

बिना सामना यदि मामप्रतीकारमशस्त्रं शस्त्रपाणयः ।
 किये कौरवोंद्वारा धार्तराष्ट्रा रणे हन्युस्तन्मे क्षेमतरं भवेत् ॥४६॥
 मारा जनेमें यदि, माम्, अप्रतीकारम्, अशस्त्रम्, शस्त्रपाणयः,
 हन्युस्तन्मे धार्तराष्ट्रा, रणे, हन्यु, तत्, मे, क्षेमतरम्, भवेत् ॥ ४६ ॥

यदि	= यदि	रणे	= रणमे
माम्	= मुञ्च	हन्त्युः	= मारे (तो)
अशस्त्रम्	= शस्त्ररहित	तत्	= वह (मारना भी)
अप्रतीकारम्	= { न सामना करनेवालेको	मे	= मेरे लिये
जस्त्रपाणयः	= जस्त्रधारी	क्षेमतरम्	= { अति कल्याण- कारक
धार्तराष्ट्राः	= धृतराष्ट्रके पुत्र	भवेत्	= होगा

सजय उवाच

शोकमुक्तः एवमुक्त्वार्जुनः मंख्ये रथोपस्थ उपाविशत् ।

विरुज्य सशरं चापं शोकसंविग्नमानसः ॥४७॥

एवम्, उक्त्वा, अर्जुन, मंख्ये, रथोपस्थे, उपाविशत्,
विरुज्य, सशरम्, चापम्, शोकसंविग्नमानसः ॥४७॥

सजय बोला कि-

मंख्ये	= रणभूमिमे	सशरम्	= वाणरहित
शोकसंविग्न-	= { शोकसे उद्विग्न	चापम्	= वस्तुको
मानस	= { मनवाला	विरुज्य	= त्यागकर
अर्जुन	= अर्जुन	रथोपस्थे	= { रथके पिछ्छे
एवम्	= इस प्रकार		= भागमे
उक्त्वा	= कहकर	उपाविशत्	= बैठ गया

ॐ तमसि श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मसूत्राचार्य
योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादेऽर्जुनविमोक्षयोगे

नाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

एतं ॐ तन्नत हरि ॐ तन्नत हरि ॐ तन्नत

ॐ श्रीपरमात्मने नमः

अथ द्वितीयोऽध्यायः

प्रमाणविषय—१ से १० तक अर्जुनकी कायरताके विषयमें श्रीकृष्णार्जुनका
संवाद । (११-३०) माख्ययोगका विषय । (३१-३८) श्रावणर्मके अनु-
सार युद्ध करनेकी आवश्यकताका निरूपण । (३९-५३) निष्काम कर्म-
योगका विषय । (५४-७०) स्थिरबुद्धि पुरुषके लक्षण और उसकी महिमा ।

सजय उवाच

सजय द्वारा अर्जुनकी काय-
रताका वर्णन । तं तथा कृपयाविष्टमश्रुपूर्णाकुलेक्षणम् ।
विषीदन्तमिदं वाक्यमुवाच मधुसूदनः ॥ १ ॥

तम्, तथा, कृपया, आविष्टम्, अश्रुपूर्णाकुलेक्षणम्,
विषीदन्तम्, इदम्, वाक्यम्, उवाच, मधुसूदन ॥ १ ॥

सजय बोला कि—

तथा	= पूर्वोक्त प्रकारसे	तम्	= { उस (अर्जुन)
कृपया	= करुणाकरके		= { के प्रति
आविष्टम्	= व्याप्त (और)	मधुसूदन	= { भगवान्
अश्रुपूर्णा- कुलेक्षणम्	= { आमुओमे पूर्ण (तथा) व्याकुल नेत्रोवाले	इदम्	= यह
		वाक्यम्	= वचन
विषीदन्तम्	= शोकयुक्त	उवाच	= कहा

पद्मसुन्दरार्जुन मरुतं गन्धोपपन्नं उपाविशत् । विष्टुज्य मशर चाप शोरुमविशमानम् ॥



हेतुय मा स गम पार्थ नैतस्त्वयुपपद्यते । धुङ् हृदयदैर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परंतप ॥

श्रीभगवानुवाच

अर्जुन के कृतस्त्वा कश्मलमिदं विषमे समुपस्थितम् ।
 मोहयुक्तं त्वं । अनार्यजुष्टमस्वर्ग्यमकीर्तिकरमर्जुन ॥ २ ॥
 भगवन्कीर्त्तिम् । कृतं, त्वा, कश्मलम्, इदम्, विषमे, समुपस्थितम्,
 अनार्यजुष्टम्, अस्वर्ग्यम्, अकीर्तिकरम्, अर्जुन, ॥२॥

अर्जुन = हे अर्जुन (यह)
 त्वा = तुमको (इम)
 विषमे = विषमस्थितमे अनार्यजुष्टम् = { न तो श्रेष्ठ
 पुरुषोत्तमे
 आचरण
 किया गया है
 इदम् = यह
 कश्मलम् = अज्ञान
 कृत = किया हेतुमे अस्वर्ग्यम् = { न स्वर्गको
 देनेवाला है
 समुपस्थितम् = प्राप्त हुआ
 (यतः) = क्योंकि अकीर्तिकरम् = { न कीर्तिको
 करनेवाला है

वाक्य-भावः । क्लेशं मा स्म गमः पार्थ नैतत्त्वय्युपपद्यते ।
 त्वां वदंशुः । क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परंतप ॥३॥
 अर्जुन प्रसन्नः । मा स्म गमः पार्थ न एतत् त्वयि उपपद्यते
 भगवां वीर्यवान् । क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वा उत्तिष्ठ परंतप ॥३॥
 आदि ।

इमल्लिखे-

पार्थ = हे अर्जुन मा स्म गमः = मत प्राप्त हो
 क्लेशम् = गुरुमयताका एतत् = यह

त्वयि	= तेरेमे	हृदय-	= { हृदयकी
न उपपद्यते	= योग्य नहीं है	दौर्बल्यम्	= { दुर्बलताको
परंतप	= हे परतप	त्यक्त्वा	= त्यागकर
क्षुद्रम्	= तुच्छ	उत्तिष्ठ	= { युद्धके लिये
			= { खड़ा हो

अर्जुन उवाच

अर्जुन का भीष्मादिके साथ युद्ध न करनेकी इच्छा प्रगट करना । कथं भीष्ममहं संख्ये द्रोणं च मधुसूदन ।
इषुभिः प्रति योत्स्यामि पूजार्हावरिसूदन ॥४॥
इच्छा प्रगट कथम्, भीष्मम्, अहम्, संख्ये, द्रोणम्, च, मधुसूदन,
करना । इषुभिः, प्रति, योत्स्यामि, पूजार्हा, अरिसूदन ॥ ४ ॥

तत्र अर्जुन बोला कि-

मधुसूदन	= हे मधुसूदन	कथम्	= किस प्रकार
अहम्	= मैं	इषुभिः	= बाणोंकरके
संख्ये	= रणभूमिमें	योत्स्यामि	= युद्ध करूंगा
भीष्मम्	= भीष्मपितामह	(यतः)	= क्योंकि
च	= और	अरिसूदन	= हे अरिसूदन
द्रोणम्	= द्रोणाचार्यके	(तौ)	= वे दोनों (ही)
प्रति	= प्रति	पूजार्हा	= पूजनीय है

गुरून् हत्वा हि महानुभावान्
श्रेयो भोक्तुं भैक्ष्यमपीह लोके ।

हत्वार्थकामास्तु गुरुनिहैव
भुञ्जीय भोगान् रुधिरप्रदिग्धान् ॥५॥

गुरुन्, अहत्वा, हि महानुभावान्, श्रेय, भोक्तुम्,
भैक्ष्यम्, अपि, इह, लोके, हत्वा, अर्थकामान्, तु, गुरुन्,
इह, एव, भुञ्जीय, भोगान्, रुधिरप्रदिग्धान् ॥ ५ ॥

इसलिये इन-

महानु- भावान्	} = महानुभाव	गुरुन्	= गुरुजनोको
गुरुन्	= गुरुजनोको	हत्वा	= मारकर
अहत्वा	= न मारकर	(अपि)	= भी
इह	= इस	इह	= इस लोकमें
लोके	= लोकमें	रुधिरप्रदिग्धान्	= { रुधिग्मे सने हुए
भैक्ष्यम्	= भिक्षाका अन्न	अर्थकामान्	= { अर्थ और कामरूप
अपि	= भी	भोगान्	= भोगोंको
भोक्तुम्	= भोगना	एव	= ही
श्रेयः	= कल्याणकारक (नमस्सता इ)	तु	= तो
हि	= क्योंकि	भुञ्जीय	= भोगूँगा

८ पने व ' दने
विधुग्मे व ' तुन
तो रन्नाय होता।

न चैतद्विद्वाः कतरन्नो गरीयो
यद्वा जयेम यदि वा नो जयेयुः ।
यानेव हत्वा न जिजीविषाम-
रतेऽवस्थिताः प्रमुखे धार्तराष्ट्राः ॥ ६ ॥

न, च, एतत्, विद्म कतरत्, न, गरीय, यद्वा, जयेम,
यदि, वा, न, जयेयु, यान्, एव, हत्वा, न, जिजीविषाम,
ते, अवस्थिता, प्रमुखे, धार्तराष्ट्रा ॥ ६ ॥

और हमलोग—

एतत्	= यह	जयेयुः	= वे जीतेगे
च	= भी		(और)
न	= नहीं	यान्	= जिनको
विद्मः	= जानते (कि)	हत्वा	= मारकर (हम)
न	= हमारे लिये	न	= { जीना भी
कतरत्	= क्या (करना)	जिजीविषामः	= { नहीं चाहते
गरीयः	= श्रेष्ठ है	ते	= वे
यद्वा	= { अथवा (यह भी	एव	= ही
	= { नहीं जानते कि)	धार्तराष्ट्रा.	= { धृतराष्ट्रके
जयेम	= हम जीतेगे		= { पुत्र
यदि वा	= या	प्रमुखे	= हमारे सामने
न	= हमको	अवस्थिता.	= खड़े हैं

कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः

पृच्छामि त्वां धर्मममूढचेताः ।

यच्छ्रेयः म्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे

शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम् ॥७॥

कार्पण्यदोषोपहतस्वभाव , पृच्छामि, त्वाम्, धर्मसमृद्धचेता ,
यत्, श्रेय , स्यात्, निश्चिन्तम्, ब्रूहि, तत्, मे, शिष्य , ते,
अहम्, ज्ञात्रि, माम्, त्वाम्, प्रपन्नम् ॥ ७ ॥

हमलिये—

कार्पण्य- दोषोपहत- स्वभावः	= { कार्पण्यरूप दोषकारके उपहत दृष्ट स्वभावबाला (ओर)	श्रेयः	= { कल्याणकारक साधन
		स्यात्	= हो
		तत्	= वह
		मे	= मेरे लिये
धर्म- समृद्धचेताः	= { धर्मके विषयमें मोहितचित्त हूआ (में)	ब्रूहि	= कहियं (क्योंकि)
		अहम्	= मैं
		ते	= आपका
त्वाम्	= आपको	शिष्यः	= शिष्य हूँ (हमलिये)
पृच्छामि	= पूछता हूँ	त्वाम्	= आपके
यत्	= जो (कुछ)	प्रपन्नम्	= शरण दृष्ट
निश्चिन्तम्	= { निश्चय किया हूआ	माम्	= मेरेको
		ज्ञात्रि	= शिक्षा दीजिये

न हि प्रपश्यामि मयापनुद्याद-

यच्छोकमुच्छोषणमिन्द्रियाणाम् ।

अवाप्य भूमावमपलमृद्धं

रात्र्यं सुराणामपि चाधिपत्यम् ॥ ८ ॥

न, हि, प्रपश्यामि, मम, अपनुद्यात्, यत्, शोकम्,
 उच्छोषणम्, इन्द्रियाणाम्, अवाप्य, भूमौ, असपत्नम्,
 ऋद्धम्, राज्यम्, सुराणाम्, अपि, च, आविपत्यम् ॥ ८ ॥



हि	= क्योंकि	(तत्)	= { उस (उपाय)
भूमौ	= भूमिमे		को
असपत्नम्	= निष्कण्टक	न	= नहीं
ऋद्धम्	= वनधान्यमपन्न	प्रपश्यामि	= देखता हूँ
राज्यम्	= राज्यको	यत्	= जो कि
च	= और	मम	= मेरी
सुराणाम्	= देवताओंके	इन्द्रियाणाम्	= इन्द्रियोके
आधि- पत्यम् }	= स्वामीपनेको	उच्छोषणम्	= सुखानेवाले
अवाप्य	= प्राप्त होकर	शोकम्	= शोकको
अपि	= भी (मैं)	अपनुद्यात्	= दूर कर सके

संग्रह उपाच

एवमुक्त्वा हृषीकेशं गुडाकेशः परंतप ।

न योत्स्य इति गोविन्दमुक्त्वा तूष्णीं बभूव ह ॥

पुनः, उक्त्वा, हृषीकेशम्, गुडाकेश, परंतप,

न योत्स्ये, इति गोविन्दम्, उक्त्वा, तूष्णीम्, बभूव, ह ॥९॥

मजय बोला-

परंतप	= हे राजन्	गोविन्दम्	= { श्रीगोविन्द भगवान्को
गुडाकेश	= { निद्राको जीतनेवाला अर्जुन	न योत्स्ये	= { युद्ध नहीं करूंगा
हृषीकेशम्	= { अन्तर्यामी श्रीकृष्ण महा- राजके प्रति	इति	= ऐसे
एवम्	= इस प्रकार	ह	= स्पष्ट
उक्त्वा	= कहकर (फिर)	उक्त्वा	= कहकर
		तूष्णीम्	= चुप
		बभूव	= हो गया

॥ तमुवाच हृषीकेशः प्रहसन्निव भारत ।

मेनयोरुभयोर्मध्ये विषीदन्तमिदं वचः ॥१०॥

तप उवाच, हृषीकेश, प्रहसन्, इव, भारत,

मेनयो . उभयो , म ये विषीदन्तम् इदम्, वच ॥१०॥

उत्तरे उपरान्त-

भारत	= { ते भगवन्शी भृतराष्ट्र	तम्	= उन
हृषीकेश	= { अन्तर्यामी श्रीकृष्ण महाराजने	विषीदन्तम्	= { शोकयुक्त अर्जुनको
उभयो	= दोनों	प्रहसन् इव	= हसते हुए-ने
रेनयो	= मेनाओको	इदम्	= यह
मध्ये	= बीचमे	वचः	= वचन
		उवाच	= कहा

श्रीभगवानुवाच

शोक करनेको अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे ।

अशोच्या नवान् गतासूनगतासूंश्च नानुशोचन्ति पण्डिताः ॥११॥

हुण भगवान्का
अर्जुनके प्रति अशोच्यान्, अन्वशोच, न्वम्, प्रज्ञावादान्, च, भाषमे,
उपदेश आरम्भ गतासून्, अगतासून्, च, न, अनुशोचन्ति, पण्डिता ॥११॥
करना ।

हे अर्जुन-

त्वम्	= तू				{ जिनके प्राण
अशोच्यान्	= { न शोक करने	गतासून्	= { चले गये है		उनके लिये
	= { योग्योकेलिये				
अन्वशोच	= शोक करना है	च	= और		
च	= और				{ जिनके प्राण
प्रज्ञावादान्	= { पण्डितोके(से)	अगतासून्	= { नर्हा गये है		उनके लिये
	= { वचनोंको				
भाषसे	= कहना है			(भी)	
	(परन्तु)	न	= नहीं		
पण्डिता	= पण्डितजन	अनुशोचन्ति	= शोक करने हैं		

न त्वेवाहं जातु नासं न त्वं नेमे जनाधिपाः ।

न चैव न भविष्यामः सर्वे वयमतः परम् ॥१२॥

न, तू, एव, अहम्, जातु, न, आसम्, न, त्वम्, न, मे,
जनाधिपा न, च, एव न, भविष्याम, सर्वे, वयम्, अतः, परम्
सर्वे कि आत्मा नित्य है इसलिये शोक करना अयुक्त है । वास्तवमे-

न	= न	(एवम्)	= ऐसा
तु	= तो	एव	= ही (है कि)

अहम्	= मे	(आमन्) = थे
जातु	= किसी कालमें	च = और
न	= नहीं	न = न
आमम्	= या (अथवा)	(एवम्) = ऐसा
त्वम्	= त	एव = ही (हैं कि)
न	= नहीं	अतः = इसमें
(आसी)	= या (अथवा)	परम् = आगे
इमे	= यह	वयम् = हम
जनाधिपा	= राजानों	मवं = मव
न	= नहीं	न = नहीं
		भविष्याम = रहेंगे

पाशो देहिनोऽस्मिन्यथा देहे कौमारं यौवनं जरा ।

या तथा देहान्तरप्राप्तिर्धौरस्तत्र न मुह्यति ॥१३॥

पाशो देहिन अस्मिन् यथा देहे कौमारम्, यौवनम्, जरा

तथा देहान्तरप्राप्ति, धौर, तत्र, न मुह्यति ॥१३॥

बिन्दु-

यथा	= जैसे	जरा	= वृद्ध अवस्था
देहिन	= जीवन्मात्मा		(होती है)
अस्मिन्	= इस	तथा	= वने ही
देहे	स्थानमें	देहान्तर-	(अन्य जीवकी)
यौवासम्	युवावस्था	प्राप्ति	(प्राप्ति होती है)
यौवनम्	युवा (आयु)	तत्र	= इस निमग्न

धीरः	=धीर पुरुष	न	= नहीं
		मुह्यति	= मोहित होता है

अर्थात् जैसे कुमार, युवा ओर जरा अवस्थारूप स्थूल शरीरका विकार अज्ञानसे आत्मामे भासता है वैसे ही एक शरीरसे दूसरे शरीरको प्राप्त होनारूप सूक्ष्म शरीरका विकार भी अज्ञानसे ही आत्मामे भासता है इसलिये तत्त्वको जाननेवाला धीर पुरुष इस विषयमे नहीं मोहित होता ।

मात्रास्पर्शास्तु कौन्तेय शीतोष्णसुखदुःखदाः ।

आगमापायिनोऽनित्यास्तांस्तितिक्षस्व भारत ॥ १४ ॥

मात्रास्पर्शा , तु , कौन्तेय , शीतोष्णसुखदुःखदा ,

आगमापायिन , अनित्या , तान् , तितिक्षस्व , भारत ॥ १४ ॥

कौन्तेय	= हे कुन्तीपुत्र	आगमा-	} = क्षणभङ्गुर
शीतोष्ण-	{ सर्दी गर्मी	पायिनः	
सुखदुःखदा	{ और सुख		(और)
	{ दुःखको	अनित्या	= अनित्य है
	{ देनेवाले		(इसलिये)
मात्रास्पर्शा	{ इन्द्रिय और	माग्न	= { हे भगवन्
	{ निषेधके		{ अर्जुन
	{ मयोग	तान्	= उनको (त)
तु	= तो	तितिक्षस्व	= सहन कर

तित्तिष्ठावा फलं यं हि न व्यथयन्त्येते पुरुषं पुरुषर्षभ ।

समदुःखसुखं धीरं सोऽमृतत्वाय कल्पते ॥१५॥

यम्. हि. न, व्यथयन्ति, एते, पुरुषम्, पुरुषर्षभ,

नमदुःखसुखम्, धीरम्, स, अमृतत्वाय, कल्पते ॥१५॥

हि	= क्योंकि	एते	= { यह (इन्द्रियोके वियय)
पुरुषर्षभ	= हे पुरुषश्रेष्ठ		
समदुःख- सुखम्	= { दुःखसुखको समान समझने- वाले	न व्यथयन्ति	= { व्याकुल नहीं कर सकते
यम्	= जिस	सः	= वह
धीरम्	= धीर	अमृतत्वाय	= मोक्षके लिये
पुरुषम्	= पुरुषको	कल्पते	= योग्य होता है

। नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः ।

उभयोरपि दृष्टोऽन्तरत्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः ॥१६॥

न असत्, विद्यते, भाव, न, अभाव, विद्यते सत्,

उभयो, अपि, दृष्ट, अन्त, तु, अनयो, तत्त्वदर्शिभिः ॥१६॥

और है अर्जुन-

असत्	= { असत् (यस्तु) का तो	तु	= और
भाव	= अस्तित्व	सत्	= सत्त्वता
न	= नहीं	अभावः	= अभाव
विद्यते	= है	न	= नहीं
		विद्यते	= है

धीरः	=वीर पुरुष	न	= नहीं
		मुह्यति	= मोहित होता है

अर्थात् जैसे कुमार, युवा और जरा अवस्थारूप स्थूल शरीरका विकार अज्ञानसे आत्मामे भासता है वैसे ही एक शरीरसे दूसरे शरीरको प्राप्त होनारूप सूक्ष्म शरीरका विकार भी अज्ञानसे ही आत्मामे भासता है इसलिये तत्त्वको जाननेवाला वीर पुरुष इस विषयमे नहीं मोहित होता ।

मात्रास्पर्शास्तु कौन्तेय शीतोष्णसुखदुःखदाः ।

आगमापायिनोऽनित्यास्तांस्तितिक्षस्व भारत ॥१४॥

मात्रास्पर्शा, तु, कौन्तेय, शीतोष्णसुखदुःखदा,

आगमापायिन, अनित्या, तान्, तितिक्षस्व, भारत ॥१४॥

कौन्तेय	= हे कुन्तीपुत्र	आगमा-	} = क्षणभङ्गुर
		पायिनः	
शीतोष्ण-	[सर्दी गर्मी और सुख दुःखको देनेवाले	अनित्या	(और) = अनित्य है (इसलिये)
सुखद दुःखदा			
मात्रास्पर्शा	[इन्द्रिय और विषयोंके मेलमे	माग्त	= { हे भगवन् श्री
			= अर्जुन
तु	= ते	तान्	= उनको (त)
		तितिक्षस्व	= सहन कर

तित्तिप्राका फल यं हि न व्यथयन्त्येते पुरुषं पुरुषर्षभ ।

समदुःखसुखं धीरं सोऽमृतत्वाय कल्पते ॥१५॥

यम्. हि. न, व्यथयन्ति, एते, पुरुषम्, पुरुषर्षभ,

समदुःखसुखम्. धीरम्, स अमृतत्वाय, कल्पते ॥१५॥

हि	= क्योकि	एते	= { यह (इन्द्रियोके वियय)
पुरुषर्षभ	= हे पुरुषश्रेष्ठ		
समदुःख- सुखम्	= { दुःखसुखको गमान नमज्जने- वाले	न व्यथयन्ति	= { व्याकुल नहीं कर सकते
यम्	= जिस	सः	= वह
धीरम्	= धीर	अमृतत्वाय	= मोक्षके लिये
पुरुषम्	= पुरुषको	कल्पते	= योग्य होना है

नानागतवा नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः ।

विपश्ये ।

उभयोरपि दृष्टोऽन्तरत्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः ॥१६॥

न. अमृत, विद्यते, भाव. न. अभाव, विद्यते, मत,

उभयो, अपि दृष्ट, अन्त, तु अनयो तत्त्वदर्शिभिः ॥१६॥

धीरं है धर्जुन-

अमृत	= { अमृत (रक्त) वा तो	तु	= ओर
भाव	= अस्तित्व	मत.	= नतपता
न	= नहीं	अभावः	= अभाव
विद्यते	= है	न	= नहीं
		विद्यते	= है

(इस प्रकार)

अन्तः = तत्त्व

अनयोः = उन

उभयोः = दोनोंका

अपि = ही

तत्त्वदर्शिभिः = { ज्ञानी
पुरुषोद्भारा

दृष्टः = देखा गया है

अविनाशि तु तद्विद्धि येन सर्वमिदं ततम् ।

अविनाश

= नष्ट

विनाशमव्ययस्यास्य न कश्चित्कर्तुमर्हति ॥१७॥

अविनाशि, तु तत्, विद्धि, येन, सर्वम्, इदम्, ततम्,

विनाशम्, अव्ययम्, अस्य, न, कश्चित्, कर्तुम्, अर्हति ॥१७॥

इस न्यायके अनुसार—

अविनाशि = नाशरहित

ततम् = व्याप्त है

तु = तो

(क्योंकि)

तन = उसको

अस्य = उस

विद्धि = जान कि

अव्ययस्य = अविनाशीका

येन = निम्ने

विनाशम् = विनाश

इदम् = यह

कर्तुम् = करनेको

नर्हति = नष्ट

कश्चिन् = कोई भी

(नाश)

न अर्हति = समर्थ नहीं है

अन्तवन्त इमे देहा नित्यस्योक्ताः शरीरिणः ।

अनाशिनोऽप्रमेयस्य तस्माद्युध्यस्व भारत ॥१८॥

अनाशिनोऽप्रमेयस्य तस्माद्युध्यस्व, उक्ता, शरीरिणः,

तस्मात्, युध्यस्व, भारत ॥१८॥

और इस—

अनागिनः	= नागरहित	अन्तवन्तः	= नागवान्
अप्रमेयस्य	= अप्रमेय	उक्ताः	= कहे गये हैं
नित्यस्य	= निरन्तररूप	तस्मात्	= इसलिये
जरीणिः	= जीवात्माके	भारत	= { हे भरतवशी अर्जुन (त)
इमे	= यह		
देहाः	= मत्र जरीर	युध्यस्व	= युद्ध कर

आमात्रो नाने य एनं वेत्ति हन्तारं यश्चैनं मन्यते हतम् ।

और मारनवाला

नो मानते है

उभा न विजानीतो नायं हन्ति न हन्यते ॥१६॥

उभा न विजानीतो

य एनम्, वेत्ति हन्तारम्, य, च, एनम्, मन्यते, हतम्,

उभा, नो, न विजानीत, न, अयम्, हन्ति, न, हन्यते ॥१९॥

और—

य	= जो	उभा	= दोनो ही
एनम्	= इस आमात्रो	न	= नहीं
हन्तारम्	= मारनेवाला	विजानीतः	= जानते है
वेत्ति	= समझता है		(क्योंकि)
च	= तथा	अयम्	= यह आत्मा
य	= जो	न	= न
एनम्	= इसको	हन्ति	= मारता है
हतम्	= मरा		(और)
मन्यते	= मानता है	न	= न
तो	=	हन्यते	= मारा जाता है

न जायते म्रियते वा कदाचित्-

नायं भूत्वा भविता वा न भूयः ।

अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो

न हन्यते हन्यमाने शरीरे ॥२०॥

न, जायते, म्रियते, वा, कदाचित्, न, अयम्, भूत्वा, भविता,
वा, न, भूय, अज, नित्य, शाश्वत, अयम्, पुराण, न,
हन्यते, हन्यमाने, शरीरे ॥२०॥

अयम्	= यह आत्मा	भविता	= होनेवाला है
कदाचित्	= किसी कालमें भी		(क्योंकि)
न	= न	अयम्	= यह
जायते	= जन्मता है	अजः	= अजन्मा
वा	= और	नित्यः	= नित्य
न	= न	शाश्वतः	= शाश्वत (और)
म्रियते	= मरता है	पुराणः	= पुरातन है
वा	= अथवा	शरीरे	= शरीरके
न	= न	हन्यमाने	= नाश होनेपर भी
(अयम्)	= यह आत्मा		(यह)
भूत्वा	= हो करके	न हन्यते	= { नाश नहीं
भूय	= फिर		{ होता है

वेदाविनाशिनं नित्यं य एनमजमव्ययम् ।

कथं स पुन्यः पार्थ कं वातयति हन्ति कम् ॥२१॥

वेदाविनाशिनम्, नित्यम्, य, एनम्, अजम्, अव्ययम्,
कथं न पुन्यः पार्थ कम्, वातयति, हन्ति, कम् ॥२१॥

पार्थ	= हे पृथापुत्र अर्जुन	स.	= वह
य	= जो पुरुष	पुरुष	= पुरुष
एनम्	= इस आमाको	कथम्	= कैसे
अवि- नागिनम्	} = नाशगति	कम्	= किम्को
नित्यम्		घातयति	= मरवाना है
अजम्	= अजन्मा (ओर	(कथम्)	= कैसे
अन्ययम्	= अन्य	कम्	= किम्को
वेद	= जानता है	हन्ति	= मारता है

मौने दृष्टान्त
जागरणके
परिचय-
व १।

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय
नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि ।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णा-
न्यन्यानि संयाति नवानि देही ॥२२॥

वासानि जीर्णानि यथा विहाय, नवानि, गृह्णाति, नर,
अपराणि तथा शरीराणि विहाय, जीर्णानि अन्यानि,
संयाति नवानि देही ॥२२॥

बार यदि न कह कि भ तो शरीराय वियोगका मोक्ष करना
ह ना यह भी उचित नहीं ह, क्योंकि-

यथा	कैसे	विहाय	= त्यागकर
नर	मानव	अपराणि	= दूसरे
जीर्णानि	पुराने	नवानि	= नये वस्त्रों
वासानि	पैरों	गृह्णाति	= पहन करता है

तथा	= वैसे (ही)	विहाय	= त्यागकर
देही	= जीवान्मा	अन्यानि	= दूसरे
जीर्णानि	= पुराने	नवानि	= नये गरीरोको
गरीराणि	= गरीरोको	संयाति	= प्राप्त होता है

सर्वन्यापी नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः ।

वामाके नित्य-

स्वरूपराविस्मर-

मे वर्णन ।

न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः ॥२३॥

न, एनम्, छिन्दन्ति, शस्त्राणि, न, एनम्, दहति, पावक ,
न, च, एनम्, क्लेदयन्ति, आप , न, शोषयति, मारुत ॥२३॥

और हे अर्जुन-

एनम्	= इस आत्माको	एनम्	= इसको
शस्त्राणि	= शस्त्रादि	आपः	= जल
न	= नहीं	न	= नहीं
छिन्दन्ति	= काट सकते है (और)	क्लेदयन्ति	= { गीला कर सकते है
एनम्	= इसको	च	= और
पावकः	= आग	मारुत.	= वायु
न	= नहीं	न	= नहीं
दहति	= जला सकती है (तथा)	शोषयति	= सुखा सकता है

[,] अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्य एव च ।

नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातनः ॥२४॥

अच्छेद्य अयम्, अदाह्य , अयम्, अक्लेद्य , अशोष्य , एव, च,
नित्य , सर्वगत , स्थाणु , अचल , अयम्, सनातन ॥२४॥

क्योंकि—

अयम्	= यह आत्मा	अयम्	= यह आत्मा
अच्छेद्यः	= अच्छेद्य है	एव	= नि सन्देह
अयम्	= यह आत्मा	नित्यः	= नित्य
अदाद्यः	= अदाद्य	सर्वगतः	= सर्वव्यापक
अहेद्यः	= अक्रेद्य	अचलः	= अचल
च	= और	व्याणुः	= स्थिर रहनेवाला
अगोप्यः	= अगोप्य है		(और)
	(तथा)	सनातनः	= मनानन है

॥] अव्यक्तोऽयमचिन्त्योऽयमविकारोऽयमुच्यते ।

तस्मादेवं विदित्वैनं नानुशोचितुमर्हसि ॥२५॥

अयम्, अयम्, अचिन्त्य अयम् अविकारं अयम्,
उच्यते तस्मात् एवम्, विदित्वा एनम्, न, अनुशोचितुम्,
अर्हसि ॥२५॥

और—

अयम्	= यह आत्मा	अयम्	= यह आत्मा
अव्यक्तः	= {अव्यक्त अर्थात् गन्धियोक्ता अग्निप्र (और)	अविकार्यः	= {विकाररहित अर्थात् न वदन्नेक्षण
अयम्	= यह आत्मा	उच्यते	= कता जाना है
अचिन्त्य	= {अचित्य अर्थात् मनवा अग्निप्र (और)	तस्मात्	= इसने (त अर्हन्)
		एनम्	= इस आत्मने
		एवम्	= ऐसा

विदित्वा = जानकर
(त्वम्) = त
अनु- } = शोक करनेको
शोचितुम् }

न अर्हसि = { योग्य नहीं है
अर्थात् तुझे
शोक करना
उचित नहीं है

अथ चैनं नित्यजातं नित्यं वा मन्यसे मृतम् ।

तथापि त्वं महाबाहो नैवं शोचितुमर्हसि ॥२६॥

अथ च, एनम्, नित्यजातम्, नित्यम्, वा, मन्यसे, मृतम्,
तथापि, त्वम्, महाबाहो, न, एवम्, शोचितुम्, अर्हसि ॥२६॥

अथ च = और यदि
त्वम् = तू
एनम् = इसको
नित्यजातम् = सदा जन्मने
वा = और
नित्यम् = सदा
मृतम् = मरनेवाला
मन्यसे = माने
तथापि = तो भी
महाबाहो = हे अर्जुन
एवम् = इस प्रकार
शोचितुम् = शोक करनेको
न अर्हसि = योग्य नहीं है

जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च ।

तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि ॥२७॥

जन्तव्य, हि, ध्रुव, मृत्यु, ध्रुवम्, जन्म, मृतस्य, च,
तस्मात् अपरिहार्ये, अर्थे, न, त्वम्, शोचितुम्, अर्हसि ॥२७॥

हि = क्योंकि
जातस्य = जन्मनेवालेकी
ध्रुवः = निश्चित
(तस्मात् होनेमे तो)

मृत्युः	= मृ तु	'तस्मात्	= त्ममे (भी)
च	= आर	त्सम्	= त (त्म)
मृतम्य	= मरनेवात्का	'अपरिहार्ये	= विना उपायवाले
ध्रुवम्	= निश्चित	अर्थे	= विषयमें
जन्म	= जन्म	गोचितुम्	= शोक करनेको
(हाना मित्र हुआ) न अहमि = योग्य नहीं हैं।			

अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्तमध्यानि भारत ।
 अव्यक्तनिधनान्येव तत्र का परिदेवना ॥२८॥
 अव्यक्तादीनि, भूतानि, व्यक्तमध्यानि, भारत,
 अव्यक्तनिधनानि, एव, तत्र, का परिदेवना ॥२८॥

आर यह भीमादिकोंक शरीर मायामय होनेसे अनिय है
 हमसे शरीराल लिये भी शोक करना उचित नहीं, क्योंकि—

भारत	= अर्जुन	(केंद्र)
भूतानि	= सपूर्ण प्राणी	
अव्यक्तादीनि	= तन्ममे पहिले विना मरनेवाले	व्यक्त- मध्यानि = { बीचमे ही शरीरवाले (प्रतीत होते) हैं
	(ओर)	(फिर)
अव्यक्त- निधनानि एव	मरनेवाले वा भी विना शरीरवाले	तत्र = उम विषयमे का = क्या परिदेवना = चिन्ता है

आत्मतत्त्वके
पाना, वक्ता
और श्रोताकी
दुर्लभता का
निरूपण ।

आश्चर्यवत्पश्यति कश्चिदेन-
माश्चर्यवद्ब्रूदति तथैव चान्यः ।
आश्चर्यवच्चैनमन्यः शृणोति

श्रुत्वाप्येनं वेद न चैव कश्चित् ॥२६॥

आश्चर्यवत्, पश्यति, कश्चित्, एनम्, आश्चर्यवत्, ब्रूदति,
तथा, एव, च, अन्य, आश्चर्यवत्, च, एनम्, अन्य,
शृणोति, श्रुत्वा, अपि, एनम्, वेद, न, च, एव, कश्चित् ॥२९॥

ओर हे भर्जुन ! यह आत्मतत्त्व बड़ा गहन है इसलिये—

कश्चित्	= { कोई (महापुरुष) ही	च	= और
एनम्	= इस आत्माको	अन्यः	= दूसरा (कोई ही)
आश्चर्यवत्	= आश्चर्यकी ज्यों	एनम्	= इस आत्माको
पश्यति	= देखता है	आश्चर्यवत्	= आश्चर्यकी ज्यों
च	= और	शृणोति	= सुनता है
तथा	= वैसे	च	= और
एव	= ही	कश्चित्	= कोई कोई
अन्य	= { दूसरा कोई (महापुरुष) ही	श्रुत्वा	= सुनकर
आश्चर्यवत्	= आश्चर्यकी ज्यों	अपि	= भी
(इसके लिये)		एनम्	= इस आत्माको
ब्रूदति	= कहता है	न एव	= नहीं
		वेद	= जानता

आत्मा की देही नित्यमवध्योऽयं देहे सर्वस्य भारत ।

निरुपना या तस्मात्सर्वाणि भूतानि न त्वं शोचितुमर्हसि ॥३०॥

कर्मके लिये देही. नित्यम्, अव्यय, अमर, देहे, सर्वस्य, भारत,
शोक करनेको तस्मात्, सर्वाणि भूतानि, न, त्वम्, शोचितुम्, अर्हसि ॥३०॥
निषेध ।

भारत = हे अर्जुन

अयम् = यह

देही = आत्मा

सर्वस्य = सबके

देहे = शरीरमें

नित्यम् = नडा ही

अवध्य = अव्यय है*

तस्मात् = इसलिये

सर्वाणि = सपूर्ण

भूतानि = { भूत प्राणियो-
के लिये

त्वम् = तू

शोचितुम् = शोक करनेको

न अर्हसि = योग्य नहीं है

अविद्योऽनं नित्यं स्वधर्ममपि चावेध्य न विकम्पितुमर्हसि ।

अमृता युद्धात् धर्म्याद्धि युद्धाच्छ्रेयोऽन्यत्क्षत्रियस्य न विद्यते ॥३१॥

स्वधर्मम्, अपि च अवेध्य, न विकम्पितुम्, अर्हसि

धर्म्यात्, हि युद्धात्, श्रेय अयत्, क्षत्रियस्य न, विद्यते ॥३१॥

च = और

स्वधर्मम् = अपने धर्मको

अवेध्य = देखकर

अपि = भी (त)

विकम्पितुम् = नय करनेको

न अर्हसि = योग्य नहीं है

हि = क्योंकि

धर्म्यात् = धर्मयुक्त

युद्धात् = युद्धमें बटकर

अन्यत् = दूसरा

(कोई)	क्षत्रियस्य = क्षत्रियके लिये
श्रेयः	= { कल्याणकारक कर्तव्य
	न = नहीं
	विद्यते = है

यदृच्छया चोपपन्नं स्वर्गद्वारमपावृतम् ।

सुखिनः क्षत्रियाः पार्थ लभन्ते युद्धमीदृशम् ॥ ३२ ॥

यदृच्छया, च, उपपन्नम्, स्वर्गद्वारम्, अपावृतम्,
सुखिनः, क्षत्रियाः, पार्थ, लभन्ते, युद्धम्, ईदृशम् ॥ ३२ ॥

अर्थ-

पार्थ	= तू पार्थ	' ईदृशम् = इस प्रकारके
यदृच्छया	= अपने आप	युद्धम् = युद्धको
उपपन्नम्	= प्राप्त हुए	सुखिनः = भाग्यवान्
च	= और	क्षत्रियाः = क्षत्रिय लोग
अपावृतम्	= मुले हुए	(ही)
स्वर्गद्वारम्	= स्वर्गके द्वारके	लभन्ते = पाते हैं

अथ चेत्त्वमिमं धर्म्यं संग्रामं न करिष्यसि ।

ततः स्वधर्मं कीर्तिं च हित्वा पापमवाप्स्यसि ॥ ३३ ॥

अथ चेत, त्वम्, इमम्, धर्म्यम्, संग्रामम्, न, करिष्यसि,
ततः स्वधर्ममेव कीर्तिम्, च, हित्वा, पापम्, अवाप्स्यसि ॥ ३३ ॥

अथ	= अतः	त्वम्	= तू
चेत्	= यदि	इमम्	= इस

धर्म्यम्	= धर्मयुक्त	च	= और
संग्रामम्	= संग्रामको	कीर्तिम्	= कीर्तिको
न	= नहीं	हित्वा	= ग्योकर
कस्मिंश्चिन्मि	= कस्मेना	'पापम्	= पापको
तन्	= तों	अवाप्स्यमि	= प्राप्त होगा
स्वधर्मम्	= स्वधर्मको		

अकीर्तिं चापि भूतानि कथयिष्यन्ति तेऽव्ययाम् ।

समावितस्य चाकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते ॥३४॥

अर्थात्, च अपि भूतानि, कथयिष्यन्ति, ते, अव्ययम्,

समावितस्य. च. अकीर्ति. मरणात् अतिरिच्यते ॥३४॥

च	= और	कथयिष्यन्ति	= कहेंगे
भूतानि	= सब लोग	च	= और (वह)
ते	= वेही	अकीर्तिः	= अपकीर्ति
अव्ययाम्	= (वक्तु वाक्यनक गहनैवाली)	समावितस्य	= {माननीय पुण्यजे जिने
अकीर्तिम्	= अपकीर्तिको	मरणात्	= मरणसे (नी)
अपि	= भी	अतिरिच्यते	= {अधिक (दुनी, होती है

अथाद्रणादुपरत मस्यन्ते त्वां महारथाः ।

येषां च त्वं बहुमतो भूत्वा यास्यसि लाघवम् ॥३५॥

एषा तेऽभिहिता सांख्ये बुद्धिर्योगे त्विमां शृणु ।

बुद्ध्या युक्तो यया पार्थ कर्मबन्धं प्रहास्यसि ॥

एषा, ते, अभिहिता, सांख्ये, बुद्धि, योगे, तु, इमाम्, शृणु,

बुद्ध्या युक्त, यया, पार्थ, कर्मबन्धम्, प्रहास्यसि ॥३९॥

पार्थ	= हे पार्थ	योगे	= { निष्काम कर्म- योगके + विषयमे
एषा	= यह	शृणु	= सुन (कि)
बुद्धिः	= बुद्धि	यया	= जिस
ते	= तेरे लिये	बुद्ध्या	= बुद्धिसे
नान्ये	= { ज्ञानयोगके* विषयमे	युक्तः	= युक्त हुआ (त)
अभिहिता	= कही गयी	कर्मबन्धम्	= { कर्मोके बन्धनको
तु	= और	प्रहास्यसि	= { अच्छी तरहसे नाश करेगा
इमाम्	= इमीको (अत्र ,		

नेहाभिक्रमनाशोऽस्ति प्रत्यवायो न विद्यते ।

न्यतः समायस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात् ॥४०॥

आर-

इह	= { इम निष्काम कर्मयोगम् }	अस्य	= इम (निष्काम कर्मयोगम्)
अभिक्रम- नाश.	= { आरम्भका अर्थात् बीजका नाश }	धर्मस्य	= धर्मका
न	= नहीं	स्वल्पम्	= थोडा
अस्ति	= है (आर)	अपि	= भी (साथ)
प्रत्यवाय	= { उल्टा फलरूप (दोष (भी)	महतः	= { जन्ममृत्युरूप महान्
न	= नहीं	भयात्	= भयम्
विद्यते	= होता है	त्रायते	= { उद्धार कर (दता है

निष्काम इव व्यवसायात्मिका बुद्धिरेकेह कुरुनन्दन ।
 बहुशाखा ह्यनन्ताश्च बुद्धयोऽव्यवसायिनाम् ॥४१॥
 निष्काम वा व्यवसायात्मिका बुद्धि एका इह कुरुनन्दन
 निष्काम । बहुशाखा, हि अनन्ता, च बुद्धयः अव्यवसायिनाम् ॥४१॥

आर-

कुरुनन्दन	= हे अर्जुन	एका हि	= एका ही है
इह	= इस	च	= और
	(कान्याणमार्गम्)		
व्यव- सायात्मिका	= निष्कामका	अव्यव- सायिनाम्	= (नाना- प्रकारकी)
बुद्धिः	= बुद्धि	बुद्धयः	= बुद्धियाँ

बहुशाखा = बहुत भेदोवाली अनन्ताः = अनन्त होती है

मयान पुण्या यामिमां पुष्पितां वाचं प्रवदन्त्यविपश्चितः ।

वेदवादरताः पार्थ नान्यदस्तीति वादिनः ॥४२॥

कामात्मानः स्वर्गपरा जन्मकर्मफलप्रदाम् ।

क्रियाविशेषबहुलां भोगैश्वर्यगतिं प्रति ॥४३॥

याम् इमाम्, पुष्पिताम्, वाचम्, प्रवदन्ति, अविपश्चित ,

वेदवादरता , पार्थ, न, अन्यत्, अस्ति, इति, वादिन ॥४२॥

कामात्मान , स्वर्गपरा , जन्मकर्मफलप्रदाम्,

क्रियाविशेषबहुलाम्, भोगैश्वर्यगतिम्, प्रति ॥४३॥

और-

पार्थ = हे अर्जुन (जो) वादिनः = कहनेवाले हैं

कामात्मानः = मकामी पुरुष (वे)

वेदवादरताः = { केवल फल- अविपश्चितः = अप्रियेकीजन

श्रुतिमे प्रीति रमानेवाले जन्मकर्म- { जन्मरूप

स्वर्गको ही फलप्रदाम् { कर्मफलको

परम श्रेष्ठ माननेवाले (और)

(इसमें बटकर) भोगैश्वर्य- { भोग तथा

अन्यत् = और कुछ गतिम् प्रति = { ऐश्वर्यकी

न = नहीं प्राप्तिके लिये

प्रवदन्ति = कहते

इति = अतः क्रियाविशेष- { बहुत-सी

बहुलाम् { क्रियाओंके

विस्तारवाली

इमाम् = इस प्रकारकी वाचम् = वाणीको
 याम् = जिस
 पुष्पिताम् = { दिग्बाहु
 शोभायुक्त- प्रवदन्ति = कहते हैं

क्रामा पुरुषों- भोगैश्वर्यप्रसक्तानां तथापहतचेतसाम् ।
 अन्न कारण- व्यवसायात्मिका बुद्धिः समाधौ न विधीयते ॥ ४४ ॥
 निश्चयात्मक न होनेवाला भोगैश्वर्यप्रसक्तानाम्, तथा, अपहतचेतसाम्,
 न । व्यवसायात्मिका, बुद्धि, समाधौ, न, विधीयते ॥ ४४ ॥

तथा = उस वाणीद्वारा (उन पुरुषोंके)
 अपहत-चेतसाम् = { हरे हुए समाधौ = अन्न कारणमे
 चित्तवाले व्यवसायात्मिका } = निश्चयात्मक
 (तथा)
 भोगैश्वर्य-प्रसक्तानाम् = { भोग और बुद्धिः = बुद्धि
 ऐश्वर्यमे न = नहीं
 आगन्तिवाले विधीयते = होती है

निश्चयवासी और त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रैगुण्या भवार्जुन ।
 म परावर्ण निर्वृन्दो नित्यसत्त्वस्थो नियोगक्षेम आत्मवान् ॥
 त्रैगुण्यविषया, वेदा, निस्त्रैगुण्य भव, अर्जुन,
 निर्वृन्द, नित्यसत्त्वस्थ नियोगक्षेम आत्मवान् ॥ ४५ ॥

कार-

अर्जुन = हे अर्जुन वेदा. = सब वेद
 म० जी० ५—

त्रैगुण्य- विषयाः	=	{ तीनों गुणोंके कार्यरूप ससारको विषय करनेवाले अर्थात् प्रकाश करनेवाले हैं (इसलिये न)	(और)	निर्द्वन्द्वः = { सुखदुःखादि द्वन्द्वोंसे रहित नित्य- = { नित्य वस्तुमें सत्त्वस्थः = { स्थित (तथा) निर्योग- = { योग-क्षेमको + क्षेमः = { न चाहनेवाला
			(और)	
निस्त्रैगुण्यः	=	{ अममारी अर्थात् निष्कामी	आत्मवान् = आत्मपरायण भव = हो	

यावानर्थ उदपाने सर्वतः संप्लुतोदके ।

तावान्मर्वेषु वेदेषु ब्राह्मणस्य विजानतः ॥४६॥

य वान्. अर्थ, उदपाने, सर्वतः, संप्लुतोदके,

ता वान् मर्वेषु. वेदेषु, ब्राह्मणस्य, विजानत ॥ ४६ ॥

संशोक्ति-

सर्वतः (मनुष्यका)
 = सब ओरमें
 संप्लुतोदके = { छोटे
 जलशायमें
 यावान् = जितना
 अर्थ = प्रयोजन
 (प्राप्ते मति) = प्राप्त करनेपर (अस्ति) = रहता है

विजानतः =	{ अच्छी प्रकार ब्रह्मको जानने- वाले	सर्वेषु	= सब
		वेदेषु	= वेदोंमें
ब्राह्मणस्य = ब्राह्मणका	(भी)	तावान्	{ उतना ही प्रयोजन रहता है

अर्थात् जैने बड़े जलाशयके प्राप्त हो जानेपर जलके लिये छोटे जलाशयोंकी आवश्यकता नहीं रहती, वैसे ही ब्रह्मानन्दकी प्राप्ति होनेपर आनन्दके लिये वेदोंकी आवश्यकता नहीं रहती ।

पञ्चमस्मिन् कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि ॥४७॥
प्रमाण और कर्म- कर्मणि, एव अधिकार . ते, मा फलेषु, कदाचन,
रहागवा निषेध । मा, कर्मफलहेतु , भूर्, मा, ते सङ्ग . अस्तु, अकर्मणि ॥ ४७ ॥

द्वयमे-

ते	= तेरा	(भी)
कर्मणि	= कर्म करनेवालेमें	मा = मत
एव	= ही	भूर् = हा (तू)
अधिकार.	= अधिकार होने	ते = तेरी
फलेषु	= फलमें	अकर्मणि = कर्म न करनेमें
कदाचन	= कभी	(भी)
मा	नहीं (और न)	सङ्ग = प्राप्ति
कर्मफल-	। कारणके फलका	मा = न
हेतुः	। जानना कारण	अस्तु = होवे

आसक्तिको योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनंजय ।

तत्कुरु समत्व-

दिमे कर्म सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते ॥

नेत्रे स्थिते योगस्थः, कुरु, कर्माणि, सङ्गम्, त्यक्त्वा, धनजय,

॥ ४८ ॥

सिद्ध्यसिद्ध्योः, समः, भूत्वा, समत्वम्, योगः, उच्यते ॥ ४८ ॥

धनंजय	= हे धनजय	भूत्वा	= होकर
सङ्गम्	= आसक्तिको	योगस्थः	= योगमे स्थित हुआ
त्यक्त्वा	= त्यागकर	कर्माणि	= कर्मोंको
	(तथा)	कुरु	= कर (यह)
मिद्वय-	{ मिद्वि और	समत्वम्	= समत्वभाव*ही
मिद्वयोः		योग	= योग (नाममे)
मम	= ममान बुद्धिवाला	उच्यते	= कहा जाता है

दृष्टेण ह्यवरं कर्म बुद्धियोगाद्धनंजय ।

बुद्धौ शरणमन्विच्छ कृपणाः फलहेतवः ॥ ४९ ॥

दृष्टेण शरणम्, कर्म, बुद्धियोगात्, धनजय,

कृपणान् अन्विच्छ, कृपणाः, फलहेतवः ॥ ४९ ॥

इमं समत्वरूप-

बुद्धियोगात्	= बुद्धियोगमे	(अतः)	= इमल्लिये
कर्म	= (ममाम्) कर्म	धनंजय	= हे धनजय
दृष्टेण	= दृष्ट	बुद्धौ	= { समत्वबुद्धि-
उच्यते	= उच्यते		योगका

गरणम् = आश्रय

अन्विच्छ = ग्रहण कर

हि = क्योंकि

फलहेतवः = { फलकी
वासनावाले

कृपणा. = अत्यन्त दीन है

बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृते ।

तस्माद्योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम् ॥

बुद्धियुक्त जहाति इह, उभे, सुकृतदुष्कृते,
तस्मात् योगाय युज्यस्व, योग, कर्मसु, कौशलम् ॥५०॥

शर-

बुद्धियुक्त. = { नम बुद्धि- तस्मात् = इनसे
युक्त पुरुष योगाय = तस्मै बुद्धियोगके

सुकृत- } = पुण्य पाप युज्यस्व = चेष्टा कर
दुष्कृते } (यह)

उभे = दोनोंको योग = { नम बुद्धिरूप
इह = इस लोकां योग ही

(एव) = ही कर्मसु = कर्मोंमें

जहाति = { त्याग देना ह वांशलम् = { चतुरता ह
अशांत उनसे अशांत कर्म-
लिपयमान वा प्रसन्ने छुटने-
नहीं होना वा उत्पन्न है

कर्मज बुद्धियुक्तो हि फलं त्यक्त्वा मनीषिणः ।

जन्मबन्धविनिर्मुक्ताः पदं गच्छन्त्यनामयस ॥

कर्मज, बुद्धियुक्त, हि, फलम्, त्यक्त्वा, मनीषिणः,

जन्मबन्धविनिर्मुक्ता पदम्, गच्छन्ति, अनामयस ॥५१॥

हि = क्योकि
 बुद्धियुक्ता = बुद्धियोगयुक्त
 मनीषिणः = ज्ञानीजन
 कर्मजम् = { कर्मोंसे उत्पन्न
 फलम् = होनेवाले
 त्यक्त्वा = फलको
 = त्यागकर
 जन्मबन्ध-
 विनिर्मुक्ता = { जन्मरूप
 = बन्धनसे
 छूटे हुए
 अनामयम् = निर्दोष अर्थात्
 = अमृतमय
 पदम् = परमपदको
 गच्छन्ति = प्राप्त होने है

यदा ते मोहकलिलं बुद्धिर्व्यतितरिष्यति ।
 तदा गन्तासि निर्वेदं श्रोतव्यस्य श्रुतस्य च ॥५२॥
 यदा ते, मोहकलिलम्, बुद्धि, व्यतितरिष्यति,
 तदा गन्तासि, निर्वेदम्, श्रोतव्यस्य, श्रुतस्य, च ॥५२॥
 और हे अर्जुन-

यदा = जिस कालमें तदा = तब
 ते = तेरी (त्वम्) = तू
 त्वि = बुद्धि श्रोतव्यस्य = सुनने योग्य
 श्रोतव्यस्य = और च = सुने हुण्के
 श्रुतस्य = सुने हुण्के
 निर्वेदम् = वैराग्यको
 गन्तासि = प्राप्त होगा

श्रुतिविप्रतिपन्ना ते यदा स्थाप्यति निश्चला ।
 तदा वावचन्ता बुद्धिस्तदा योगमवाप्स्यमि ॥५३॥
 ते यदा स्थाप्यति, निश्चला,
 तदा बुद्धिस्तदा योगम, अवाप्स्यमि ॥५३॥

और-

यदा	= जब	समार्थो	= { परमात्माके
ते	= तेरी		{ स्वरूपमें
		अचला	= अचल (और)
		निश्चला	= स्थिर
श्रुति-	{ अनेक	स्थास्यति	= ठहर जायगी
विप्रतिपन्ना	{ प्रकारके	तदा	= तब (त)
	= सिद्धान्तोंको		
	{ सुननेमें	योगम्	= { समत्वरूप
	{ विचलित हुई		{ योगको
बुद्धि.	= बुद्धि	अवाप्स्यमि	= प्राप्त होगा

अर्जुन उवाच

स्थितप्रज्ञस्य का भाषा समाधिस्थस्य केशव ।

स्थितधीः किं प्रभाषेत किमासीत ब्रजेत किम् ॥

स्थितप्रज्ञस्य वा. भाषा, समाधिस्थस्य, केशव,

स्थितधी किम्. प्रभाषेत, किम्. आसीत, ब्रजेत, किम् ॥५४॥

इस प्रकार भगवान् वचनोंको सुनकर अर्जुनने पूछा-

केशव	= हे केशव	स्थितधीः	= स्थिरबुद्धि पुण्य
समाधिस्थस्य	= { समाधिमें	किम्	= केशव
	{ स्थित	प्रभाषेत	= बोलना है
स्थितप्रज्ञस्य	= { स्थिरबुद्धि-	किम्	= केशव
	{ वाक् पुरुषवा	आसीत	= रहता है
वा	= क्या	किम्	= केशव
भाषा	= वक्ष्यता है	ब्रजेत	= चलेगा है
	(आर)		

हि	= क्योकि	जन्मबन्ध-	= { जन्मरूप
बुद्धियुक्ताः	= बुद्धियोगयुक्त	विनिर्मुक्ताः	= { बन्धनसे छूटे हुए
मनीषिणः	= ज्ञानीजन		
कर्मजम्	= { कर्मोंसे उत्पन्न होनेवाले	अनामयम्	= { निर्दोष अर्थात् अमृतमय
फलम्	= फलको	पदम्	= परमपदको
त्यक्त्वा	= त्यागकर	गच्छन्ति	= प्राप्त होते हैं

मोहका नाश यदा ते मोहकलिलं बुद्धिर्व्यतितरिप्यति ।
 होनेसे वैराग्य- तदा गन्तासि निर्वेदं श्रोतव्यस्य श्रुतस्य च ॥५२॥
 की प्राप्ति ।

यदा, ते, मोहकलिलम्, बुद्धि, व्यतितरिप्यति,
 तदा, गन्तासि, निर्वेदम्, श्रोतव्यस्य, श्रुतस्य, च ॥५२॥

और हे अर्जुन-

यदा	= जिस कालमें	तदा	= तब
ते	= तेरी	(त्वम्)	= तू
बुद्धिः	= बुद्धि	श्रोतव्यस्य	= सुनने योग्य
मोह-	= { मोहरूप	च	= और
कलिलम्	= { दलदलको	श्रुतस्य	= सुने हुएके
व्यति-	= { त्रिकुल तर	निर्वेदम्	= वैराग्यको
तरिप्यति	= { जायगी	गन्तासि	= प्राप्त होगा

बुद्धिकी स्थिरता- श्रुतिविप्रतिपन्ना ते यदा स्थास्यति निश्चला ।
 से योगकी प्राप्ति ।

समाधावचला बुद्धिस्तदा योगमवाप्स्यसि ॥५३॥

श्रुतिविप्रतिपन्ना, ते, यदा, स्थास्यति, निश्चला,
 ममाग्रौ, अचला, बुद्धि, तदा, योगम्, अवाप्स्यसि ॥५३॥

और-

यदा	= जव	समार्थो	= { परमात्माके
ते	= तेरी		{ स्वरूपमें
		अचला	= अचल (और)
		निश्चला	= स्थिर
श्रुति-	{ अनेक	स्थास्यति	= ठहर जायगी
विप्रतिपत्ता	{ प्रकारके	तदा	= तब (त)
	= { सिद्धान्तोंको		
	{ सुननेमें	योगम्	= { समत्वरूप
	{ विचलित हुई		{ योगको
बुद्धिः	= बुद्धि	अवाप्स्यमि	= प्राप्त होगा

अर्जुन उवाच

स्थितप्रज्ञस्य का भाषा समाधिस्थस्य केशव ।

स्थितधीः किं प्रभाषेत किमासीत ब्रजेत किम् ॥

स्थितप्रज्ञस्य का, भाषा समाधिस्थस्य, केशव,
स्थितधी विम् प्रभाषेत, किम् आसीत, ब्रजेत, किम् ॥५४॥

इस प्रकार भगवानुप वचनावो सुनकर अर्जुनने पूछा-

केशव	= ते केशव	स्थितधीः	= स्थिरबुद्धि पुरुष
समाधिस्थस्य	= { समाधिमें	विम्	= कौन
	{ स्थित	प्रभाषेत	= बोलता है
स्थितप्रज्ञस्य	= { स्थिरबुद्धि-	विम्	= कौन
	{ वाले पुरुषका	आसीत	= रहता है
का	= क्या	विम्	= कौन
भाषा	= बोलता है	ब्रजेत	= चलाता है
	(और)		

श्रीभगवानुवाच

समाधिम् स्थित
तुष्टं स्थिरबुद्धि
पुरुषके लक्षण ।

प्रजहाति यदा कामान्सर्वान्पार्थ मनोगतान् ।

आत्मन्येवात्मना तुष्टः स्थितप्रज्ञस्तदोच्यते ॥

प्रजहाति, यदा, कामान्, सर्वान्, पार्थ, मनोगतान्,

आत्मनि, एव, आत्मना, तुष्ट, स्थितप्रज्ञ, तदा, उच्यते ॥५५॥

उसके उपरान्त श्रीकृष्ण महाराज बोले—

पार्थ	= हे अर्जुन	तदा	= उस कालमें
यदा	= जिस कालमें	आत्मना	= आत्मा में
	(यह पुरुष)	एव	= ही
मनोगतान्	= मन में स्थित	आत्मनि	= आत्मा में
सर्वान्	= सपूर्ण	तुष्टः	= सतुष्ट हुआ
कामान्	= कामनाओंको	स्थितप्रज्ञः	= स्थिरबुद्धिवाला
प्रजहाति	= त्याग देता है	उच्यते	= कहा जाता है

स्थिरबुद्धि पुरुष- दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः ।

के अन्त करण वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते ॥५६॥

रागद्वेषादि के दुःखेषु, अनुद्विग्नमना, सुखेषु, विगतस्पृह,

भगवाण् कथन वीतरागभयक्रोधः, स्थितधीः, मुनि, उच्यते ॥५६॥

तथा—

दुःखेषु	= दुःखोंकी प्राप्तिमें	विगतस्पृहः = { दूर हो गई है स्पृहा जिसकी (तथा)
अनुद्विग्न- मना.	= { उद्वेगरहित है मन जिसका (और)	
सुखेषु	= सुखोंकी प्राप्तिमें	वीतराग- भयक्रोधः = { नष्ट हो गये हैं राग, भय और क्रोध जिसके

(ऐमा) स्थितधीः = स्थिरबुद्धि
मुनिः = मुनि उच्यते = कहा जाता है

यः सर्वत्रानभिस्नेहस्तत्तत्प्राप्य शुभाशुभम् ।

नाभिनन्दति न द्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥५७॥

यः सर्वत्र अनभिस्नेहः, तत्, तत्, प्राप्य, शुभाशुभम्,
न अभिनन्दति, न, द्वेष्टि, तस्य, प्रज्ञा, प्रतिष्ठिता ॥५७॥

और-

यः = जो पुरुष न = न
सर्वत्र = सर्वत्र अभिनन्दति = { प्रयत्न होता
अनभिस्नेहः = स्नेहहीन हुआ है (और)
तत् तत् = उम उम न = न
शुभाशुभम् = { शुभ तथा द्वेष्टि = द्वेष करता है
अशुभ तस्य = उमकी
(बन्धुओं) को प्रज्ञा = बुद्धि
प्राप्य = प्राप्त होकर प्रतिष्ठिता = स्थिर है

यदा संहरते चायं कूर्मोऽङ्गानीव सर्वशः ।

इन्द्रियाणीन्द्रियार्थैस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥

यदा, संहरते, च, अयम्, कूर्मः, अङ्गानि, एव सर्वशः,
इन्द्रियाणि इन्द्रियार्थैस्तस्य प्रज्ञा, प्रतिष्ठिता ॥५८॥

च - और इव = { जेने (नष्ट होने)
कूर्मः = कछुआ (अपने) ह, वेने ही)
अङ्गानि = अंशों अयम् = यह पुरुष

यदा	= जब	संहरते	= समेट लेता है
सर्वशः	= सब ओरसे (अपनी)		(तब)
इन्द्रियाणि	= इन्द्रियोंको	तस्य	= उसकी
इन्द्रियार्थेभ्यः =	{ इन्द्रियोंके विषयोंसे	प्रज्ञा	= बुद्धि
		प्रतिष्ठिता	= स्थिर होती है

हठपूर्वक भोगों- विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः ।
 का त्याग करने-
 से भी आसक्ति रसवर्जं रसोऽप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते ॥५६॥
 नष्ट न होनेका
 और परमात्म- विषया , विनिवर्तन्ते, निराहारस्य, देहिन ,
 दर्शनसे नष्ट रसवर्जम्, रस , अपि, अस्य, परम्, दृष्ट्वा, निवर्तते ॥५९॥
 होनेका कथन ।

यद्यपि—

(इन्द्रियोंके द्वारा)	रसवर्जम् = राग नहीं
निराहारस्य = { विषयोंको न ग्रहण करने- वाले	(निवृत्त होता) (और)
देहिनः = पुरुषके (भी) (केवल)	अस्य = इस पुरुषका (तो)
विषया = विषय (तो)	रसः = राग
विनिवर्तन्ते = { निवृत्त हो जाते हैं (परन्तु)	अपि = भी
	परम् = परमात्माको
	दृष्ट्वा = साक्षात्करके
	निवर्तते = निवृत्त हो जाता है

इन्द्रियो- यततो ह्यपि कौन्तेय पुरुषस्य विपश्चितः ।

की प्रवृत्तिका
निष्पन्न ।

इन्द्रियाणि प्रमाथीनि हरन्ति प्रसभं मनः ॥६०॥

यतत . हि, अपि, कौन्तेय, पुरुषस्य, विपश्चित ,
इन्द्रियाणि, प्रमाथीनि, हरन्ति, प्रसभम्, मन ॥६०॥

और—

कौन्तेय	= हे अर्जुन	मनः	= मनको
हि	= जिम्मे (कि)	प्रमाथीनि	= { यह प्रमथन स्वभाववाली
यततः	= यत्र करने हुए	इन्द्रियाणि	= इन्द्रिया
विपश्चितः	= बुद्धिमान्	प्रसभम्	= बलात्कारमे
पुरुषस्य	= पुरुषके	हरन्ति	= हर लेती हैं
अपि	= भी		

तानि सर्वाणि संयम्य युक्त आसीत मत्परः ।

वशे हि यरयेन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥

तानि. सर्वाणि. संयम्य, युक्त. आसीत, मत्पर ,
वशे. हि यस्य इन्द्रियाणि, तस्य प्रज्ञा, प्रतिष्ठिता ॥६१॥

इसलिये मनुष्यको चाहिये कि—

तानि	= उन	हि	= योंकि
सर्वाणि	= सम्पूर्ण इन्द्रियोंको	यस्य	= जिन पुस्तके
संयम्य	= बरामे करने.	इन्द्रियाणि	= इंद्रिया
युक्तः	= समाहित चित्त हुआ	वशे	= बरामे होनी है
मत्पर	= मेरे पराग्रण	तस्य	= उसकी (ही)
आसीत	= रहित होवे	प्रज्ञा	= बुद्धि
		प्रतिष्ठिता	= निश्चित होती है

विषयोंके चिन्तन ध्यायतो विषयान्पुंसः सङ्गस्तेषूपजायते ।
 से आसक्ति आदि सङ्गात्संजायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते ॥
 अवशुण्णीकी क्रम- व्यायत , विषयान् , पुंस , सङ्ग , तेषु , उपजायते,
 से उत्पत्ति ओर सङ्गात् , संजायते , काम , कामात् , क्रोध , अभिजायते ॥६२॥
 अथ पतन होने- का कथन ।

और हे अर्जुन ! मनमहित इन्द्रियोंको वशमें करके मेरे परायण

न होनेसे मनके द्वारा विषयोंका चिन्तन होता है और—

विषयान् = विषयोंको (उन विषयोंकी)

ध्यायतः = चिन्तन करनेवाले कामः = कामना

पुंसः = पुरुषकी संजायते = उत्पन्न होती है

तेषु = उन विषयोंमें (और)

सङ्गः = आसक्ति कामात् = { कामना (मे

उपजायते = हो जाती है विघ्न पडने)से

(और)

सङ्गात् = आसक्तिसे क्रोधः = क्रोध

अभिजायते = उत्पन्न होता है

[,,] क्रोधाद्भवति संमोहः संमोहात्स्मृतिविभ्रमः ।

स्मृतिभ्रंशाद्बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति ॥

क्रोधात् , भवति , संमोह , संमोहात् , स्मृतिविभ्रम ,

स्मृतिभ्रंशात् , बुद्धिनाश , बुद्धिनाशात् , प्रणश्यति ॥६३॥

और—

क्रोधात् = क्रोधसे भवति = उत्पन्न होता है

संमोहः = { अविवेक अर्थात् (और)

मूढभाव

संमोहात् = अविवेकसे

स्मृति-	{ स्मरणशक्ति	(और)	
विभ्रमः	= { भ्रमित हो जाती है		
	(और)		
स्मृति-	{ स्मृतिके भ्रमित		
भ्रंशात्	= { हो जानेसे	(यह पुरुष)	
बुद्धिनाशः	= { बुद्धि अर्थात्		
	{ ज्ञानशक्तिका		
	{ नाश हो जाता है		
	प्रणश्यति	= { अपने श्रेय-	
		{ साधनमे	
		{ गिर जाता है	

रागद्वेषवियुक्तैस्तु विषयानिन्द्रियैश्चरन् ।

आत्मवश्यैर्विधेयात्मा प्रसादमधिगच्छति ॥६४॥

रागद्वेषवियुक्तं , तु , विषयान् , इन्द्रिये , चरन्

आत्मवश्यै , विधेयात्मा , प्रसादम् , अधिगच्छति ॥ ६४ ॥

तु	= परन्तु	इन्द्रियैः	= इन्द्रियोद्धार
विधेयात्मा	= { स्वाधीन	विषयान्	= विषयोक्तो
	{ अन्त करण-	चरन्	= भोगना हुआ
	{ वाला (पुरुष)		
रागद्वेष-		प्रसादम्	= { अन्त करणकी
वियुक्तैः	= { रागद्वेषमे रहित		{ प्रसन्नता अर्थात्
			{ प्रसन्नताके
आत्मवश्यैः	= { अपने वशमे	अधि-	
	{ की हुई	गच्छति	= प्राप्त होता है

। ,] प्रसादे सर्वदुःखानां हानिरस्योपजायते ।

प्रसन्नचेतसो ह्याशु बुद्धिः पर्यवतिष्ठते ॥६५॥

प्रसादे, सर्वदुःखानाम्, हानि, अम्य, उपजायते,
प्रसन्नचेतस, हि, आशु, बुद्धि, पर्यवतिष्ठते ॥६५॥

और—

	(उस)	प्रसन्नचेतसः = { प्रसन्नचित्त- वाले पुरुषकी
प्रसादे	= { निर्मलताके होनेपर	
अस्य	= इमके	बुद्धिः = बुद्धि
सर्वदुःखा-	= { सपूर्ण	आशु = शीघ्र
नाम्	= { दु खोंका	हि = ही
हानि	= अभाव	
उपजायते	= हो जाता है	पर्यवतिष्ठते = { अच्छी प्रकार स्थिर हो जाती है
	(और उस)	

साधनरहित नास्ति बुद्धिरयुक्तस्य न चायुक्तस्य भावना ।
पुरुषको आस्ति न चाभावयतः शान्तिरशान्तस्य कुतः सुखम् ॥
यना, शान्ति और सुखकी न, अस्ति, बुद्धि, अयुक्तस्य, न, च, अयुक्तस्य, भावना,
अप्राप्ति । न, च, अभावयत, शान्ति, अशान्तस्य, कुत, सुखम् ॥६६॥

और हे भर्जुन—

अयुक्तस्य	= { साधनरहित पुरुषके (अन्त करणमे)	च = और (उस) अयुक्तस्य = अयुक्तके (अन्त करणमे)
बुद्धि.	= श्रेष्ठ बुद्धि	भावना = आस्तिकभाव भी
न	= नहीं	न = नहीं होता है
अस्ति	= होती है	(और)

अभावयतः	= { विना आस्तिक- भाववाले पुरुषको	अगान्तस्य	= { (फिर) शान्तिरहित पुरुषको
शान्तिः	= शान्ति	सुखम्	= सुख
च	= भी	कुतः	= कैसे
न	= नहीं (होती)		(हो सकता है)

नीमाके दृष्टान- इन्द्रियाणां हि चरतां यन्मनोऽनु विधीयते ।

मे वगमे न का

इन्द्रियोऽना

इन्द्रिये विचलित

प्रिय जाने वा

पभन ।

तदस्य हरति प्रज्ञां वायुर्नावमिवाम्भसि ॥६७॥

इन्द्रियाणाम्, हि. चरताम्, यत्, मन, अनु, विधीयते,

तत्, अस्य, हरति प्रज्ञाम्, वायु, नावम्, इव, अम्भसि ॥६७॥

हि	= क्योकि	यत्	= जिम् (इन्द्रियके)
अम्भसि	= जलमे	अनु	= नाव
वायुः	= वायु	मनः	= मन
नावम्	= नावको	विधीयते	= राना र
इव	= जेमे	तत्	= वट
	(हर लेना		(एक ही इन्द्रिय)
	ह, वेमे ही		
	प्रियोमे)	अस्य	= { मन (अनुक्त)
			{ पुरुषको
चरताम्	= विचरती हुई	प्रज्ञाम्	= इन्द्रियो
इन्द्रियाणाम्	= { इन्द्रियोके	हरति	= हटाने का नीती है
	{ वीचमे		

निरुद्धि पुरुष- तस्माद्यस्य महाबाहो निगृहीतानि सर्वशः ।
 के लक्षणों में इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥
 प्रधानता । तस्मात्, यस्य, महाबाहो, निगृहीतानि, सर्वशः,
 इन्द्रियाणि, इन्द्रियार्थेभ्यः, तस्य, प्रज्ञा, प्रतिष्ठिता ॥ ६८ ॥

तस्मात्	= इससे	निगृहीतानि =	{ वश में की
महाबाहो	= हे महाबाहो		{ हुई होती हैं
यस्य	= जिस पुरुषकी		
इन्द्रियाणि	= इन्द्रिया	तस्य	= उसकी
सर्वशः	= सब प्रकार	प्रज्ञा	= बुद्धि
इन्द्रियार्थेभ्यः =	{ इन्द्रियोंके विषयोंसे	प्रतिष्ठिता	= स्थिर होती है

ध्यानियोंके या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी ।
 निश्चय परमा- यस्या जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः ॥
 तत्त्वके अभाव या, निशा, सर्वभूतानाम्, तस्याम्, जागर्ति, संयमी,
 के यस्याम्, जाग्रति, भूतानि, सा, निशा, पश्यत, मुने ॥ ६९ ॥
 निश्चय सृष्टि- और हे अर्जुन-
 के अभाव का निरूपण ।

सर्वभूतानाम् =	{ संपूर्ण भूत प्राणियोंके लिए	तस्याम् =	{ उस नित्य शुद्ध बोधस्वरूप परमानन्दमें (भगवत्की प्राप्त हुआ)
या	= जो		
निशा	= रात्रि है		

संयमी = योगी पुरुष

जागर्ति = जागता है

(और)

यस्याम् = { जिम नाशवान्
क्षणभङ्गुर
ग्रामाग्निक सुखमे

भृतानि = सब भृत प्राणी

जाग्रति = जागते हैं

पश्यतः = { तत्त्वको
जाननेवाले

मुनेः = मुनिके लिये

मा = वह

निशा = रात्रि है

समुद्रके दृष्टान्त-
में निष्काशी
परपरा सदिशा

आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं

समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत् ।

तद्वत्कामा यं प्रविशन्ति सर्वे

स शान्तिमाप्नोति न कामकामी ॥७०॥

आपूर्यमाणम् अचलप्रतिष्ठम्, समुद्रम्, आप. प्रविशन्ति,
यद्वत् तद्वत्, कामा यम्. प्रविशन्ति. सर्वे, य, शान्तिम्,
आप्नोति न. कामकामी ॥७०॥

धौर-

यद्वत् = जमे

(उमयो चलायमान

आपूर्यमाणम् = { सब ओरमे
परिपूर्ण

न करते हुए ही)

अचलप्रतिष्ठम् = { अचल
प्रतिष्ठावाले

प्रविशन्ति = समा जाते हैं

तद्वत् = वैसे ही

समुद्रम् = समुद्रके प्रति

आपः = { जित
जाना नदियो- यम्
वे, जल

= { जित
(त्रिदुहि)
परपरे प्रति

सर्वे = सपूर्ण
 कामाः = भोग
 (किसी प्रकारका
 विकार उत्पन्न
 किये बिना ही)

प्रविशन्ति = समा जाते हैं

सः = वह (पुरुष)
 शान्तिम् = परम शान्तिको
 आप्नोति = प्राप्त होता है
 न = न कि
 कामकामी = { भोगोंको
 चाहनेवाला

संपूर्ण कामना विहाय कामान्यः सर्वान्पुमांश्चरति निःस्पृहः ।
 और अहता, निर्ममो निरहंकारः स शान्तिमधिगच्छति ॥
 ममताके त्यागसे विहाय, कामान्, य, सर्वान्, पुमान्, चरति, नि स्पृह,
 परम शान्तिको निर्मम, निरहकार, स, शान्तिम्, अधिगच्छति ॥७१॥
 प्राप्ति ।

क्योंकि—

यः = जो
 पुमान् = पुरुष
 सर्वान् = सपूर्ण
 कामान् = कामनाओंको
 विहाय = त्यागकर
 निर्ममः = ममतारहित
 (और)

निरहंकारः = अहकाररहित
 निःस्पृहः = { स्पृहारहित
 हुआ
 चरति = वर्तता है
 सः = वह
 शान्तिम् = शान्तिको
 अधिगच्छति = प्राप्त होता है

शान्तिस्थिति
 मदिमा ।

एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ नैनां प्राप्य विमुह्यति ।

स्थित्वास्यामन्तकालेऽपि ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति ॥

एषा, ब्राह्मी, स्थिति, पार्थ, न, एनाम्, प्राप्य, विमुह्यति,
 स्थित्वा, अस्याम्, अन्तकाले, अपि, ब्रह्मनिर्वाणम्, ऋच्छति । ७२ ।

पार्थ = हे अर्जुन ,
 एषा = यह

ब्राह्मी = { ब्रह्मको प्राप्त
 हुए पुरुषकी

स्थितिः	= स्थिति है	अपि	= भी
एनाम्	= इसको	अस्याम्	= इस निष्ठामें
प्राप्य	= प्राप्त होकर	स्थित्वा	= स्थित होकर
न	= { मोहित नहीं	ब्रह्मनिर्वाणम्	= ब्रह्मानन्दको
विमुह्यति	= { होना है (और)	ऋच्छति	= { प्राप्त हो
अन्तकाले	= अन्तकालमें		= { जाता है

ॐ तत्समिदं श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्याया योगशास्त्रे
श्रीकृष्णार्जुनसंवादे सांख्ययोगो नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥

अथ तृतीयोऽध्यायः

प्रधान विषय—१ मे ८ तक ज्ञानयोग और निष्काम कर्मयोगके अनुसार
अनात्मताभावसे नियत कर्म करनेकी श्रेष्ठताका निरूपण । (९-१६)
यथादि कर्म करनेकी आवश्यकताका निरूपण । (१७-२४) ज्ञानवान्
और भगवान्के लिये भी लोकसंग्रहार्थ कर्म करनेकी आवश्यकता ।
(२५-३०) अज्ञानी और ज्ञानवाकके लक्षण तथा रागद्वेषसे रहित
विपर कर्म करनेके लिये प्रेरणा । (३१-४३) कामके निरोधका विषय ।

अर्जुन उवाच

ज्यायसी चेत्कर्मणस्ते मता बुद्धिर्जनार्दन ।

तत्किं कर्मणि घोरे मां नियोजयसि केशव ॥

ज्यायसी, चेत्, कर्मण, ते, मता, बुद्धि, जनार्दन,

तत्, किम्, कर्मणि, घोरे, माम्, नियोजयसि, केशव ॥१॥

इसपर अर्जुनने प्रश्न किया कि-

जनार्दन - हे जनार्दन ! चेत् = यदि

कर्मणः	= कर्मोंकी अपेक्षा	केशव	= हे केशव
बुद्धिः	= ज्ञान	माम्	= मुझे
ते	= आपके	घोरे	= भयङ्कर
ज्यायसी	= श्रेष्ठ	कर्मणि	= कर्ममें
मता	= मान्य है	किम्	= क्यों
तत्	= तो फिर	नियोजयसि	= लगाते हैं

[„] व्यामिश्रेणेव वाक्येन बुद्धिं मोहयसीव मे ।

तदेकं वद निश्चित्य येन श्रेयोऽहमाप्नुयाम् ॥

व्यामिश्रेण, इव, वाक्येन, बुद्धिम्, मोहयसि, इव, मे,
तत्, एकम्, वद, निश्चित्य, येन, श्रेय, अहम्, आप्नुयाम् ॥२॥

तथा आप—

व्यामिश्रेण	} = मिले हुएसे	तत्	= उस
इव		एकम्	= एक (वात) को
वाक्येन	= वचनसे	निश्चित्य	= निश्चय करके
मे	= मेरी	वद	= कहिये (कि)
बुद्धिम्	= बुद्धिको	येन	= जिससे
मोहयसि	= { मोहितसी करते हैं	अहम्	= मैं
इव		श्रेय.	= कल्याणको
	(इसलिये)	आप्नुयाम्	= प्राप्त होऊ

श्रीभगवानुवाच

लोकैस्मिन्द्विविधा निष्ठा पुरा प्रोक्ता मयानघ ।

हे दो प्रह्वरद

ज्ञानयोगेन सांख्यानां कर्मयोगेन योगिनाम् ॥

लोके, अस्मिन्, द्विविधा, निष्ठा, पुरा, प्रोक्ता, मया, अनघ,
ज्ञानयोगेन, सांख्यानाम्, कर्मयोगेन, योगिनाम् ॥३॥

इस प्रकार अर्जुनके पूछनेपर भगवान् श्रीकृष्ण महाराज बोले—

अनघ	= हे निष्पाप (अर्जुन)	पुरा	= पहिले
अस्मिन्	= इस	प्रोक्ता	= कही गयी है
लोके	= लोकमे	सांख्यानाम्	= ज्ञानियोकी
द्विविधा	= दो प्रकारकी	ज्ञानयोगेन	= ज्ञानयोगसे † (और)
निष्ठा	= निष्ठा+	योगिनाम्	= योगियोंकी
मया	= मेरेद्वारा	कर्मयोगेन	= { निष्काम कर्मयोगमे ‡

भावत्प्राप्तिके लिये कर्मोंके त्यागका निषेध । न कर्मणामनारम्भान्नैष्कर्म्यं पुरुषोऽश्नुते ।
न च संन्यसनादेव सिद्धिं समधिगच्छति ॥ ४ ॥

न, कर्मणाम्, अनारम्भात्, नैष्कर्म्यम्, पुरुषः, अश्नुते,
न, च, संन्यसनात्, एव, सिद्धिम्, समधिगच्छति ॥४॥

* साधनकी परिपक्व अवस्था अर्थात् पराकाष्ठाका नाम 'निष्ठा' है ।

† मायामे उत्पन्न हुए सपूर्ण गुण ही गुणोंमें बर्तते हैं, ऐसे समझकर तथा मन, इन्द्रिय और शरीरद्वारा होनेवाली सपूर्ण क्रियाओंमें कर्तापनके अभिमानसे रहित होकर सर्वव्यापी सच्चिदानन्दधन परमात्मामें एकीभावसे स्थित रहनेका नाम 'ज्ञानयोग' है, इसीको 'संन्यास' 'सांख्ययोग' इत्यादि नामोंसे कहा है ।

‡ फल और आसक्तिको त्यागकर भगवत्-आज्ञानुसार केवल भगवत्-अर्थ समत्वबुद्धिसे कर्म करनेका नाम 'निष्काम कर्मयोग' है, इसीको 'समत्वयोग' 'बुद्धियोग' 'कर्मयोग' 'तदर्थकर्म' 'मदर्थकर्म' 'मत्कर्म' इत्यादि नामोंसे कहा है ।

परन्तु किसी भी मार्गके अनुसार कर्मोंको स्वरूपसे त्यागनेकी आवश्यकता नहीं है क्योंकि—

पुरुषः	= मनुष्य	न	= न
न	= न (तो)	संन्यसनात्	= { कर्मोंको
कर्मणाम्	= कर्मोंके	एव	= { त्यागनेमात्रसे
अनारम्भात्	= न करनेसे	सिद्धिम्	= { भगवत्-
नैष्कर्म्यम्	= निष्कर्मताको*		= { साक्षात्कार-
अश्नुते	= प्राप्त होता है	समधि-	= { रूप सिद्धिको
च	= और	गच्छति }	= प्राप्त होता है

बिना कर्म किये न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत् ।
 क्षणमात्र भी कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः ॥ ५ ॥
 किमीसे नहीं

रहा जाने का न, हि, कश्चित्, क्षणम्, अपि, जातु, तिष्ठति, अकर्मकृत्,
 कर्मन । कार्यते, हि, अवश, कर्म, सर्व, प्रकृतिजै, गुणै ॥५॥

तथा सर्वथा कर्मोंका स्वरूपसे त्याग हो भी नहीं सकता—

हि	= क्योंकि	न	= नहीं
कश्चित्	= कोई भी (पुरुष)	तिष्ठति	= रहता है
जातु	= किसी कालमें	हि	= नि सन्देह
क्षणम्	= क्षणमात्र	सर्वः	= सब (ही पुरुष)
अपि	= भी	प्रकृतिजैः	= { प्रकृतिसे
अकर्मकृन्	= बिना कर्म किये		= { उत्पन्न हुए

* त्रिन अवस्थाओं प्राप्त हुए पुरुषके कर्म, अकर्म हो जाते हैं अर्थात्
 गन् उत्पन्न नहीं कर सकते, उन अवस्थाका नाम 'निष्कर्मता' है ।

गुणैः	= गुणोंद्वारा	कर्म	= कर्म
अवशः	= परवश हुए	कार्यते	= करते हैं

मिथ्याचारी कर्मेन्द्रियाणि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरन् ।

पुरुषका लक्षण ।

इन्द्रियार्थान्विमूढात्मा मिथ्याचारः स उच्यते ॥

कर्मेन्द्रियाणि, संयम्य, यः, आस्ते, मनसा, स्मरन्,
इन्द्रियार्थान्, विमूढात्मा, मिथ्याचारः, सः, उच्यते ॥६॥

ह्रस्वलिङ्गे-

यः	= जो	मनसा	= मनसे
विमूढात्मा	= मूढ़बुद्धि पुरुष	स्मरन्	= चिन्तन करता
कर्मेन्द्रियाणि	= कर्मेन्द्रियोंको	आस्ते	= रहता है
	(हठसे)	सः	= वह
संयम्य	= रोककर	मिथ्याचारः	= { मिथ्याचारी अर्थात् दम्भी
इन्द्रियार्थान्	= { इन्द्रियोंके भोगोंको	उच्यते	= कहा जाता है

निष्काम कर्म- यस्त्विन्द्रियाणि मनसा नियम्यारभतेऽर्जुन ।

जोगीकी प्रशंसा ।

कर्मेन्द्रियैः कर्मयोगमसक्तः स विशिष्यते ॥

य, तु, इन्द्रियाणि, मनसा, नियम्य, आरभते, अर्जुन,
कर्मेन्द्रियैः, कर्मयोगम्, असक्तः, स, विशिष्यते ॥ ७ ॥

तु	= और	मनसा	= मनसे
अर्जुन	= हे अर्जुन	इन्द्रियाणि	= इन्द्रियोंको
यः	= जो (पुरुष)	नियम्य	= वशमें करके

असक्तः = अनासक्त हुआ

कर्मेन्द्रियैः = कर्मेन्द्रियोसे

कर्मयोगम् = कर्मयोगका

आरभते = { आचरण करता है

सः = वह

विशिष्यते = श्रेष्ठ है

शरीरनियत कर्म करनेके लिये

नियतं कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः ।

शरीरयात्रापि च ते न प्रसिद्धयेदकर्मणः ॥

नियतम्, कुरु, कर्म, त्वम्, कर्म, ज्याय, हि, अकर्मण,

शरीरयात्रा, अपि, च, ते, न, प्रसिद्धयेत्, अकर्मण ॥ ८ ॥

इसलिये-

त्वम् = तू

कर्म = कर्म करना

नियतम् = { शास्त्रविधिसे नियत किये हुए

ज्यायः = श्रेष्ठ है

च = तथा

कर्म = { स्वधर्मरूप कर्मको

अकर्मणः = कर्म न करनेसे

ते = तेरा

कुरु = कर

शरीरयात्रा = शरीरनिर्वाह

हि = क्योंकि

अपि = भी

अकर्मणः = { कर्म न करनेकी अपेक्षा

न = नहीं

प्रसिद्धयेत् = सिद्ध होगा

यदर्थं कर्म

यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः ।

तदर्थं कर्म कौन्तेय मुक्तसङ्गः समाचर ॥ ९ ॥

यज्ञार्थात्, कर्मण, अन्यत्र, लोक, अयम्, कर्मबन्धन,

तदर्थम्, कर्म, कौन्तेय, मुक्तसङ्ग, समाचर ॥ ९ ॥

और हे अर्जुन ! बन्धनके भयसे भी कर्मोंका त्याग करना योग्य नहीं है क्योंकि—

यज्ञार्थात्	= { यज्ञ अर्थात् विष्णुके निमित्त किये हुए	कौन्तेय	= हे अर्जुन
कर्मणः	= कर्मके सिवाय	मुक्तसङ्गः	= { आसक्तिसे रहित हुआ
अन्यत्र	= अन्य कर्ममें (लगा हुआ ही)	तदर्थम्	= { उस परमेश्वरके निमित्त
अयम्	= यह	कर्म	= कर्मका
लोकः	= मनुष्य	समाचर	= { भली प्रकार आचरण कर
कर्मबन्धनः	= { कर्मोंद्वारा बधता है		

प्रजापतिकी

आज्ञानुसार कर्म
करनेसे परम
श्रेयकी प्राप्ति ।

सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः ।

अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक् ॥१०॥

सहयज्ञा, प्रजा, सृष्ट्वा, पुरा, उवाच, प्रजापति,

अनेन, प्रसविष्यध्वम्, एषः, वः, अस्तु, इष्टकामधुक् ॥१०॥

तथा कर्म न करनेसे तूं पापको भी प्राप्त होगा क्योंकि—

प्रजापतिः	= प्रजापति (ब्रह्मा) ने	प्रस-	= { वृद्धिको प्राप्त
पुरा	= कल्पके आदिमें	विष्यध्वम्	= { होवो (और)
सहयज्ञाः	= यज्ञसहित	एषः	= यह यज्ञ
प्रजाः	= प्रजाको	वः	= तुमलोगोंको
सृष्ट्वा	= रचकर	इष्टकामधुक्	= { इच्छित कामनाओंके देनेवाला
उवाच	= कहा कि	अस्तु	= होवे
अनेन	= इस यज्ञद्वारा (तुमलोग)		

[॥] देवान्भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः ।

परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ ॥११॥

देवान्, भावयत, अनेन, ते, देवा, भावयन्तु, वः,

परस्परम्, भावयन्त, श्रेय, परम्, अवाप्स्यथ ॥११॥

तथा तुमलोग-

अनेन	= इस यज्ञद्वारा	(एवम्)	= इस प्रकार
देवान्	= देवताओकी	परस्परम्	= आपसमें
भावयत	= उन्नति करो		(कर्तव्य
	(और)		समझकर)
ते	= वे	भावयन्तः	= उन्नति करते हुए
देवाः	= देवतालोग	परम्	= परम
वः	= तुमलोगोकी	श्रेयः	= कल्याणको
भावयन्तु	= उन्नति करे	अवाप्स्यथ	= प्राप्त होवोगे

यज्ञभाविता इष्टान्भोगान्हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञभाविताः ।

तैर्दत्तानप्रदायैभ्यो यो भुङ्क्तेस्तेन एव सः ॥१२॥

इष्टान्, भोगान्, हि, व, देवा, दास्यन्ते, यज्ञभाविता,

तैर् दत्तान्, अप्रदाय, एभ्य, य, भुङ्क्ते, स्तेन, एव, स ॥१२॥

तथा-

यज्ञभाविता	= { यज्ञद्वारा	इष्टान्	= प्रिय
	{ वदाये हुए	भोगान्	= भोगोको
देवा	= देवतालोग	दास्यन्ते	= देगे
व	= तुम्हारे लिये	तै	= उनके द्वारा
	(बिना मागे ही)	दत्तान्	= दिये हुए भोगोको

यः	= जो पुरुष	भुङ्क्ते	= भोगता है
एभ्यः	= इनके लिये	सः	= वह
अप्रदाय	= बिना दिये	एव	= निश्चय
हि	= ही	स्तेनः	= चोर है

यज्ञसे बचा हुआ यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैः ।
 अन्न खानेवालों-
 की प्रशंसा और भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात् ॥१३॥
 इनके विपरीत यज्ञशिष्टाशिनः सन्तः, मुच्यन्ते, सर्वकिल्बिषे,
 करनेवालों की भुञ्जते, ते, तु, अघम्, पापा, ये, पचन्ति, आत्मकारणात् ॥१३॥
 निन्दा ।

कारण कि-

यज्ञशिष्टाशिनः	= { यज्ञसे शेष बचे हुए अन्नको खानेवाले	पापाः	= पापीलोग
सन्तः	= श्रेष्ठ पुरुष	आत्म- कारणात्	= { अपने (शरीर- पोषणके) लिये ही
सर्वकिल्बिषैः	= सब पापोंसे	पचन्ति	= पकाते हैं
मुच्यन्ते	= छूटते हैं (और)	ते	= वे
ये	= जो	तु	= तो
		अघम्	= पापको ही
		भुञ्जते	= खाते हैं

वृद्धिचक्रका अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः ।

उपन ।

यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः ॥१४॥

अन्नात्, भवन्ति, भूतानि, पर्जन्यात्, अन्नसम्भवः,
 यज्ञात्, भवति, पर्जन्य, यज्ञ, कर्मसमुद्भवः ॥१४॥

भृतानि = सपूर्ण प्राणी
 अन्नान् = अन्नसे
 भवन्ति = उत्पन्न होते हैं
 (और)

अन्नमन्मयः = अन्नकी उत्पत्ति
 पर्जन्यान् = वृष्टिमे होती है
 (और)

पर्जन्यः = वृष्टि
 यज्ञात् = यज्ञसे
 भवति = होती है
 (और वह)

यज्ञः = यज्ञ
 कर्मसमुद्भवः = { कर्मोंसे उत्पन्न
 होनेवाला है

कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि ब्रह्माक्षरसमुद्भवम् ।
 तस्मात्सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम् ॥१५॥

कर्म ब्रह्मोद्भवम्, विद्धि, ब्रह्म, अक्षरसमुद्भवम्,
 तस्मात्, सर्वगतम्, ब्रह्म, नित्यम्, यज्ञे, प्रतिष्ठितम् ॥१५॥

तथा उस-

कर्म = कर्मको (तू) तस्मात् = इससे
 ब्रह्मोद्भवम् = { वेदसे उत्पन्न सर्वगतम् = सर्वव्यापी
 विद्धि = { ज्ञा (और) ब्रह्म = { परम अक्षर
 ब्रह्म = वेद नित्यम् = सदा ही
 अक्षर- = { अप्रिनाशी यज्ञे = यज्ञमें
 समुद्भवम् = { (परमात्मा) मे प्रतिष्ठितम् = प्रतिष्ठित है
 उत्पन्न हुआ है

एवं प्रवर्तितं चक्रं नानुवर्तयतीह यः ।
 अवायुरिन्द्रियारामो मोघं पार्थ स जीवति ॥१६॥

एवम्, प्रवर्तितम्, चक्रम्, न, अनुवर्तयति, इह, यः,
अघायु, इन्द्रियाराम, मोघम्, पार्थ, स, जीवति ॥१६॥

पार्थ	= हे पार्थ	कर्मोंको नहीं
यः	= जो पुरुष	करता है)
इह	= इस लोकमें	सः = वह
एवम्	= इस प्रकार	इन्द्रियारामः = { इन्द्रियोंके सुखको भोगनेवाला
प्रवर्तितम्	= चलाये हुए	
चक्रम्	= सृष्टिचक्रके	
न	{ अनुसार नहीं वर्तता है	अघायुः = पापआयु
अनुवर्तयति		(पुरुष)
	(अर्थात् शास्त्र- अनुसार	मोघम् = व्यर्थ ही
		जीवति = जीता है

आत्मशान्तिके
लिये कर्तव्यका
ब्रह्म ।

यस्त्वात्मरतिरेव स्यादात्मतृप्तश्च मानवः ।

आत्मन्येव च संतुष्टस्तस्य कार्यं न विद्यते ॥१७॥

य, तु, आत्मरति, एव, स्यात्, आत्मतृप्त, च, मानव,
आत्मनि, एव, च, संतुष्ट, तस्य, कार्यम्, न, विद्यते ॥ १७ ॥

तु	= परन्तु	आत्मनि	= आत्मा में
यः	= जो	एव	= ही
मानवः	= मनुष्य	संतुष्टः	= संतुष्ट
आत्मरतिः	{ आत्मा ही में प्रीतिवाला	स्यात्	= होवे
एव		तस्य	= उसके लिये
च	= और	कार्यम्	= कोई कर्तव्य
आत्मतृप्तः	= आत्मा ही में तृप्त	न	= नहीं
च	= तथा	विद्यते	= है

कर्म करने और
न करनेमें जानी
की नि म्यार्थना-
का कथन ।

नैव तस्य कृतेनार्थो नाकृतेनेह कश्चन ।

न चास्य सर्वभूतेषु कश्चिदर्थव्यपाश्रयः ॥१८॥

न. एव, तस्य, कृतेन, अर्थ, न, अकृतेन, इह, कश्चन,

न, च, अस्य, सर्वभूतेषु, कश्चित्, अर्थव्यपाश्रय. ॥१८॥

क्योंकि—

इह	= इस ससारमें		(प्रयोजन)
तस्य	= उस (पुरुष) का	न	= नहीं है
कृतेन	= किये जानेसे	च	= तथा
एव	= भी (कोई)	अस्य	= इसका
अर्थः	= प्रयोजन	सर्वभूतेषु	= सपूर्ण भूतोंमें
न	= नहीं है (और)	कश्चित्	= कुछ भी
अकृतेन	= न किये जानेसे	अर्थ-	= { स्तार्थका
	(भी)	व्यपाश्रयः	= { सबन्ध
कश्चन	= कोई	न	= नहीं है

तो भी उसमें द्वारा केवल लोकहितार्थ कर्म किये जाते हैं ।

तस्मादमक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर ।

अमक्तो ह्याचरन्कर्म परमाप्नोति पूरुषः ॥१९॥

अमक्त, मतनम्, कार्यम्, कर्म, ममाचर,

हि, आचरन्, कर्म, परम, आप्नोति, पूरुष ॥१९॥

तस्मान्	= उसमें (न)	कर्म	= कर्मका
अमक्त	= अनामक्त हुआ	ममाचर	= { अच्छी प्रकार
मतनम्	= निगन्त		= { आचरण कर
कार्यम्	= करनेय	हि	= क्योंकि

तत्	= उस	प्रमाणम्	= प्रमाण
तत्	= उसके	कुरुते	= कर देता है
एव	= ही	लोकः	= लोग (भी)
	(अनुसार वर्तते हैं)	तत्	= उसके
मः	= वह पुरुष	अनुवर्तते	= { अनुसार वर्तते हैं*
यन्	= जो कुछ		

न मे पार्थास्ति कर्तव्यं त्रिषु लोकेषु किञ्चन ।

नान्वाप्तमवाप्तव्यं वर्त एव च कर्मणि ॥२२॥

न, मे पार्थ, अस्ति, कर्तव्यम्, त्रिषु, लोकेषु, किञ्चन,

न अन्नाप्तम्, अवाप्तव्यम्, वर्ते, एव, च, कर्मणि ॥२२॥

इमलिये—

पार्थ	= हे अर्जुन (यगपि)	(किञ्चित् भी)
मे	= मुझे	
त्रिषु	= तीनों	अवाप्तव्यम् = { प्राप्त होने योग्य वस्तु
लोकेषु	= लोकोंमें	अन्नाप्तम् = अप्राप्त
किञ्चन	= कुछ भी	न = नहीं है
कर्तव्यम्	= कर्तव्य	(तो भी मे)
न	= नहीं	कर्मणि = कर्ममें
अस्ति	= है	एव = ही
च	= तथा	वर्ते = वर्तता है

* तत् किं न एव तत्र ते पश्यन् लोक शब्द समुदायान्न दोषमे
न न वदन्तस्त्रिषु लोकेषु गतः ।

„] यदि ह्यहं न वर्तेयं जातु कर्मण्यतन्द्रितः ।

मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः ॥

यदि, हि, अहम्, न, वर्तेयम्, जातु, कर्मणि, अतन्द्रित, मम, वर्त्म, अनुवर्तन्ते, मनुष्या, पार्थ, सर्वश ॥२३॥

हि	= क्योंकि	पार्थ	= हे अर्जुन
यदि	= यदि	सर्वशः	= सब प्रकारसे
अहम्	= मैं	मनुष्याः	= मनुष्य
अतन्द्रितः	= सावधान हुआ	मम	= मेरे
जातु	= कदाचित्	वर्त्म	= वर्तावके
कर्मणि	= कर्ममें	अनुवर्तन्ते=	{ अनुसार वर्तते है अर्थात् वर्तने लग जाय
न	= न		
वर्तेयम्	= वर्त (तो)		

„] उत्सीदेयुरिमे लोका न कुर्यां कर्म चेदहम् ।

संकरस्य च कर्ता स्यामुपहन्यामिमाः प्रजाः ॥

उत्सीदेयु, इमे, लोका, न, कुर्याम्, कर्म, चेत्, अहम्, संकरस्य, च, कर्ता, स्याम्, उपहन्याम्, इमा, प्रजा ॥ २४ ॥

तथा—

चेत्	= यदि	इमे	= यह सब
अहम्	= मैं	लोकाः	= लोक
कर्म	= कर्म	उत्सीदेयुः	= भ्रष्ट हो जायं
न	= न	च	= और (मैं)
कुर्याम्	= करू (तो)	संकरस्य	= वर्णसंकरका

कर्ता	= करनेवाला	प्रजाः	= प्रजाको
स्याम्	= होऊ (तथा)	उपहन्याम्	= { हनन करू अर्थात् मार्गने- वाला बनू
इमाः	= इस मारी		

मत्ताः कर्मण्यविद्वांसो यथा कुर्वन्ति भारत ।

कुर्याद्विद्वांस्तथासक्तश्चिकीर्षुर्लोकसंग्रहम् ॥२५॥

मत्ता , कर्मणि , अविद्वान् , यथा , कुर्वन्ति , भारत ,
कुर्यात् , विद्वान् तथा , असक्त , चिकीर्षु , लोकसंग्रहम् ॥२५॥

इसलिये—

भारत	= हे भारत	असक्तः	= अनासक्त हुआ
कर्मणि	= कर्ममें	विद्वान्	= विद्वान् (भी)
मत्ता	= आसक्त हुए	लोक-	} = लोकशिक्षाको
अविद्वान्	अज्ञानीजन	संग्रहम्	
यथा	= जेमे	चिकीर्षुः	= चाहता हुआ
कुर्वन्ति	कर्म करने हे	कुर्यात्	= कर्म करे
तथा	मे ही		

न बुद्धिभेदं जनयेदज्ञाना कर्मसङ्गिनाम् ।

जोषयेन्मर्वकर्माणि विद्वान्युक्तः समाचरन् ॥

न बुद्धिभेदम् जनयत् , अज्ञानाम् , कर्मसङ्गिनाम् ,
जोषयेन् सर्वकर्माणि विद्वान् , युक्त , समाचरन् ॥२६॥

तथा—

विद्वान्	= ज्ञानी पुन्य	अज्ञानाम्	= अज्ञानियोंकी
कर्म-	को चर्चित कि	बुद्धिभेदम्	= { बुद्धिमें भ्रम अर्थात् कर्मोंमें अश्रद्धा
सङ्गिनाम्	{ कर्मोंमें आसक्ति-		

न जनयेत् = उत्पन्न न करे (किन्तु स्वयम्)	समाचरन् = { अच्छी प्रकार करता हुआ (उनसे भी वैसे ही)
युक्तः = { परमात्माके स्वरूपमें स्थित हुआ (और)	
सर्वकर्माणि = सब कर्मोंको	जोषयेत् = करावे

मूढ पुरुषका

प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः ।

क्षण ।

अहंकारविमूढात्मा कर्ताहमिति मन्यते ॥२७॥

प्रकृते , क्रियमाणानि , गुणै , कर्माणि , सर्वश ,
अहंकारविमूढात्मा , कर्ता , अहम् , इति , मन्यते ॥२७॥

और हे अर्जुन ! वास्तवमें—

सर्वशः = सपूर्ण	अहंकार-विमूढात्मा = { अहंकारसे मोहित हुए अन्त करण- वाला पुरुष
कर्माणि = कर्म	
प्रकृतेः = प्रकृतिके	
गुणैः = गुणोंद्वारा	अहम् = मैं
क्रियमाणानि = किये हुए हैं	कर्ता = कर्ता हूँ
(तो भी)	इति = ऐसे
	मन्यते = मान लेता है

तत्त्ववेत्ता पुरुषका
रक्षण ।

तत्त्ववित्तु महाबाहो गुणकर्मविभागयोः ।

गुणा गुणेषु वर्तन्त इति मत्वा न सज्जते ॥२८॥

तत्त्ववित् , तु , महाबाहो , गुणकर्मविभागयो ,
गुणा , गुणेषु , वर्तन्ते , इति , मत्वा , न , सज्जते ॥२८॥

तु = परन्तु | महाबाहो = हे महाबाहो

गुणकर्म-
विभागयोः = { गुणविभाग
और कर्म-
विभागके*
तत्त्ववित् = { तत्त्वको†
जाननेवाला
(ज्ञानी पुरुष)
गुणाः = संपूर्ण गुण

गुणेषु
वर्तन्ते
इति
मत्वा
न
सज्जते
सज्जन्ते
= गुणोंमें
= वर्तते हैं
= ऐसे
= मानकर
= नहीं
= आसक्त होता है
गुणकर्मसु ।

अध्यानियोंको
कर्मोंसे चलाय-
मान करनेका
निषेध ।

प्रकृतेर्गुणसंमूढाः

तानकृत्स्नविदो मन्दान्कृत्स्नविन्न विचालयेत् ॥
प्रकृते, गुणसंमूढा, सज्जन्ते, गुणकर्मसु,
तान्, अकृत्स्नविद, मन्दान्, कृत्स्नवित्, न, विचालयेत् ॥२९॥
और-

प्रकृतेः = प्रकृतिके
गुण- = { गुणोंसे मोहित
संमूढाः = { हुए पुरुष
गुणकर्मसु = गुण और कर्मोंमें
सज्जन्ते = आसक्त होते हैं
तान् = उन
अकृत्स्न- = { अच्छी प्रकार न
विदः = { समझनेवाले

मन्दान् = मूर्खोंको
कृत्स्नवित् = { अच्छी प्रकार
जाननेवाला
(ज्ञानी पुरुष)
न विचालयेत् = { चलायमान
न करे

* त्रिगुणात्मक मायाके कायरूप पांच महाभूत और मन, बुद्धि,
अहंकार तथा पांच शानेन्द्रिया, पांच कर्मेन्द्रिया और शब्दादि पांच विषय
इन सबके समुदायका नाम 'गुणविभाग' है और इनकी परस्परकी चेष्टाओंका
नाम 'कर्मविभाग' है ।

† उपरोक्त 'गुणविभाग' और 'कर्मविभाग' से आत्माको पृथक् अर्थात्
निलेप जानना ही इनका तत्त्व जानना है ।

सपूर्ण कर्म मयि सर्वाणि कर्माणि संन्यस्याध्यात्मचेतसा ।

मगवान्में अर्पण निराशीर्निर्ममो भूत्वा युध्यस्व विगतज्वरः ॥३०॥

करके युद्ध करने-
को आशा ।

मयि, सर्वाणि, कर्माणि, संन्यस्य, अध्यात्मचेतसा,
निराशी, निर्मम, भूत्वा, युध्यस्व, विगतज्वर ॥३०॥

इसलिये हे अर्जुन ! तू—

अध्यात्म-	= { ध्याननिष्ठ	(और)
चेतसा	= { चित्तसे	
सर्वाणि	= सपूर्ण	निर्ममः = ममतारहित
कर्माणि	= कर्मोंको	भूत्वा = होकर
मयि	= मुझमें	विगतज्वरः = { सन्तापरहित
संन्यस्य	= समर्पण करके	{ (हुआ)
निराशीः	= आशारहित	युध्यस्व = युद्ध कर

भावक्षमिद्वान् ये मे मतमिदं नित्यमनुतिष्ठन्ति मानवाः ।

के अनुकूल
वर्तनेसे नुक्ति ।

श्रद्धावन्तोऽनसूयन्तो मुच्यन्ते तेऽपि कर्मभिः ॥३१॥

ये, मे, मतम्, इदम्, नित्यम्, अनुतिष्ठन्ति, मानवा,
श्रद्धावन्त, अनसूयन्त, मुच्यन्ते, ते, अपि, कर्मभि ॥३१॥

और हे अर्जुन—

ये	= जो कोई	नित्यम्	= सदा (ही)
अपि	= भी	मे	= मेरे
मानवाः	= मनुष्य	इदम्	= इस
अनसूयन्तः	= { दोषबुद्धिसे	मतम्	= मतके
	= { रहित	अनुतिष्ठन्ति	= { अनुसार
	(और)		= { वर्तते हैं
श्रद्धावन्तः	= श्रद्धासे युक्त हुए	ते	= वे पुरुष

कर्मभिः = मपूर्ण कर्मोंसे | मुच्यन्ते = छूट जाते हैं

भगवत्सिद्धान्त ये त्वेतदभ्यसूयन्तो नानुतिष्ठन्ति मे मतम् ।

के अनुकूल न

वर्तनेसे अथो-

गति ।

सर्वज्ञानविमूढांस्तान्विद्धि नष्टानचेतसः ॥३२॥

ये, तु, एतत्, अभ्यसूयन्त, न, अनुतिष्ठन्ति, मे, मतम्,

सर्वज्ञानविमूढान्, तान्, विद्धि, नष्टान्, अचेतस ॥३२॥

तु = और

ये = जो

अभ्यसूयन्तः = दोषदृष्टिवाले

अचेतसः = मूर्ख लोग

एतत् = इस

मे = मेरे

मतम् = मतके

न = { अनुसार

अनुतिष्ठन्ति = { नहीं वर्तते हैं

तान् = उन

सर्वज्ञान-विमूढान् = { सपूर्ण ज्ञानोंमें
मोहित
चित्तवालोको

(त)

नष्टान् = { कल्याणसे
भ्रष्ट हुए (ही)

विद्धि = जान

स्वामासकिक कर्मों सदृशं चेष्टते स्वस्याः प्रकृतेर्ज्ञानवानपि ।

की चेष्टामें प्रकृतिं यान्ति भूतानि निग्रहः किं करिष्यति ॥३३॥

प्रकृति की सदृशम्, चेष्टते, स्वस्या, प्रकृते, ज्ञानवान्, अपि,

प्रबलता ।

प्रकृतिम्, यान्ति, भूतानि, निग्रह, किम्, करिष्यति ॥३३॥

क्योंकि—

भूतानि = सभी प्राणी

प्रकृतिम् = प्रकृतिको

यान्ति = प्राप्त होते हैं

अर्थात् अपने स्वभावसे

परवश हुए कर्म करते हैं

ज्ञानवान् = ज्ञानवान्

अपि	= भी	(फिर इसमें किसीका)
स्वस्याः	= अपनी	निग्रहः = हठ
प्रकृतेः	= प्रकृतिके	किम् = क्या
सदृशम्	= अनुसार	करिष्यति = करेगा
चेष्टते	= चेष्टा करता है	

रागद्वेषके वशमें
दोनेका निषेध ।

इन्द्रियस्येन्द्रियस्यार्थे रागद्वेषौ व्यवस्थितौ ।

तयोर्न वशमागच्छेत्तौ ह्यस्य परिपन्थिनौ ॥३४॥

इन्द्रियस्य, इन्द्रियस्य, अर्थे, रागद्वेषौ, व्यवस्थितौ,
तयो, न, वशम्, आगच्छेत्, तौ, हि, अस्य, परिपन्थिनौ ॥३४॥

इसलिये मनुष्यको चाहिये कि—

इन्द्रियस्य	= इन्द्रिय	वशम्	= वशमे
इन्द्रियस्य	= इन्द्रियके	न	= नहीं
अर्थे	= अर्थमें	आगच्छेत्	= होवे
	अर्थात् सभी	हि	= क्योंकि
	इन्द्रियोके	अस्य	= इसके
	भोगोंमें	तौ	= वे दोनों (ही)

व्यवस्थितौ = स्थित (जो)

रागद्वेषौ = राग और द्वेष है

तयोः = उन दोनोंके

परिपन्थिनौ = { कन्याण-
मार्गमें विघ्न
करनेवाले
महान् शत्रु हैं

स्वधर्म पालनमें श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात् ।

कल्याण और स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः ॥३५॥

परधर्मसे हानि ।

श्रेयान्, स्वधर्म, विगुण, परधर्मात्, स्वनुष्ठितात्,

स्वधर्मे, निधनम्, श्रेय, परधर्म, भयावह ॥३५॥

इसलिये उन दोनोंको जीतकर सावधान हुआ स्वधर्मका आचरण करे क्योंकि—

स्वनुष्ठितात्	= { अच्छी प्रकार आचरण किये हुए	श्रेयान्	= अति उत्तम है
परधर्मात्	= दूसरेके धर्मसे	स्वधर्मे	= अपने धर्ममें
विगुणः	= गुणरहित	निधनम्	= मरना (भी)
(अपि)	= भी	श्रेयः	= कल्याणकारक है (और)
स्वधर्मः	= अपना धर्म	परधर्मः	= दूसरेका धर्म
		भयावहः	= भयको देनेवाला है

अर्जुन उवाच

बलात्कारसे अथ केन प्रयुक्तोऽयं पापं चरति पूरुषः ।
पाप करानेमें अनिच्छन्नपि वाष्णोय बलादिव नियोजितः ॥
कोन हेतु है इस विषयमें अर्जुन- अथ, केन, प्रयुक्त, अयम्, पापम्, चरति, पूरुष,
का प्रश्न । अनिच्छन्, अपि, वाष्णोय, बलात्, इव, नियोजित ॥३६॥

इसपर अर्जुनने पूछा कि—

वाष्णोय	= हे कृष्ण	अनिच्छन्	= न चाहता हुआ
अथ	= फिर	अपि	= भी
अयम्	= यह	केन	= किससे
पूरुषः	= पुरुष	प्रयुक्तः	= प्रेरित हुआ
बलात्	= बलात्कारसे	पापम्	= पापका
नियोजितः	= लगाये हुएके	चरति	= आचरण करता है
इव	= सदृश		

श्रीभगवानुवाच

बलात्कारसे
पाप कराने में
कामरूप हेतुका
कथन ।

काम एष क्रोध एष रजोगुणसमुद्भवः ।

महाशनो महापाप्मा विद्ध्येनमिह वैरिणम् ॥३७॥

काम , एष , क्रोध , एष , रजोगुणसमुद्भव ,

महाशन , महापाप्मा , विद्धि , एनम् , इह , वैरिणम् ॥३७॥

इस प्रकार अर्जुनके पूछनेपर श्रीकृष्ण महाराज बोले हे अर्जुन—

रजोगुण- = { रजोगुणसे
समुद्भवः = { उत्पन्न हुआ

एषः = यह

कामः = काम (ही)

क्रोधः = क्रोध है

एषः = यह (ही)

महाशनः = { महा अशन
अर्थात् अग्निके
सदृश भोगोंसे
(न तृप्त होनेवाला

(और)

महापाप्मा = बड़ा पापी है

इह = इस विषयमे

एनम् = इसको (ही)

(त)

वैरिणम् = वैरी

विद्धि = जान

कामरूप वैरीमे धूमेनाव्रियते वह्निर्यथादर्शो मलेन च ।

शन ढका हुआ
है इस विषयका

यथोल्बेनावृतो गर्भस्तथा तेनेदमावृतम् ॥३८॥

दृष्टा-तौ सद्वित धूमेन , आव्रियते , वह्नि , यथा , आदर्श , मलेन , च ,

कथन । यथा , उल्बेन , आवृत , गर्भ , तथा , तेन , इदम् , आवृतम् ॥३८॥

यथा = जैसे
धूमेन = धूपसे
वह्निः = अग्नि
च = और

मलेन = मलसे
आदर्शः = दर्पण
आव्रियते = ढका जाता है
(तथा)

यथा	=जैसे	तथा	=वैसे ही
उल्बेन	=जेरसे	तेन	=उस कामके द्वारा
गर्मः	=गर्भ	इदम्	=यह (ज्ञान)
आवृतः	=ढका हुआ है	आवृतम्	=ढका हुआ है

”] आवृतं ज्ञानमेतेन ज्ञानिनो नित्यवैरिणा ।

कामरूपेण कौन्तेय दुष्पूरेणानलेन च ॥३६॥

आवृतम्, ज्ञानम्, एतेन, ज्ञानिन, नित्यवैरिणा,

कामरूपेण, कौन्तेय, दुष्पूरेण, अनलेन, च ॥३९॥

च	=और	कामरूपेण	=कामरूप
कौन्तेय	=हे अर्जुन	ज्ञानिनः	=ज्ञानियोंके
एतेन	=इस	नित्यवैरिणा	=नित्य वैरीसे
अनलेन	=अग्नि (सद्यः)	ज्ञानम्	=ज्ञान
दुष्पूरेण	=न पूर्ण होनेवाले	आवृतम्	=ढका हुआ है

कामके वास्त- इन्द्रियाणि मनो बुद्धिरस्याधिष्ठानमुच्यते ।
म्यानोंका कथन ।

एतैर्विमोहयत्येष ज्ञानमावृत्य देहिनम् ॥४०॥

इन्द्रियाणि, मन, बुद्धि, अस्य, अधिष्ठानम्, उच्यते,

एतै, विमोहयति, एष, ज्ञानम्, आवृत्य, देहिनम् ॥४०॥

तथा-

इन्द्रियाणि	=इन्द्रिया	अधिष्ठानम्	=वासस्थान
मनः	=मन (और)	उच्यते	=कहे जाते हैं
बुद्धिः	=बुद्धि		(और)
अस्य	=इसके	एषः	=यह (काम)

एतैः	= { इन (मन, बुद्धि और इन्द्रियों) द्वारा ही	आवृत्य	= { आच्छादित करके (इस)
ज्ञानम्	= ज्ञानको	देहिनम्	= जीवात्माको
		विमोहयति	= { मोहित करता है

इन्द्रियोंको वशमें तस्मात्त्वमिन्द्रियाण्यादौ नियम्य भरतर्षभ ।

करके काम को पाप्मानं प्रजहि ह्येनं ज्ञानविज्ञाननाशनम् ॥४१॥
मारनेकी आशा ।

तस्मात्, त्वम्, इन्द्रियाणि, आदौ, नियम्य, भरतर्षभ,
पाप्मानम्, प्रजहि, हि, एनम्, ज्ञानविज्ञाननाशनम् ॥४१॥

तस्मात्	= इसलिये	ज्ञानविज्ञान- नाशनम्	= { ज्ञान और विज्ञानके नाश करने- वाले
भरतर्षभ	= हे अर्जुन	एनम्	= इस (काम)
त्वम्	= तू	पाप्मानम्	= पापीको
आदौ	= पहिले	हि	= निश्चयपूर्वक
इन्द्रियाणि	= इन्द्रियोंको	प्रजहि	= मार
नियम्य	= वशमें करके		

इन्द्रिय, मन इन्द्रियाणि पराण्याहुरिन्द्रियेभ्यः परं मनः ।
और बुद्धिसे भी मनसस्तु परा बुद्धिर्यो बुद्धेः परतस्तु सः ॥४२॥

आत्माकी अति इन्द्रियाणि, पराणि, आहु, इन्द्रियेभ्य, परम्, मन,
मनस, तु, परा, बुद्धि, य, बुद्धे, परत, तु, स ॥४२॥

और यदि तू समझे कि इन्द्रियोंको रोककर कामरूप घैरीको
मारनेकी मेरी शक्ति नहीं है तो तेरी यह भूल है क्योंकि इस शरीरसे तो—

इन्द्रियाणि	= इन्द्रियोंको	पराणि	= { परे(श्रेष्ठ बलवान् और सूक्ष्म)
-------------	----------------	-------	--

आहुः	= कहते हैं (और)	परा	= परे
इन्द्रियेभ्यः	= इन्द्रियोंसे	बुद्धिः	= बुद्धि है
परम्	= परे	तु	= और
मनः	= मन है	यः	= जो
तु	= और	बुद्धेः	= बुद्धिसे (भी)
मनसः	= मनसे	परतः	= अत्यन्त परे है
		सः	= वह (आत्मा) है

बुद्धिसे परे एवं बुद्धेः परं बुद्ध्वा संस्तभ्यात्मानमात्मना ।
 आत्माको जान-
 कर और मनको जहि शत्रुं महाबाहो कामरूपं दुरासदम् ॥४३॥
 वशमें करके एवम्, बुद्धे, परम्, बुद्ध्वा, संस्तभ्य, आत्मानम्, आत्मना,
 कामको मारने- जहि, शत्रुम्, महाबाहो, कामरूपम्, दुरासदम् ॥४३॥
 की आज्ञा ।

एवम्	= इस प्रकार	आत्मानम्	= मनको
बुद्धेः	= बुद्धिसे	संस्तभ्य	= वशमें करके
परम्	= परे अर्थात् सूक्ष्म तथा सब प्रकार बलवान् और श्रेष्ठ अपने आत्माको	महाबाहो	= हे महाबाहो (अपनी शक्तिको समझकर इस)
बुद्ध्वा	= जानकर (और)	दुरासदम्	= दुर्जय
आत्मना	= बुद्धिके द्वारा	कामरूपम्	= कामरूप
		शत्रुम्	= शत्रुको
		जहि	= मार

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्याया

योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे कर्मयोगो नाम

तृतीयोऽध्याय ॥ ३ ॥

ॐ श्रीपरमात्मने नमः ।

अथ चतुर्थोऽध्यायः

प्रधान विषय-१ से १८ तक सगुण भगवान्का प्रभाव और निष्काम कर्मयोगका विषय, (१९-२३) योगी महात्मा पुरुषोंके आचरण और उनकी महिमा, (२४-३२) फलसहित पृथक् पृथक् यज्ञोंका कथन, (३३-४०) ज्ञानकी महिमा ।

श्रीभगवानुवाच

योगकी परम्परा
और बहुत काल-
में उसके लोप हो
जानेका कथन ।

इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययम् ।
विवस्वान्मनवे प्राह मनुर्इक्ष्वाकवेऽब्रवीत् ॥ १ ॥
इमम्, विवस्वते, योगम्, प्रोक्तवान्, अहम्, अव्ययम्,
विवस्वान्, मनवे, प्राह, मनु, इक्ष्वाकवे, अब्रवीत् ॥ १ ॥

इसके उपरान्त श्रीकृष्ण महाराज बोले हे अर्जुन-

अहम्	= मैंने	(अपने पुत्र)
इमम्	= इस	मनवे = मनुके प्रति
अव्ययम्	= अविनाशी	प्राह = कहा (और)
योगम्	= योगको	मनुः = मनुने
	(कल्पके आदिमें)	
विवस्वते	= सूर्यके प्रति	{ (अपने पुत्र)
प्रोक्तवान्	= कहा था (और)	इक्ष्वाकवे = { राजा इक्ष्वाकुके प्रति
विवस्वान्	= सूर्यने	अब्रवीत् = कहा

["] एवं परम्पराप्राप्तमिमं राजर्षयो विदुः ।

स कालेनेह महता योगो नष्टः परंतप ॥ २ ॥

एवम्, परम्पराप्राप्तम्, इमम्, राजर्षय, विदुः,

स, कालेन, इह, महता, योग, नष्ट, परंतप ॥ २ ॥

एवम्	= इस प्रकार
परम्परा-	= { परम्परासे प्राप्त
प्राप्तम्	= { हुआ
इमम्	= इस (योग) को
राजर्षयः	= राजर्षियोंने
विदुः	= जाना
	(परन्तु)
परंतप	= हे अर्जुन

सः	= वह
योगः	= योग
महता	= बहुत
कालेन	= कालसे
इह	= { इस (पृथिवी)
	= { लोकमें
नष्टः	= { लोप (प्राय)
	= { हो गया था

पुरातन योगकी स एवायं मया तेऽद्य योगः प्रोक्तः पुरातनः ।

प्रशंसा ।

भक्तोऽसि मे सखा चेति रहस्यं ह्येतदुत्तमम् ॥ ३ ॥

स , एव , अयम् , मया , ते , अद्य , योग , प्रोक्त , पुरातन ,

भक्त , असि , मे , सखा , च , इति , रहस्यम् , हि , एतत् , उत्तमम् ॥ ३ ॥

सः	= वह
एव	= ही
अयम्	= यह
पुरातनः	= पुरातन
योगः	= योग
अद्य	= अब
मया	= मैंने
ते	= तेरे लिये
प्रोक्तः	= वर्णन किया है
हि	= क्योंकि (तू)
मे	= मेरा

भक्तः	= भक्त
च	= और
सखा	= प्रिय सखा
असि	= है
इति	= इसलिये (तथा)
एतत्	= यह (योग)
उत्तमम्	= बहुत उत्तम
	(और)
रहस्यम्	= { रहस्य अर्थात्
	= { अति मर्मका
	= { विषय है

अर्जुन उवाच

श्रीकृष्ण भगवान् अपरं भवतो जन्म परं जन्म विवस्वतः ।
 का जन्म आधु- कथमेतद्विजानीयां त्वमादौ प्रोक्तवानिति ॥ ४ ॥
 निक मानकर
 अर्जुनका प्रश्न अपरम्, भवत, जन्म, परम्, जन्म, विवस्वतः,
 करना । कथम्, एतत्, विजानीयाम्, त्वम्, आदौ, प्रोक्तवान्, इति ॥ ४ ॥

इस प्रकार भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र महाराजके वचन सुनकर

अर्जुनने पूछा हे भगवन्—

भवतः	= आपका	एतत्	= इस योगको
जन्म	= जन्म (तो)		(कल्पके)
अपरम्	= { आधुनिक अर्थात् अब हुआ है (और)	आदौ	= आदिमे
विवस्वतः	= सूर्यका	त्वम्	= आपने
जन्म	= जन्म	प्रोक्तवान्	= कहा था
परम्	= बहुत पुराना है (इमलिये)	इति	= यह (मैं)
		कथम्	= कैसे
		विजानीयाम्	= जानू

श्रीभगवानुवाच

श्रीभगवान् बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन ।
 द्वारा अपने और तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परंतप ॥ ५ ॥
 अर्जुनके बहुत
 जन्म व्यतान बहूनि, मे, व्यतीतानि, जन्मानि, तव, च, अर्जुन,
 होनेका वचन । तानि, अहम्, वेद, सर्वाणि, न, त्वम्, वेत्थ, परंतप ॥ ५ ॥

इतपर श्रीकृष्ण महाराज बोले—

अर्जुन	= हे अर्जुन	च	= और
मे	= मेरे	तव	= तेरे

बहूनि	= बहुतसे	सर्वाणि	= सबको
जन्मानि	= जन्म	त्वम्	= तू
व्यतीतानि	= हो चुके हैं (परन्तु)	न	= नहीं
परंतप	= हे परतप	वेत्थ	= जानता है (और)
तानि	= उन	अहम्	= मैं
		वेद	= जानता हू

श्रीभगवान्‌के
जन्मकी अलौ-
किकता ।

अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोऽपि सन् ।

प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय संभवाम्यात्ममायया ॥ ६ ॥

अज , अपि, सन् , अव्ययात्मा, भूतानाम् , ईश्वर , अपि, सन् ,
प्रकृतिम् , स्वाम् , अधिष्ठाय , संभवामि , आत्ममायया ॥ ६ ॥

तथा मेरा जन्म प्राकृत मनुष्योंके सदृश नहीं है—

	(मैं)	ईश्वरः	= ईश्वर
अव्ययात्मा	= { अविनाशी- स्वरूप	सन्	= होनेपर
अजः	= अजन्मा	अपि	= भी
सन्	= होनेपर	स्वाम्	= अपनी
अपि	= भी (तथा)	प्रकृतिम्	= प्रकृतिको
भूतानाम्	= { सब भूत- प्राणियोंका	अधिष्ठाय	= आधीन करके
		आत्ममायया	= योगमायासे
		संभवामि	= प्रकट होता हू

श्रीभगवान्‌के
अवतार देनेके
समयका क्या न ।

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत ।

अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ॥ ७ ॥

यदा, यदा, हि, धर्मस्य, ग्लानि , भवति , भारत ,

अभ्युत्थानम् , अधर्मस्य , तदा , आत्मानम् , सृजामि , अहम् ॥ ७ ॥

भारत	= हे भारत	भवति	= होती है
यदा	= जब	तदा	= तब तब
यदा	= जब	हि	= ही
धर्मस्य	= धर्मकी	अहम्	= मैं
ग्लानिः	= हानि (और)	आत्मानम्	= अपने रूपको
अधर्मस्य	= अधर्मकी	मृजामि	= { रचता हूँ अर्थात् प्रकट करता हूँ
अभ्युत्थानम्	= वृद्धि		

श्रीमद्भगवान्के
स्वनार लेनेके
कारणका कथन । परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे ॥ ८ ॥

परित्राणाय, साधूनाम्, विनाशाय, च, दुष्कृताम्,
धर्मसंस्थापनार्थाय, संभवामि, युगे, युगे ॥ ८ ॥

क्योंकि—

साधूनाम्	= साधु पुरुषोंका	विनाशाय	= { नाश करनेके लिये (तथा)
परित्राणाय	= { उद्धार करनेके लिये	धर्मसंस्थाप- नार्थाय	= { धर्म स्थापन करनेके लिये
च	= और	युगे	= युग
दुष्कृताम्	= { दूषित कर्म करनेवालोंका	युगे	= युगमें
		संभवामि	= प्रकट होता हूँ

श्रीमद्भगवान्के
जन्म कर्मोंको
दिव्य ज्ञाननेका
पत्न । जन्म कर्म, च, मे, दिव्यम्, एवम्, यः, यति, तत्त्वतः,
त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति संजुन ॥ ९ ॥
त्यक्त्वा, देहम्, पुन, जन्म, न, एति, माम्, एति, म., अर्जुन ॥ ९ ॥

हमलिये—

अर्जुन	= हे अर्जुन	सः	= वह
मे	= मेरा (वह)	देहम्	= शरीरको
जन्म	= जन्म	त्यक्त्वा	= त्यागकर
च	= और	पुनः	= फिर
कर्म	= कर्म	जन्म	= जन्मको
दिव्यम्	= { दिव्य अर्थात् अलौकिक है	न	= नहीं
एवम्	= इस प्रकार	एति	= प्राप्त होता है (किन्तु)
यः	= जो पुरुष	माम्	= मुझे (ही)
तत्त्वतः	= तत्त्वसे*	एति	= प्राप्त होता है
वेत्ति	= जानता है		

श्रीभगवान्‌को
प्राप्त हुए पुरुषों-
के लिये ।

वीतरागभयक्रोधा मन्मया मामुपाश्रिताः ।

वहवो ज्ञानतपसा पूता मद्भावमागताः ॥१०॥

वीतरागभयक्रोधा , मन्मया. , माम् , उपाश्रिता ,

वहव , ज्ञानतपसा , पूता , मद्भावम् , आगता ॥१०॥

* सर्वशक्तिमान् सच्चिदानन्दधन परमात्मा अज अविनाशी और सर्व-

भूतोंके परम गति तथा परम आश्रय हैं, वे केवल धर्मको स्थापन करने और
समाजका उद्धार करनेके लिये ही अपनी योगमायासे सगुणरूप होकर प्रकट
होते हैं इसलिये परमेश्वरके समान सुहृद् प्रेमी और पतिव्रतान् दूसरा
को नश है ऐसा समझकर जो पुरुष परमेश्वरका अनन्य प्रेमसे निरन्तर चिन्तन
करता हुआ आत्मस्मरणसे संसारमें बर्तता है वही उनको तत्त्वमे जानता है ।

और हे अर्जुन ! पहिले भी-

वीतराग-	= { राग भय और	उपाश्रिताः	= शरण हुए
भयक्रोधाः	= { क्रोधसे रहित	बहवः	= बहुतसे पुरुष
	= { अनन्यभावसे	ज्ञानतपसा	= ज्ञानरूप तपसे
मन्मयाः	= { मेरेमें स्थिति-	पूताः	= पवित्र हुए
	= { वाले	मद्भावम्	= मेरे स्वरूपको
माम्	= मेरे	आगताः	= प्राप्त हो चुके हैं

श्रीभगवान्‌को
भजने वाले
पुरुषोंके अनुकूल
भगवान्‌के दर्ताव
का कथन ।

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम् ।

मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः ॥११॥

ये, यथा, माम्, प्रपद्यन्ते, तान्, तथा, एव, भजामि, अहम्,
मम वर्त्म, अनुवर्तन्ते, मनुष्या, पार्थ, सर्वश ॥ ११ ॥

क्योंकि-

पार्थ	= हे अर्जुन	भजामि	= भजता हू
ये	= जो		(इस रहस्यको
माम्	= मेरेको		जानकर ही)
यथा	= जैसे	मनुष्याः	= { बुद्धिमान्
प्रपद्यन्ते	= भजते हैं		{ मनुष्यगण
अहम्	= मैं (भी)	सर्वशः	= सब प्रकारसे
तान्	= उनको	मम	= मेरे
तथा	= वैसे	वर्त्म	= मार्गके
एव	= ही	अनुवर्तन्ते	= अनुसार वर्तते हैं

मवामी पुरषों-
को देवताओंके
पूजनेसे शीघ्र
प्राप्तिवा
कथन ।

काङ्क्षन्तः कर्मणां सिद्धिं यजन्त इह देवताः ।

क्षिप्रं हि मानुषे लोके सिद्धिर्भवति कर्मजा ॥१२॥

काङ्क्षन्त, कर्मणाम्, सिद्धिम्, यजन्ते, इह, देवता,

क्षिप्रम्, हि, मानुषे, लोके, सिद्धि, भवति, कर्मजा ॥१२॥

और जो मेरेको तत्त्वमे नहीं जानते हैं वे पुरुष—

इह	= इस		(और उनके)
मानुषे	= मनुष्य		
लोके	= लोकमें	कर्मजा	= { कर्मोंसे उत्पन्न हुई
कर्मणाम्	= कर्मोंके	सिद्धिः	= सिद्धि (भी)
सिद्धिम्	= फलको	क्षिप्रम्	= शीघ्र
काङ्क्षन्तः	= चाहते हुए	हि	= ही
देवताः	= देवताओंको	भवति	= होती है
यजन्ते	= पूजते हैं		

परन्तु उनको मेरी प्राप्ति नहीं होती इसलिए तू मेरेको ही सब प्रकारसे भज ।

चारों वर्णोंकी रचना करनेमें भगवान् के भयर्नापन का कथन ।

चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः ।
तस्य कर्तारमपि मां विद्ध्यकर्तारमव्ययम्॥१३॥

चातुर्वर्ण्यम्, मया, सृष्टम्, गुणकर्मविभागशः,
तस्य, कर्तारम्, अपि, माम्, विद्ध्य, अकर्तारम्, अव्ययम्॥१३॥

तथा हे अर्जुन—

गुणकर्म-	= { गुण और कर्मों-	कर्तारम्	= कर्ताको
विभागशः	= { के विभागमें	अपि	= भी
चातुर्वर्ण्यम्	= { ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य और शूद्र	माम्	= मुझ
मया	= मेरे द्वारा	अव्ययम्	= { अविनाशी परमेश्वरको (तू)
सृष्टम्	= रचे गये हैं	अकर्तारम्	= अकर्ता (ही)
तस्य	= उनके	विद्ध्य	= जान

श्रीभगवान्के न मां कर्माणि लिम्पन्ति न मे कर्मफले स्पृहा ।
 कर्मोंकी दिव्य- इति मां योऽभिजानाति कर्मभिर्न स बध्यते ॥
 ता और उनके
 जाननेका फल। न, माम्, कर्माणि, लिम्पन्ति, न, मे, कर्मफले, स्पृहा,
 इति, माम्, य, अभिजानाति, कर्मभिः, न, स, बध्यते ॥१४॥

क्योंकि—

कर्मफले	= कर्मोंके फलमें	इति	= इस प्रकार
मे	= मेरी	यः	= जो
स्पृहा	= स्पृहा	माम्	= मेरेको
न	= नहीं है (इसलिये)	अभिजानाति	= { तत्त्वसे जानता है
माम्	= मेरेको	सः	= वह (भी)
कर्माणि	= कर्म	कर्मभिः	= कर्मोंसे
न	= { लिपायमान	न	= नहीं
लिम्पन्ति	= { नहीं करते	बध्यते	= बंधता है

पूर्वज मुमुक्षु एवं ज्ञात्वा कृतं कर्म पूर्वैरपि मुमुक्षुभिः ।
 पुरुषोंकी भांति कुरु कर्मैव तस्मात्त्वं पूर्वैः पूर्वतरं कृतम् ॥१५॥
 निष्काम कर्म एवम्, ज्ञात्वा, कृतम्, कर्म, पूर्व, अपि, मुमुक्षुभिः,
 करनेके लिये कुरु, कर्म, एव, तस्मात्, त्वम्, पूर्व, पूर्वतरम्, कृतम् ॥१५॥
 वाश ।

तथा—

पूर्वैः	= पहिले होनेवाले	ज्ञात्वा	= जानकर (ही)
मुमुक्षुभिः	= { मुमुक्षु पुरुषों- द्वारा	कर्म	= कर्म
अपि	= भी	कृतम्	= किया गया है
एवम्	= इस प्रकार	तस्मात्	= इससे
		त्वम्	= तू (भी)

पूर्वैः	= पूर्वजोद्वारा	कर्म	= कर्मको
पूर्वतरम्	} = सदासे किये हुए	एव	= ही
कृतम्		कुरु	= कर

कर्म और अकर्म को तत्त्वसे जाननेका फल । किं कर्म किमकर्मेति कवयोऽप्यत्र मोहिताः ।
तत्ते कर्म प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात् ॥

किम्, कर्म, किम्, अकर्म, इति, कवय, अपि, अत्र, मोहिता,
तत्, ते, कर्म, प्रवक्ष्यामि, यत्, ज्ञात्वा, मोक्ष्यसे, अशुभात् ॥ १६ ॥

परन्तु—

कर्म	= कर्म	तत्	= वह
किम्	= क्या है (और)	कर्म	= { कर्म अर्थात्
अकर्म	= अकर्म		{ कर्मोंका तत्त्व
किम्	= क्या है	ते	= तेरे लिये
इति	= ऐसे	प्रवक्ष्यामि	= { अच्छी प्रकार
अत्र	= इस विषयमे		{ कहूंगा (कि)
कवयः	= बुद्धिमान् पुरुष	यत्	= जिसको
अपि	= भी	ज्ञात्वा	= जानकर (त्)
मोहिताः	= मोहित हैं	अशुभात्	= { अशुभ अर्थात्
	(इसलिये मैं)	मोक्ष्यसे	= { ससारवन्धनसे
			= छूट जायगा

कर्मणो ह्यपि बोद्धव्यं बोद्धव्यं च विकर्मणः ।

अकर्मणश्च बोद्धव्यं गहना कर्मणो गतिः ॥

कर्मण, हि, अपि, बोद्धव्यम्, बोद्धव्यम्, च, विकर्मण,
अकर्मण, च, बोद्धव्यम्, गहना, कर्मण, गति ॥ १७ ॥

कर्मण. = कर्मका स्वल्प । अपि = भी

बोद्धव्यम्	= जानना चाहिये	विकर्मणः	= { निषिद्ध कर्मका
च	= और		{ स्वरूप (भी)
अकर्मणः	= { अकर्मका	बोद्धव्यम्	= जानना चाहिये
	{ स्वरूप (भी)	हि	= क्योंकि
बोद्धव्यम्	= जानना चाहिये	कर्मणः	= कर्मकी
च	= तथा	गतिः	= गति
		गहना	= गहन है

कर्ममें अकर्म कर्मण्यकर्म यः पश्येदकर्मणि च कर्म यः ।
 और अकर्म में स बुद्धिमान्मनुष्येषु स युक्तः कृत्स्नकर्मकृत् ॥
 कर्मको तरवले जाननेका फल। कर्मणि, अकर्म, य, पश्येत्, अकर्मणि, च, कर्म, यः,

स, बुद्धिमान्, मनुष्येषु, स., युक्तः, कृत्स्नकर्मकृत् ॥१८॥

यः	= जो पुरुष	(भी)
कर्मणि	= { कर्ममें अर्थात् अहकाररहित की हुई संपूर्ण चेष्टाओंमें	कर्म = { कर्मको अर्थात् त्यागरूप क्रियाको (देखे)
अकर्म	= { अकर्म अर्थात् वास्तवमें उनका न होनापना	सः = वह पुरुष मनुष्येषु = मनुष्योंमें
पश्येत्	= देखे	बुद्धिमान् = बुद्धिमान् है
च	= और	(और)
यः	= जो पुरुष	सः = वह
अकर्मणि	= { अकर्ममें अर्थात् अज्ञानी पुरुषद्वारा किये हुए संपूर्ण क्रियाओंके त्यागमें	युक्तः = योगी कृत्स्न-कर्मकृत् = { संपूर्ण कर्मोंका करनेवाला है

कामना और यस्य सर्वे समारम्भाः कामसंकल्पवर्जिताः ।
 मरूप रहित ज्ञानाग्निदग्धकर्माणं तमाहुः पण्डितं बुधाः ॥१६॥
 आचरण वाले ज्ञानीकी प्रशंसा। यस्य, सर्वे, समारम्भा, कामसंकल्पवर्जिता,
 ज्ञानाग्निदग्धकर्माणम्, तम्, आहु, पण्डितम्, बुधा ॥१९॥

और हे अर्जुन—

यस्य	= जिसके	ज्ञानाग्नि-	= { ज्ञानरूप अग्नि- द्वारा भस्म हुए कर्मोंवाले पुरुषको
सर्वे	= सपूर्ण	दग्ध-	
समारम्भाः	= कार्य	कर्माणम्	
कामसंकल्प-	= { कामना और संकल्पसे रहित हैं (ऐसे)	बुधाः	= ज्ञानीजन (भी)
वर्जिताः		पण्डितम्	= पण्डित
तम्	= उस	आहुः	= कहते हैं

त्यागकर कर्म त्यक्त्वा कर्मफलासङ्गं नित्यतृप्तो निराश्रयः ।
 त्यागकर कर्म कर्मण्यभिप्रवृत्तोऽपि नैव किञ्चित्करोति सः ॥
 करनेवाले की प्रशंसा। त्यक्त्वा, कर्मफलासङ्गम्, नित्यतृप्त, निराश्रय,
 कर्मणि, अभिप्रवृत्त, अपि, न, एव, किञ्चित्, करोति, स ॥२०॥

और जो पुरुष—

निराश्रयः	= { सासारिक आश्रयमे रहित	कर्म-	= { कर्मोंके फल और सङ्ग अर्थात् कर्तृत्व अभिमानको
नित्य-	= { सदा परमानन्द परमात्मामें	फलासङ्गम्	
तृप्त	= { तृप्त है	त्यक्त्वा	= त्यागकर
सः	= वह	कर्मणि	= कर्ममें

अभिप्रवृत्तः	= { अच्छी प्रकार वर्तता हुआ	एव	= भी
अपि	= भी	न	= नहीं
किञ्चित्	= कुछ	करोति	= करता है

केवल शरीर- निराशौर्यतचित्तात्मा त्यक्तसर्वपरिग्रहः ।
सम्बन्धी कर्म शरीरं केवलं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्बिषम् ॥२१॥
करते हुए सन्या- शरीरं केवलं कर्म कुर्वन्, न, आप्नोति, किल्बिषम् ॥२१॥
मीको पाप न निराशी, यतचित्तात्मा, त्यक्तसर्वपरिग्रह,
लगनेका कथन। शरीरम्, केवलम्, कर्म, कुर्वन्, न, आप्नोति, किल्बिषम् ॥२१॥

और-

यत-	{ जीत लिया है	केवलम्	= केवल
चित्तात्मा	= { अन्त करण और शरीर	शरीरम्	= शरीरसम्बन्धी
	{ जिसने (तथा)	कर्म	= कर्मको
त्यक्तसर्व-	{ त्याग दी है	कुर्वन्	= करता हुआ
परिग्रहः	= { सपूर्ण भोगोकी सामग्री जिसने		(भी)
	(ऐसा)	किल्बिषम्	= पापको
निराशीः	= { आशारहित	न	= नहीं
	{ पुरुष	आप्नोति	= प्राप्त होता है

निष्कामकर्मयोग यदृच्छालाभसंतुष्टो द्वन्द्वातीतो विमत्सरः ।
वे साधक का समः सिद्धावसिद्धौ च कृत्वापि न निबध्यते ॥२२॥
लक्षण और यदृच्छालाभसंतुष्ट, द्वन्द्वातीत, निमत्सर,
कर्मोंसे न बधने- यदृच्छालाभसंतुष्ट, द्वन्द्वातीत, निमत्सर,
का बधन। सम, सिद्धौ, असिद्धौ, च, कृत्वा, अपि, न, निबध्यते ॥२२॥

और-

यदृच्छा-	{ अपने आप जो	सिद्धौ	= मिद्धि
लाभ-	{ कुल आ प्राप्त	च	= और
संतुष्टः	{ हो उसमे ही	असिद्धौ	= असिद्धिमें
	{ सतुष्ट रहनेवाला	समः	= { समत्वभाववाला
	{ (और)		{ पुरुष
द्वन्द्वतीतः	{ हर्षगोकादि		{ (कर्मोको)
	{ द्वन्द्वोसे अतीत	कृत्वा	= करके
	{ हुआ (तथा)	अपि	= भी
विमत्सरः	{ मत्सरता अर्थात्	न	= नहीं
	{ ईर्ष्यासे रहित	निवध्यते	= वधता है

गतसङ्गस्य मुक्तस्य ज्ञानावस्थितचेतसः ।

यज्ञायाचरतः कर्म समग्रं प्रविलीयते ॥२३॥

गतमङ्गस्य, मुक्तस्य, ज्ञानावस्थितचेतसः ,

यज्ञाय, आचरत, कर्म, समग्रम्, प्रविलीयते ॥२३॥

न्योक्ति-

गतमङ्गस्य	= { आमक्तिमे	आचरतः	= { आचरण
	{ रहित		{ करते हुए
ज्ञानावस्थित-	{ ज्ञानमे स्थित	मुक्तस्य	= मुक्त पुरुषके
चेतसः	{ हुए चित्तवाले	समग्रम्	= सम्पूर्ण
		कर्म	= कर्म
यज्ञाय	= यज्ञके लिये	प्रविलीयते	= नष्ट हो जाते हैं

न ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतम् ।

ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्मसमाधिना ॥२४॥

ब्रह्म, अर्पणम्, ब्रह्म, हवि, ब्रह्माग्नौ, ब्रह्मणा, हुतम्,

ब्रह्म, एव, तेन, गन्तव्यम्, ब्रह्मकर्मसमाधिना ॥२४॥

उन यज्ञके लिये आचरण करनेवाले पुरुषोंमेंसे कोई तो इस भावसे यज्ञ करते हैं कि—

अर्पणम् = { अर्पण अर्थात् सूत्रादिक (भी)	हुतम् = हवन किया गया है (वह भी ब्रह्म ही है इसलिये)
ब्रह्म = ब्रह्म है (और)	
हविः = { हवि अर्थात् हवन करने योग्य द्रव्य (भी)	ब्रह्मकर्म- समाधिना = { ब्रह्मरूप कर्ममें समाधिस्थ हुए
तेन = उस पुरुषद्वारा (जो)	
गन्तव्यम् = प्राप्त होने योग्य है (वह भी)	
ब्रह्म = ब्रह्म है (और)	
ब्रह्माग्नौ = ब्रह्मरूप अग्निमें	
ब्रह्मणा = { ब्रह्मरूप कर्तृके द्वारा (जो)	ब्रह्म = ब्रह्म एव = ही है

देवयज्ञ और दैवमेवापरे यज्ञं योगिनः पर्युपासते ।

इत्ययं का
कथन ।

ब्रह्माभावपरे यज्ञं यज्ञेनैवोपजुहति ॥२५॥

दैवम्, एव, अपरे, यज्ञम्, योगिन, पर्युपासते,

ब्रह्माग्नौ, अपरे, यज्ञम्, यज्ञेन, एव, उपजुहति ॥२५॥

और—

अपरे = दूसरे

यज्ञम् = यज्ञको

योगिनः = योगीजन

एव = ही

दैवम् = { देवताओंके
पूजनरूप

पर्यु-
पासते = { अच्छी प्रकार उपासते
हैं अर्थात् करते हैं

(और)	यज्ञेन	= यज्ञके द्वारा
अपरे = दूसरे (ज्ञानीजन)	एव	= ही
ब्रह्माग्नौ = { परब्रह्म परमात्मा-	यज्ञम्	= यज्ञको
रूप अग्निमे	उपजुहति	= हवन* करते हैं

इन्द्रियमयम-
न्य यत् और
विषयहवनरूप
जगत् कथन ।

श्रोत्रादीनीन्द्रियाण्यन्ये संयमाग्निषु जुहति ।
शब्दादीन्विषयानन्य इन्द्रियाग्निषु जुहति ॥२६॥
श्रोत्रादीनि, इन्द्रियाणि, अन्ये, संयमाग्निषु, जुहति,
शब्दादीन्, विषयान्, अन्ये, इन्द्रियाग्निषु, जुहति ॥२६॥

और-

अन्ये	= अन्य योगीजन	अन्ये	= { और दूसरे योगीलोग
श्रोत्रादीनि	= श्रोत्रादिक	शब्दादीन्	= शब्दादिक
इन्द्रियाणि	= सब इन्द्रियोंको	विषयान्	= विषयोंको
संयमाग्निषु	= { मयम अर्थात् स्वाधीनतारूप अग्निमे	इन्द्रि- याग्निषु	= { इन्द्रियरूप अग्निमे
जुहति	= { हवन करते हैं अर्थात् इन्द्रियोंको विषयोंमें गोक- क अपने वशमें कर लेते हैं	जुहति	= { हवन करते हैं अर्थात् रागद्वेष- रहित इन्द्रियों- द्वारा विषयोंको ग्रहण करते हुए भी भस्मरूप करते हैं

अन्तःकरण- सर्वाणीन्द्रियकर्माणि प्राणकर्माणि चापरे ।

नयमरूप यज्ञ ।

आत्मसंयमयोगाग्नौ जुहति ज्ञानदीपिते ॥२७॥

सर्वाणि, इन्द्रियकर्माणि, प्राणकर्माणि, च, अपरे,

आत्मसंयमयोगाग्नौ, जुहति, ज्ञानदीपिते ॥ २७ ॥

और-

अपरे = दूसरे योगीजन

ज्ञान-

= { ज्ञानसे
प्रकाशित हुई

सर्वाणि = सपूर्ण

दीपिते

इन्द्रिय- = { इन्द्रियोंकी
कर्माणि = { चेष्टाओंको

आत्मसंयम-
योगाग्नौ

= { परमात्मासे
स्थितिरूप
योगाग्निसमें

च = तथा

प्राण-
कर्माणि = { प्राणोंके
व्यापारको

जुहति

= हवन करते हैं*

द्रव्ययज्ञ, तपोयज्ञ,

योगयज्ञ और

स्वाध्याय रूप

ज्ञानयज्ञ का कथन

द्रव्ययज्ञास्तपोयज्ञा योगयज्ञास्तथापरे ।

स्वाध्यायज्ञानयज्ञाश्च यतयः संशितव्रताः ॥२८॥

द्रव्ययज्ञा, तपोयज्ञा, योगयज्ञा, तथा, अपरे,

स्वाध्यायज्ञानयज्ञा, च, यतयः, संशितव्रता ॥ २८ ॥

और-

अपरे = दूसरे (कई पुरुष)

तथा = वैसे ही (कई पुरुष)

द्रव्य-
यज्ञाः = { ईश्वर अर्पण बुद्धिसे
लोकेसेवामें द्रव्य
लगातेवाले हैं

तपो-

यज्ञाः

= { स्वधर्मपालनरूपतप-
यज्ञको करनेवाले हैं
(और कई)

* सच्चिदानन्दधन परमात्माके सिवाय अन्य किसीका भी न

करना ही उन भवका हवन करना है ।

योग-	= { अष्टाङ्ग योगरूप	स्वाध्याय- ज्ञानयज्ञः = { भगवान् के नाम- का जप तथा भगवत्प्राप्ति- विषयक शास्त्रों- का अध्ययनरूप ज्ञानयज्ञके कानेवाले है
यज्ञाः	= { यज्ञको करनेवाले हैं	
च	= और (दूसरे)	
संगित-	= { अहिंसादि	
व्रताः	= { तीक्ष्ण व्रतोसे युक्त	
यतयः	= यत्नशील पुरुष	

दण्डरूपसे त्रिविध अपाने जुहति प्राणं प्राणेऽपानं तथापरे ।

प्राणायाम का ज्ञान । प्राणापानगती रुद्ध्वा प्राणायामपरायणाः ॥२६॥

अपाने, जुहति, प्राणम्, प्राणे, अपानम्, तथा, अपरे,
प्राणापानगती, रुद्ध्वा, प्राणायामपरायणा ॥ २९ ॥

और दूसरे योगीजन-

अपाने	= अपानवायुमे	अपरे	= अन्य योगीजन
प्राणम्	= प्राणवायुको	प्राणापान- गती	= { प्राण और अपानकी गतिको
जुहति	= हवन करते हैं		
तथा	= वैसे ही		
	(अन्य योगीजन)	रुद्ध्वा	= रोककर
प्राणे	= प्राणवायुमे	प्राणायाम- परायणा.	= { प्राणायामके परायण (होते हैं)
अपानम्	= अपानवायुको		
(जुहति)	= हवन करते हैं		
	(तथा)		

अपरे नियताहाराः प्राणान्प्राणेपु जुहति ।

मर्वेऽप्येते यज्ञविदो यज्ञक्षपितकल्मषाः ॥३०॥

अपरे नियताहारा, प्राणान्, प्राणेपु, जुहति,

मर्वे = मरे, प्ये, एते, यज्ञविद, यज्ञक्षपितकल्मषा ॥ ३० ॥

और-

अपरे	= दूसरे	यज्ञक्षपित-	= { यज्ञोद्वारा नाश
नियताहाराः	= { नियमित आहार*करने- वाले योगीजन	कल्मषाः	= { हो गया है पाप जिनका (ऐसे)
प्राणान्	= प्राणोंको	एते	= यह
प्राणेषु	= प्राणोंमें ही	सर्वे	= सब
जुहति	= हवन करते हैं (इस प्रकार)	अपि	= ही (पुरुष)
		यज्ञविदः	= { यज्ञोंको जाननेवाले हैं

पह करनेवालों
को भगवत्प्राप्ति
और न करने-
वालोंको निन्दा।

यज्ञशिष्टामृतभुजो यान्ति ब्रह्म सनातनम् ।

नायं लोकोऽस्त्ययज्ञस्य कुतोऽन्यः कुरुसत्तम ॥

यज्ञशिष्टामृतभुज , यान्ति, ब्रह्म, सनातनम्,

न, अयम्, लोक , अस्ति, अयज्ञस्य, कुत , अन्य , कुरुसत्तम ३१

और-

कुरुसत्तम =	{ हे कुरुश्रेष्ठ अर्जुन	(और)	अयज्ञस्य = यज्ञरहित पुरुषको
यज्ञ-	{ यज्ञोंके परिणाम-	अयम्	= यह
शिष्टामृत-	{ रूप ज्ञानामृतको	लोकः	= मनुष्यलोक (भी सुखदायक)
भुजः	{ भोगनेवाले योगीजन	न	= नहीं
सनातनम्	= सनातन	अस्ति	= है (फिर)
ब्रह्म	= { परब्रह्म परमात्माको	अन्यः	= परलोक
यान्ति	= प्राप्त होते हैं	कुतः	= कैसे (सुखदायक होगा)

* गीता अध्याय ६ श्लोक १७ में देखना चाहिये ।

वर्षोंको तत्त्वमे
नाननेका फल । एवं बहुविधा यज्ञा वितता ब्रह्मणो मुखे ।
कर्मजान्विद्धि तान्सर्वानेवं ज्ञात्वा विमोक्ष्यसे ॥३२॥

एवम्, बहुविधा, यज्ञा, वितताः, ब्रह्मण, मुखे,
कर्मजान्, विद्धि, तान्, सर्वान्, एवम्, ज्ञात्वा, विमोक्ष्यसे ॥३२॥

एवम् = ऐसे	कर्मजान् = { शरीर, मन और इन्द्रियोकी क्रियाद्वारा ही उत्पन्न होनेवाले
बहुविधाः = बहुत प्रकारके	
यज्ञाः = यज्ञ	विद्धि = जान
ब्रह्मण = वेदकी	
मुखे = वाणीमें	एवम् = इस प्रकार (तत्त्वसे)
वितता = { विस्तार किये गय है	ज्ञात्वा = जानकर (निष्काम कर्मयोगद्वारा)
तान् = उन	विमोक्ष्यसे = { समारब्धन्धनसे मुक्त हो जायगा
सर्वान् = सबको	

श्रेयान्द्रव्यमयाद्यज्ञाञ्ज्ञानयज्ञः परतप ।

मयं कर्माश्विलं पार्थ ज्ञाने परिसमाप्यते ॥३३॥

श्रेयान्, द्रव्यमयात्, यज्ञात्, ज्ञानयज्ञ, परतप,
मयं, कर्म, अश्विलम्, पार्थ, ज्ञाने, परिसमाप्यते ॥ ३३ ॥

और—

परतप = हे अर्जुन	यज्ञात् = यज्ञमें
द्रव्यमयात् = { नामाश्रित वस्तुआये निष्ठ होनेवाले	ज्ञानयज्ञ = ज्ञानरूप यज्ञ (मय प्रकार)
	श्रेयान् = श्रेष्ठ है

	(क्योंकि)	ज्ञाने	= ज्ञानमें
पार्थ	= हे पार्थ	परिसमाप्यते =	{ शेष होते हैं अर्थात् ज्ञान उनकी पराकाष्ठा है
सर्वम्	= सपूर्ण		
अखिलम्	= यावन्मात्र		
कर्म	= कर्म		

ज्ञानके लिये तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया ।
 ज्ञानवानों को उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः ॥३४॥
 शरण जानेका तत्, विद्धि, प्रणिपातेन, परिप्रश्नेन, सेवया,
 कथन । उपदेक्ष्यन्ति, ते, ज्ञानम्, ज्ञानिन, तत्त्वदर्शिनः ॥३४॥

इंगलिये तत्त्वको जाननेवाले ज्ञानी पुरुषोंसे—

प्रणि-	{ भली प्रकार दण्डवत्	ते	= वे
पातेन		तत्त्वदर्शिनः	= { मर्मको जाननेवाले
सेवया	= सेवा (और)	ज्ञानिनः	= ज्ञानीजन
परि-	{ निष्कपटभावसे किये हुए प्रश्नद्वारा	ज्ञानम्	= ज्ञानका
प्रश्नेन			
तत्	= उस ज्ञानको	उपदेक्ष्यन्ति =	{ उपदेश करेंगे
विद्धि	= जान		

ज्ञानका फल । यज्ज्ञात्वा न पुनर्मोहमेवं यास्यसि पाण्डव ।

येन भूतान्यशेषेण द्रक्ष्यस्यात्मन्यथो मयि ॥३५॥

यत्, ज्ञात्वा, न, पुन, मोहम्, एवम्, यास्यसि, पाण्डव,

येन, भूतानि, अशेषेण, द्रक्ष्यसि, आत्मनि, अथो, मयि ॥३५॥

कि—

यत् = जिसको | ज्ञात्वा = जानकर (तुं)

पुनः	= फिर	आत्मनि	= { अपने अन्तर्गत समष्टि बुद्धिके आधार
एवम्	= इस प्रकार	अशेषेण	= सपूर्ण
मोहम्	= मोहको	भूतानि	= भूतोंको
न	= नहीं	द्रक्ष्यसि	= देखेगा* (और)
यास्यसि	= प्राप्त होगा (और)	अथो	= उसके उपरान्त
पाण्डव	= हे अर्जुन		{ मेरेमे अर्थात् सच्चिदानन्द-
येन	= { जिस ज्ञानके द्वारा (सर्वव्यापी अनन्त चेतनरूप हुआ)	मयि	= { स्वरूपमे एकीभाव हुआ सच्चिदानन्द- मय ही देखेगा†

अपि चेदसि पापेभ्यः सर्वेभ्यः पापकृत्तमः ।

सर्वं ज्ञानप्लवेनैव वृजिनं संतरिष्यसि ॥३६॥

अपि, चेत, अमि, पापेभ्य, सर्वेभ्यः, पापकृत्तम,

मदम्, ज्ञानप्लवेन, एव, वृजिनम्, संतरिष्यसि ॥३६॥

और-

चेत्	= यदि (त्)	अपि	= भी
सर्वेभ्य	= सब	पापकृत्तमः	= { अधिक पाप करनेवाला
पापेभ्य	= पापियोंमे		

असि	= है (तो भी)	सर्वम्	= सपूर्ण
ज्ञानप्लवेन	= { ज्ञानरूप नौकाद्वारा	वृजिनम्	= पापोको
एव	= नि सन्देह	संतरिण्यसि	= { अच्छी प्रकार तर जायगा

अग्निके दृष्टान्त-
से ज्ञान की
महिमा ।

यथैधांसि समिद्धोऽग्निर्भस्मसात्कुरुतेऽर्जुन ।

ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात्कुरुते तथा ॥३७॥

यथा, एधांसि, समिद्ध, अग्निः, भस्मसात्, कुरुते, अर्जुन,
ज्ञानाग्नि, सर्वकर्माणि, भस्मसात्, कुरुते, तथा ॥३७॥

क्योंकि—

अर्जुन	= हे अर्जुन	कुरुते	= कर देता है
यथा	= जैसे	तथा	= वैसे ही
समिद्धः	= प्रज्वलित	ज्ञानाग्निः	= ज्ञानरूप अग्नि
अग्निः	= अग्नि	सर्वकर्माणि	= सपूर्ण कर्मोंको
एधांसि	= इन्धनको	भस्मसात्	= भस्ममय
भस्मसात्	= भस्ममय	कुरुते	= कर देता है

ज्ञानकी अति-
शय पवित्रता
और पुरपार्थसे
ज्ञान प्राप्तिका
वर्णन ।

न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते ।

तत्स्वयं योगसंसिद्धः कालेनात्मनि विन्दति ॥

न, हि, ज्ञानेन, सदृशम्, पवित्रम्, इह, विद्यते,
तत्, स्वयम्, योगसंसिद्ध, कालेन, आत्मनि, विन्दति ॥३८॥

इसलिये—

इह	= इस संसारमें	न	= नहीं
ज्ञानेन	= ज्ञानके	विद्यते	= है
सदृशम्	= समान	तत्	= उस ज्ञानको
पवित्रम्	= पवित्र करनेवाला	कालेन	= कितनेक कालसे
हि	= नि सन्देह (कुछ भी)	स्वयम्	= अपने आप

ज्ञानके पात्र- श्रद्धावाँल्लभते ज्ञानं तत्परः संयतेन्द्रियः ।
का और ज्ञानसे ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्तिमचिरेणाधिगच्छति ॥
परम शान्तिकी श्रद्धावान्, लभते, ज्ञानम्, तत्पर, संयतेन्द्रिय,
प्राप्तिका कथन । ज्ञानम्, लब्ध्वा, पराम्, शान्तिम्, अचिरेण, अधिगच्छति ॥ ३९ ॥

और अर्जुन-

संयतेन्द्रियः = जितेन्द्रिय	अचिरेण = तत्क्षण
तत्परः = तत्पर हुआ	(भगवत्प्राप्तिरूप)
श्रद्धावान् = श्रद्धावान् पुरुष	पराम् = परम
ज्ञानम् = ज्ञानको	शान्तिम् = शान्तिको
लभते = प्राप्त होता है	अधि- = { प्राप्त हो
ज्ञानम् = ज्ञानको	गच्छति = { जाता है
लब्ध्वा = प्राप्त होकर	

अङ्गारहितं अज्ञश्चाश्रद्धानश्च संशयात्मा विनश्यति ।
 तस्य युक्तं नायं लोकोऽस्ति न परो न सुखं संशयात्मनः ॥
 अज्ञानी कीदृशं कथयति । अज्ञ , च , अश्रद्धान , च , संशयात्मा , विनश्यति ,
 न , अयम् , लोक , अस्ति , न , पर , न , सुखम् , संशयात्मन ॥४०॥

और हे अर्जुन—

अज्ञः	=	{ भगवत्- विषयको न जाननेवाला	अश्रद्धानः	=	श्रद्धारहित
च	=	तथा	च	=	और
			संशयात्मा	=	{ सशययुक्त पुरुष

विनश्यति	= { परमार्थसे भ्रष्ट हो जाता है (उनमें भी)	अयम् = यह लोकः = लोक है न = न परः = परलोक अस्ति = है अर्थात् यह लोक और परलोक दोनों ही उसके लिये भ्रष्ट हो जाते हैं
संगयात्मनः	= { सशययुक्त पुरुषके लिये तो	
न	= न	
सुखम्	= सुख है (और)	
न	= न	

सशयरहित योगसंन्यस्तकर्माणं ज्ञानसंछिन्नसंशयम् ।
 निष्काम कर्म-
 योगीके लिये आत्मवन्तं न कर्माणि निबध्नन्ति धनंजय ॥४१॥
 कर्म-बन्धन का योगसंन्यस्तकर्माणम्, ज्ञानसंछिन्नसंशयम्,
 निषेध । आत्मवन्तम्, न, कर्माणि, निबध्नन्ति, धनजय ॥ ४१ ॥
 और-

धनंजय	= हे धनजय	ज्ञान- संछिन्न- संशयम्	= { ज्ञानद्वारा नष्ट हो गये हैं सब संशय जिसके ऐसे
योग- संन्यस्त- कर्माणम्	= { समत्वबुद्धिरूप योगद्वारा भगवत्- अर्पण कर दिये हैं संपूर्ण कर्म जिसने	आत्मवन्तम्	= { परमात्म- परायण पुरुषको
		कर्माणि	= कर्म
		न	= नहीं
		निबध्नन्ति	= बाधते हैं

(और)

निष्कामयोगमें
स्थित होकर युद्ध
करने के लिये
आज्ञा ।

तस्मादज्ञानसंभूतं हृत्स्थं ज्ञानासिनात्मनः ।

छित्तवैनं संशयं योगमातिष्ठोत्तिष्ठ भारत ॥४२॥

तस्मात्, अज्ञानसंभूतम्, हृत्स्थम्, ज्ञानासिना, आत्मन,
छित्त्वा, एनम्, संशयम्, योगम्, आतिष्ठ, उत्तिष्ठ, भारत ॥४२॥

तस्मात्	= इससे	हृत्स्थम्	= हृदयमें स्थित
भारत	= { हे भरतवशी अर्जुन (त्)	एनम्	= इस
योगम्	= { समत्वबुद्धिरूप योगमें	आत्मनः	= अपने
आतिष्ठ	= स्थित हो (और)	संशयम्	= संशयको
अज्ञान- संभूतम्	= { अज्ञानसे उत्पन्न हुए	ज्ञानासिना	= { ज्ञानरूप तलवारद्वारा
		छित्त्वा	= छेदन करके (युद्धके लिये-)
		उत्तिष्ठ	= खड़ा हो

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्याया योगशास्त्रे
श्रीकृष्णार्जुनसंवादे ज्ञानकर्ममन्यासयोगो नाम चतुर्थोऽध्यायः ।४।

अथ कुरुक्षेत्रेऽध्यायः

प्रधान विषय-१ से ६ तक सांख्ययोग और निष्काम कर्मयोगका
निर्णय, (७-१२) सांख्ययोगी और निष्काम कर्मयोगीके लक्षण और
उनकी महिमा, (१३-२६) ज्ञानयोगका विषय, (२७-२९) भक्ति-
सहित ध्यानयोगका वर्णन ।

अर्जुन उवाच

संन्यास और
निष्काम कर्मयोग
में कौन श्रेष्ठ है
यह जाननेके
लिये अर्जुनका
प्रश्न ।

संन्यासं कर्मणां कृष्ण पुनर्योगं च शंससि ।
यच्छ्रेय एतयोरेकं तन्मे ब्रूहि सुनिश्चितम् ॥ १ ॥
संन्यासम्, कर्मणाम्, कृष्ण, पुनः, योगम्, च, शंससि,
यत्, श्रेय, एतयो, एकम्, तत्, मे, ब्रूहि, सुनिश्चितम् ॥१॥

उसके उपरान्त अर्जुनने पूछा—

कृष्ण = हे कृष्ण	एतयोः = इन दोनोंमें
(आप)	एकम् = एक
कर्मणाम् = कर्मोंके	यत् = जो
संन्यासम् = संन्यासकी	सुनिश्चितम् = { निश्चय
च = और	किया हुआ
पुनः = फिर	श्रेयः = कल्याणकारक
योगम् = { निष्काम	(होवे)
कर्मयोगकी	तत् = उसको
शंससि = प्रशंसा करते हो	मे = मेरे लिये
(इसलिये)	ब्रूहि = कहिये

श्रीभगवानुवाच

संन्यासः कर्मयोगश्च निःश्रेयसकरावुभौ ।

अपेक्षा निष्काम
कर्मयोगकी श्रेष्ठ-
ताका कथन ।

तयोस्तु कर्मसंन्यासात्कर्मयोगो विशिष्यते ॥ २ ॥

तयो . तु, कर्मसंन्यासात्, कर्मयोगः, विशिष्यते ॥ २ ॥

इस प्रकार अर्जुनने पूछनेपर श्रीकृष्ण महाराज बोले हे अर्जुन—

संन्यासः = { कर्मोंका	कर्मयोगः = { निष्काम
संन्यास*	कर्मयोग†
च = और	उभौ = यह दोनों ही

* अर्थात् मन, इन्द्रियो और शरीरद्वारा होनेवाले संपूर्ण कर्मोंमें
कर्तापनका त्याग ।

† अर्थात् समत्वबुद्धिसे भगवत्-अर्थ कर्मोंका करना ।

निःश्रेयसकरौ =	{ परम कल्याणके करनेवाले है	कर्म- संन्यासात् =	{ कर्मोंके संन्याससे
तु	= परन्तु	कर्मयोगः =	{ निष्काम कर्म- योग (साधनमें सुगम होनेसे)
तयोः	= उन दोनोंमें भी	विशिष्यते =	श्रेष्ठ है

निष्काम कर्म-
योगीकी प्रशंसा ।

ज्ञेयः स नित्यसंन्यासी यो न द्वेष्टि न काङ्क्षति ।
निर्द्वन्द्वो हि महाबाहो सुखं बन्धात्प्रमुच्यते ॥

ज्ञेयः, सः, नित्यसंन्यासी, य, न, द्वेष्टि, न, काङ्क्षति,
निर्द्वन्द्व, हि, महाबाहो, सुखम्, बन्धात्, प्रमुच्यते ॥३॥

इसलिये—

महाबाहो =	हे अर्जुन	ज्ञेयः =	समझने योग्य है
यः =	जो पुरुष	हि =	क्योंकि
न =	न (किसीसे)	निर्द्वन्द्वः =	{ रागद्वेषादि द्वन्द्वोंसे रहित हुआ पुरुष
द्वेष्टि =	द्वेष करता है (और)	सुखम् =	सुखपूर्वक
न =	न (किसीकी)	बन्धात् =	{ ससाररूप बन्धनसे
काङ्क्षति =	आकाङ्क्षा करता है	प्रमुच्यते =	मुक्त हो जाता है
सः =	वह (निष्काम कर्मयोगी)		
नित्य- संन्यासी }	सदा संन्यासी ही		

फलमें सांख्य-
योग और
निष्कामकर्मयोग
की एकता ।

सांख्ययोगौ पृथग्बालाः प्रवदन्ति न पण्डिताः ।
एकमप्यास्थितः सम्यग्भयोर्विन्दते फलम् ॥४॥
सांख्ययोगौ, पृथक्, बाला, प्रवदन्ति, न, पण्डिता,
एकम्, अपि, आस्थित, सम्यक्, उभयो, विन्दते, फलम् ॥४॥

और हे अर्जुन-

(ऊपर कहे हुए)		पण्डिताः = पण्डितजन	
		(क्योंकि दोनोंमेंसे)	
सांख्ययोगौ =	संन्यास और	एकम्	= एकमे
	निष्काम	अपि	= भी
	कर्मयोगको	सम्यक्	= अच्छी प्रकार
वालाः	= मूर्खलोग	आस्थितः	= स्थित हुआ (पुरुष)
पृथक्	= अलग अलग	उभयोः	= दोनोंके
(फलवाले)		फलम्	= { फलरूप
प्रवदन्ति	= कहते हैं		{ परमात्माको
न	= न कि	चिन्दते	= प्राप्त होता है

॥ यत्सांख्यैः प्राप्यते स्थानं तद्योगैरपि गम्यते ।

एकं सांख्यं च योगं च यः पश्यति स पश्यति ॥

यत्, सांख्यै, प्राप्यते, स्थानम्, तत्, योगैः, अपि, गम्यते,
एकम्, सांख्यम्, च, योगम्, च, य, पश्यति, स, पश्यति ॥५॥

तथा-

सांख्यैः	= ज्ञानयोगियोंद्वारा	गम्यते	= { प्राप्त किया
यत्	= जो		{ जाता है
स्थानम्	= परमश्रम		(इसलिये)
प्राप्यते	= { प्राप्त किया	यः	= जो पुरुष
	{ जाता है	सांख्यम्	= ज्ञानयोग
योगैः	= { निष्काम	च	= और
	{ कर्मयोगियोंद्वारा	योगम्	= { निष्काम
अपि	= भी		{ कर्मयोगको
तत्	= वही		(फलरूपसे)

एकम् = एक	च = ही
पश्यति = देखता है	(यथार्थ)
सः = वह	पश्यति = देखता है

निष्काम कर्म- संन्यासस्तु महाबाहो दुःखमाप्नुमयोगतः ।
 योगकी अपेक्षा योगयुक्तो मुनिर्व्रह्म नचिरेणाधिगच्छति ॥६॥
 साख्य योगके सन्त्यासः, तु, महाबाहो, दुःखम्, आप्नुम्, अयोगतः,
 नताका कथन । योगयुक्तः, मुनि, ब्रह्म, नचिरेण, अधिगच्छति ॥६॥

तु = परन्तु	दुःखम् = कठिन है (और)
महाबाहो = हे अर्जुन	
अयोगतः = { निष्काम कर्म- योगके बिना	मुनिः = { भगवत्- स्वरूपको मनन करनेवाला
संन्यासः = { सन्यास अर्थात् मन, इन्द्रियो और शरीरद्वारा होनेवाले सपूर्ण कर्मोंमें कर्ता- पनका त्याग	योगयुक्तः = { निष्काम कर्मयोगी
	ब्रह्म = { परब्रह्म परमात्माको
	नचिरेण = शीघ्र ही
आप्नुम् = प्राप्त होना	अधि- गच्छति = { प्राप्त हो जाता है

निष्काम कर्म- योगयुक्तो विशुद्धात्मा विजितात्मा जितेन्द्रियः ।
 योगी कर्म करता सर्वभूतात्मभूतात्मा कुर्वन्नपि न लिप्यते ॥७॥
 हुआ भी लिपा- योगयुक्तः, विशुद्धात्मा, विजितात्मा, जितेन्द्रिय,
 यमान नहीं होता है इस सर्वभूतात्मभूतात्मा, कुर्वन्, अपि, न, लिप्यते ॥७॥
 विषयका कथन ।

तथा-

विजितात्मा = { वशमें किया
हुआ है शरीर
जिसके ऐसा

जितेन्द्रियः = जितेन्द्रिय

(और)

वि शुद्धात्म { विशुद्ध अन्त
करणवाला

(एव)

सर्व-
भूतात्म- = { सपूर्ण प्राणियोंके
आत्मरूप
भूतात्मा = { परमात्मा में
एकीभाव हुआ

योगयुक्तः = निष्काम कर्मयोगी

कुर्वन् = कर्म करता हुआ

अपि = भी

न { लिपायमान

लिप्यते = { नहीं होता

नैव किञ्चित्करोमीति युक्तो मन्येत तत्त्ववित् ।
पृथक् ।

नैव किञ्चित्करोमीति युक्तो मन्येत तत्त्ववित् ।

पश्यञ्शृण्वन्स्पृशञ्जिघ्रन्निश्चिन्तन्स्वपञ्चसन् ॥

प्रलपन्विसृजन्गृह्णन्नुन्मिषन्निमिषन्नपि ।

इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेषु वर्तन्त इति धारयन् ॥६॥

न, एव, किञ्चित्, करोमि, इति, युक्त, मन्येत, तत्त्ववित्,
पश्यन्, शृण्वन्, स्पृशन्, जिघ्रन्, अश्नन्, गच्छन्, स्वपन्,
ध्वमन्, प्रलपन्, विसृजन्, गृह्णन्, उन्मिषन्, निमिषन्, अपि,
इन्द्रियाणि, इन्द्रियार्थेषु वर्तन्ते, इति, धारयन् ॥ ८-९ ॥

और हे अर्जुन-

तत्त्ववित् = { तत्त्वको जानने-
वाला

युक्तः = नास्त्ययोगी तो

पश्यन् = देखता हुआ

शृण्वन् = सुनता हुआ

स्पृशन् = स्पर्श करता हुआ

जिघ्रन् = संधता हुआ

अश्नन् = { भोजन करता हुआ	अपि = भी
गच्छन् = { गमन करता हुआ	इन्द्रियाणि = सब इन्द्रिया
खपन् = सोता हुआ	इन्द्रियार्थेषु = { अपने अपने अर्थोंमें
श्वसन् = श्वास लेता हुआ	वर्तन्ते = वर्त रही हैं
प्रलपन् = बोलता हुआ	इति = इस प्रकार
विसृजन् = त्यागता हुआ	धारयन् = समझता हुआ
गृह्णन् = { ग्रहण करता हुआ (तथा)	एव = नि सन्देह
उन्मिषन् = { आखोंको खोलता (और)	इति = ऐसे
निमिषन् = मीचता हुआ	मन्येत = माने कि (मैं)
	किञ्चित् = कुछ भी
	न = नहीं
	करोमि = करता हू

भगवदर्थं कर्म ब्रह्मण्याधाय कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा करोति यः ।
करनेवाले की लिप्यते न स पापेन पद्मपत्रमिवाम्भसा ॥१०॥
निलेपतामें पद्म-

पत्रका दृष्टान्त । ब्रह्मणि, आधाय, कर्माणि, सङ्गम्, त्यक्त्वा, करोति, य ,

लिप्यते, न, सः, पापेन, पद्मपत्रम्, इव, अम्भसा ॥ १० ॥

परन्तु हे अर्जुन ! देहाभिमानियोंद्वारा यह साधन होना कठिन

है और निष्काम कर्मयोग सुगम है क्योंकि—

यः = जो पुरुष	त्यक्त्वा = त्यागकर
कर्माणि = सब कर्मोंको	करोति = कर्म करता है
ब्रह्मणि = परमात्मामें	सः = वह पुरुष
आधाय = अर्पण करके (और)	अम्भसा = जलसे
सङ्गम् = आसक्तिको	पद्मपत्रम् = कमलके पत्तेकी

इव	= सद्यः	न	= { लिपायमान
पापेन	= पापसे	लिप्यते	= { नहीं होता

आत्मशुद्धिके कायेन मनसा बुद्ध्या केवलैरिन्द्रियैरपि ।

लिये योगियोंके योगिनः कर्म कुर्वन्ति सङ्गं त्यक्त्वात्मशुद्धये ॥
कर्माचरण का

रूपन । कायेन, मनसा, बुद्ध्या, केवलै, इन्द्रियै, अपि,
योगिन, कर्म, कुर्वन्ति, सङ्गम्, त्यक्त्वा, आत्मशुद्धये ॥ ११ ॥

इमलिये-

योगिनः = निष्काम कर्मयोगी	अपि = भी
(ममत्वबुद्धिरहित)	सङ्गम् = आसक्तिको
केवलैः = केवल	त्यक्त्वा = त्यागकर
इन्द्रियैः = इन्द्रिय	आत्म- = { अन्त करणकी
मनसा = मन	शुद्धये = { शुद्धिके लिये
बुद्ध्या = बुद्धि (और)	कर्म = कर्म
कायेन = शरीरद्वारा	कुर्वन्ति = करते हैं

कर्मफलके त्याग- युक्तः कर्मफलं त्यक्त्वा शान्तिमाप्नोति नैष्ठिकीम् ।

से शान्ति और अयुक्तः कामकारेण फले सक्तो निबध्यते ॥
कामनासे बन्धन

युक्त, कर्मफलम्, त्यक्त्वा, शान्तिम्, आप्नोति, नैष्ठिकीम्,
अयुक्त, कामकारेण, फले, सक्त, निबध्यते ॥ १२ ॥

इमीसे-

युक्तः = { निष्काम	नैष्ठिकीम् = { भगवत्-
कर्मयोगी	प्राप्तिरूप
कर्मफलम् = कर्मोंके फलको	शान्तिम् = शान्तिको
त्यक्त्वा = { परमेश्वरके	आप्नोति = प्राप्त होता है
अर्पण करके	(और)

अयुक्तः = सकामी पुरुष

फले = फलमे

सक्तः = आसक्त हुआ

कामकारेण = कामनाके द्वारा

निवध्यते = बधता है

इसलिये निष्काम कर्मयोग उत्तम है ।

सांख्ययोगीकी
स्थितिका कथन ।

सर्वकर्माणि मनसा संन्यस्यास्ते सुखं वशी ।

नवद्वारे पुरे देही नैव कुर्वन्न कारयन् ॥१३॥

सर्वकर्माणि, मनसा, संन्यस्य, आस्ते, सुखम्, वशी,
नवद्वारे, पुरे, देही, न, एव, कुर्वन्, न, कारयन् ॥१३॥

और हे अर्जुन-

वशी	=	{ वशमें है अन्त - करण जिसके ऐसा सांख्ययोगका आचरण करने- वाला	पुरे	= गरीररूप घरमें
			सर्वकर्माणि	= सब कर्मोंको
			मनसा	= मनसे
			संन्यस्य	= त्यागकर अर्थात् इन्द्रिया इन्द्रियों- के अर्थोंमें वर्तती हैं ऐसे मानता हुआ
देही	=	पुरुष (तो)	सुखम्	= आनन्दपूर्वक (सच्चिदानन्दधन परमात्माके स्वरूपमें)
एव	=	नि सन्देह	आस्ते	= स्थित रहता है
न	=	न		
कुर्वन्	=	करता हुआ (और)		
न	=	न		
कारयन्	=	करवाता हुआ		
नवद्वारे	=	नवद्वारोंवाले		

परमात्मामें
कर्तापनके अ-
भावका कथन ।

न कर्तृत्वं न कर्माणि लोकस्य सृजति प्रभुः ।

न कर्मफलसंयोगं स्वभावस्तु प्रवर्तते ॥१४॥

न, कर्तृत्वम्, न, कर्माणि, लोकस्य, सृजति, प्रभु,
न, कर्मफलसयोगम्, स्वभावः, तु, प्रवर्तते ॥ १४ ॥

और-

प्रभुः	= परमेश्वर (भी)	(वास्तवमे)
लोकस्य	= भूतप्राणियोंके	सृजति = रचता है
न	= न	तु = किन्तु
कर्तृत्वम्	= कर्तापनको (और)	(परमात्माके
न	= न	सकाशसे)
कर्माणि	= कर्मोंको (तथा)	स्वभावः = प्रकृति (ही)
न	= न	प्रवर्तते = वर्तती है अर्थात्
कर्मफल-	= { कर्मोंके फलके	गुण ही गुणोंमें
संयोगम्	= { संयोगको	वर्त रहे हैं

परमात्मा किन्तो
के पाप-पुण्यको

ग्रहण नहीं

करता इस

विषयमें कथन ।

नादत्ते कस्यचित्पापं न चैव सुकृतं विभुः ।

अज्ञानेनावृतं ज्ञानं तेन मुह्यन्ति जन्तवः ॥ १५ ॥

न. आदत्ते, कस्यचित्, पापम्, न, च, एव, सुकृतम्, विभु,
अज्ञानेन, आवृतम्, ज्ञानम्, तेन, मुह्यन्ति, जन्तव ॥ १५ ॥

और-

विभुः	= { सर्वव्यापी	सुकृतम् = शुभकर्मको
	{ परमात्मा	एव = भी
न	= न	आदत्ते = ग्रहण करता है
कस्यचित्	= किन्मीके	(किन्तु)
पापम्	= पापकर्मको	अज्ञानेन = मायाके द्वारा
च	= और	ज्ञानम् = ज्ञान
न	= न	आवृतम् = ढका हुआ है
	(किन्मीके)	तेन = इससे

जन्तवः = सब जीव । मुह्यन्ति = मोहित हो रहे हैं

सूर्यके दृष्टान्तसे ज्ञानेन तु तदज्ञानं येषां नाशितमात्मनः ।

ज्ञानकी महिमा ।

तेषामादित्यवज्ज्ञानं प्रकाशयति तत्परम् ॥१६॥

ज्ञानेन, तु, तत्, अज्ञानम्, येषाम्, नाशितम्, आत्मन, तेषाम्, आदित्यवत्, ज्ञानम्, प्रकाशयति, तत्परम् ॥ १६ ॥

तु = परन्तु (वह)

येषाम् = जिनका

ज्ञानम् = ज्ञान

तत् = वह

आदित्यवत् = सूर्यके सदृश

आत्मनः = अन्तःकरणका

अज्ञानम् = अज्ञान

तत्परम् = { उस
सच्चिदानन्द-
धन
परमात्माको

ज्ञानेन = आत्मज्ञानद्वारा

नाशितम् = नाश हो गया है

तेषाम् = उनका

प्रकाशयति = प्रकाशता है*

परमात्मामें तद्बुद्ध्यस्तदात्मानस्तन्निष्ठास्तत्परायणाः ।

तद्रूप हुए महा-
त्माओंको परम-
गतिकी प्राप्ति ।

गच्छन्त्यपुनरावृत्तिं ज्ञाननिर्धूतकल्मषाः ॥१७॥

तद्बुद्ध्य, तदात्मान, तन्निष्ठा, तत्परायणा, गच्छन्ति, अपुनरावृत्तिम्, ज्ञाननिर्धूतकल्मषा ॥ १७ ॥

और हे अर्जुन—

तद्बुद्ध्यः = { तद्रूप है बुद्धि
जिनकी (तथा)

तन्निष्ठाः = { उस सच्चिदानन्द-
धन परमात्मामें ही
है निरन्तर एकी-
भावसे स्थिति
जिनकी ऐसे

तदात्मानः = { तद्रूप है मन
जिनका (और)

* अर्थात् परमात्माके स्वरूपको साक्षात् कराता है ।

तत्परायणाः	= { तत्परायण पुरुष	अपुनरा- वृत्तिम्	= { अपुनरावृत्ति- को अर्थात् परमगतिको
ज्ञाननिर्धूत- कल्मषाः	= { ज्ञानके द्वारा पापरहित हुए	गच्छन्ति	= प्राप्त होते हैं

ज्ञानियों के विद्याविनयसंपन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि ।

नमत्व भावका
कथन और शुनि चैव श्रपाके च पण्डिताः समदर्शिनः ॥

उनकी महिमा । विद्याविनयसंपन्ने, ब्राह्मणे, गवि, हस्तिनि,
शुनि. च, एव, श्रपाके, च, पण्डिता, समदर्शिनः ॥१८॥

ऐसे वे-

पण्डिताः	= ज्ञानीजन	शुनि	= कुत्ते (और)
विद्याविनय- संपन्ने	= { विद्या और विनययुक्त	श्रपाके	= चाण्डालमें
ब्राह्मणे	= ब्राह्मणमें	च	= भी
च	= तथा	सम-	= { समभावसे*
गवि	= गौ	दर्शिनः	= { देखनेवाले
हस्तिनि	= हाथी	एव	= ही (होते हैं)

[,] इहैव तैर्जितः सर्गो येषां साम्ये स्थितं मनः ।

निर्दोषं हि समं ब्रह्म तस्माद्ब्रह्मणि ते स्थिताः ॥

इह, एव, तै, जित, सर्ग, येषाम्, साम्ये, स्थितम्, मन,
निर्दोषम्, हि, समम्, ब्रह्म, तस्मात्, ब्रह्मणि, ते, स्थिता ॥१९॥

इसलिये-

येषाम्	= जिनका	साम्ये	= समत्वभावमें
मनः	= मन	स्थितम्	= स्थित है

* इसका विस्तार गीता अ०६ श्लोक ३२ की टिप्पणीमें देसना चाहिये ।

तैः = उनके द्वारा
 इह = इस जीवित अवस्थामें
 एव = ही
 सर्गः = सपूर्ण ससार
 जितः = जीत लिया गया*
 हि = क्योंकि
 ब्रह्म = { सच्चिदानन्दधन
 परमात्मा

निर्दोषम् = निर्दोष (और)
 समम् = सम है
 तस्मात् = इससे
 ते = वे
 ब्रह्मणि = { सच्चिदानन्दधन
 परमात्मामें ही
 स्थिताः = स्थित हैं

ब्रह्मशान्तीके
 लक्षण और उस-
 को अक्षय सुख-
 की प्राप्ति ।

न प्रहृष्येत्प्रियं प्राप्य नोद्विजेत्प्राप्य चाप्रियम् ।
 स्थिरबुद्धिरसंमूढो ब्रह्मविद्ब्रह्मणि स्थितः ॥२०॥
 न, प्रहृष्येत्, प्रियम्, प्राप्य, न, उद्विजेत्, पाप्य, च, अप्रियम्,
 स्थिरबुद्धि, असंमूढ, ब्रह्मवित्, ब्रह्मणि, स्थित ॥२०॥

और जो पुरुष-

प्रियम् = { प्रियको अर्थात्
 जिसको लोग
 प्रिय समझते हैं
 उसको

प्राप्य = प्राप्त होकर
 न प्रहृष्येत् = हर्षित नहीं हो
 च = और

अप्रियम् = { अप्रियको
 अर्थात् जिस-
 को लोग अप्रिय
 समझते हैं उसको

प्राप्य = प्राप्त होकर
 न उद्विजेत् = उद्वेगवान् न हो
 (ऐसा)

स्थिरबुद्धिः = स्थिरबुद्धि
 असंमूढः = सङ्गयरहित
 ब्रह्मवित् = ब्रह्मवेत्ता पुरुष

ब्रह्मणि = { सच्चिदानन्द-
 धन परब्रह्म
 परमात्मामें

स्थितः = { एकीभावसे
 नित्य स्थित है

* अर्थात् वे जाते हुए ही सत्सारासे मुक्त हैं ।

[„] बाह्यस्पर्शेष्वसक्तात्मा विन्दत्यात्मनि यत्सुखम् ।

स ब्रह्मयोगयुक्तात्मा सुखमक्षयमश्नुते ॥२१॥

बाह्यस्पर्शेषु, असक्तात्मा, विन्दति, आत्मनि, यत्, सुखम्,

स, ब्रह्मयोगयुक्तात्मा, सुखम्, अक्षयम्, अश्नुते ॥२१॥

और—

बाह्य- स्पर्शेषु	=	{ बाहरके विषयों- (तत्) = उसको में अर्थात् सासा- विन्दति = प्राप्त होता है रिक भोगोंमे (और)
असक्तात्मा	=	{ आसक्तिरहित सः = वह पुरुष अन्त करण- { मच्चिदानन्दघन वाला पुरुष ब्रह्मयोग- { परब्रह्म परमात्मा-
आत्मनि	=	{ अन्त करणमे युक्तात्मा = { रूप योगमें एकी-
यत्	=	{ जो भावसे स्थित हुआ
सुखम्	=	{ भगवत्-ध्यान- अक्षयम् = अक्षय जनित सुखम् = आनन्दको आनन्द है अश्नुते = अनुभव करता है

विषयभोगोंकी ये हि संस्पर्शजा भोगा दुःखयोनय एव ते ।

भन्दा ।

आद्यन्तवन्तः कौन्तेय न तेषु रमते बुधः ॥२२॥

ये, हि, संस्पर्शजा, भोगा, दुःखयोनय, एव, ते,

आद्यन्तवन्तः, कौन्तेय, न, तेषु, रमते, बुध ॥२२॥

और—

ये	=	{ जो	{ इन्द्रिय तथा
(यह)			{ संस्पर्शजाः = { विषयोंके सयोगसे उत्पन्न होनेवाले

भोगाः	= सव भोग हैं	आद्यन्तवन्तः	= { आदि अन्त- वाले अर्थात् अनित्य है (इमलिये)
ते	= वे (यद्यपि विषयी पुरुषोको सुख- रूप भासते हैं तो भी)	कौन्तेय	= हे अर्जुन
हि	= नि सन्देह	बुधः	= { बुद्धिमान् विवेकी पुरुष
दुःखयोनयः	= { दुःखके ही	तेषु	= उनमें
एव	= { हेतु हैं (और)	न	= नहीं
		रमते	= रमता

काम-क्रोधके

शक्नोतीहैव यः सोढुं प्राक्शरीरविमोक्षणात् ।

वेगकोभीतनेवाले
योगीकी प्रशंसा ।

कामक्रोधोद्भवं वेगं स युक्तः स सुखी नरः ॥२३॥

शक्नोति, इह, एव, य, सोढुम्, प्राक्, शरीरविमोक्षणात्,

कामक्रोधोद्भवम्, वेगम्, स, युक्त, स, सुखी, नर ॥२३॥

यः	= जो मनुष्य	शक्नोति	= समर्थ है अर्थात्
शरीर-	= { शरीरके नाश		काम क्रोधको
विमोक्षणात्	= { होनेसे		जिसने सदाके
प्राक्	= पहिले		लिये जीत लिया है
एव	= ही	सः	= वह
काम-	= { काम और	नरः	= मनुष्य
क्रोधोद्भवम्	= { क्रोधसे उत्पन्न हुए	इह	= इस लोकमें
वेगम्	= वेगको	युक्तः	= योगी है (और)
सोढुम्	= सहन करनेमें	सः	= वही
		सुखी	= सुखी है

ज्ञानी महात्मा-
ओंके लक्षण और
उनको निर्वाण
ब्रह्मको प्राप्ति ।

योऽन्तःसुखोऽन्तरारामस्तथान्तज्योतिरेव यः ।

स योगी ब्रह्मनिर्वाणं ब्रह्मभूतोऽधिगच्छति ॥

य, अन्तःसुख, अन्तराराम, तथा, अन्तज्योति, एव, य.,
स, योगी, ब्रह्मनिर्वाणम्, ब्रह्मभूत, अधिगच्छति ॥२४॥

यः = जो पुरुष

एव = निश्चय करके

अन्तःसुखः = { अन्तर
आत्मामे ही
सुखवाला है
(और)

अन्तरारामः = { आत्मामे ही
आरामवाला
है

तथा = तथा

यः = जो

अन्तज्योतिः = { आत्मामे ही
ज्ञानवाला है
(ऐसा)

सः = वह
सच्चिदानन्द-
धन परब्रह्म

ब्रह्मभूतः = { परमात्माके
साथ एकी-
भाव हुआ

योगी = सात्त्विकयोगी
ब्रह्मनिर्वाणम् = शान्त ब्रह्मको
अधिगच्छति = प्राप्त होता है

[,] लभन्ते ब्रह्मनिर्वाणमृषयः क्षीणकल्मषाः ।

छिन्नद्वैधा यतात्मानः सर्वभूतहिते रताः ॥२५॥

लभन्ते, ब्रह्मनिर्वाणम्, ऋषयः, क्षीणकल्मषाः,

छिन्नद्वैधाः, यतात्मान, सर्वभूतहिते, रता ॥२५॥

क्षीण-
कल्मषाः = { नाश हो गये हैं
सब पाप जिनके
(तथा)

और-

छिन्नद्वैधाः = { ज्ञान करके
निवृत्त हो गया
है सशय जिनका

	(और)		(ऐसे)
सर्वभूत- हिते रताः	= { सपूर्ण भूत प्राणियोंके हितमें है रति जिनकी	ऋषयः	= ब्रह्मवेत्ता पुरुष
यतात्मानः	= { एकाग्र हुआ है भगवान्‌के ध्यानमें चित्त जिनका	ब्रह्म- निर्वाणम्	= { शान्त परब्रह्मको
		लभन्ते	= प्राप्त होते हैं

१] कामक्रोधवियुक्तानां यतीनां यतचेतसाम् ।

अभितो ब्रह्मनिर्वाणं वर्तते विदितात्मनाम् ॥२६॥

कामक्रोधवियुक्तानाम्, यतीनाम्, यतचेतसाम्,

अभित, ब्रह्मनिर्वाणम्, वर्तते, विदितात्मनाम् ॥२६॥

और—

कामक्रोध- वियुक्तानाम्	= { काम क्रोधसे रहित	यतीनाम्	= { ज्ञानी पुरुषोंके लिये
यतचेतसाम्	= { जीते हुए चित्तवाले	अभितः	= सब ओरसे
विदिता- त्मनाम्	= { परब्रह्म परमात्माका साक्षात्कार किये हुए	ब्रह्म- निर्वाणम्	= { शान्त परब्रह्म परमात्मा ही
		वर्तते	= प्राप्त है

संक्षेपसे फल- स्पर्शान्कृत्वा बहिर्वाह्यांश्चक्षुश्चैवान्तरे भुवोः ।

सहित ध्यान-
योगका कथन ।

प्राणापानौ समौ कृत्वा नासाभ्यन्तरचारिणौ ॥

स्पर्शान्, कृत्वा, बहिः, बाह्यान्, चक्षुः, च, एव, अन्तरे, भ्रुवोः,
प्राणापानौ, समौ, कृत्वा, नासाभ्यन्तरचारिणौ ॥२७॥

और हे अर्जुन-

बाह्यान् = बाहरके	अन्तरे = बीचमें
स्पर्शान् = विषय भोगोको	(स्थित करके)
(न चिन्तन करता	(तथा)
हुआ)	नासा-
बहिः = बाहर	भ्यन्तर-
एव = ही	चारिणौ = { नासिकामें
कृत्वा = त्यागकर	{ विचरनेवाले
च = और	प्राणापानौ = { प्राण और
चक्षुः = नेत्रोंकी दृष्टिको	{ अपान
भ्रुवोः = मृकुटीके	{ वायुको
	समौ = सम
	कृत्वा = करके

॥] यतेन्द्रियमनोबुद्धिर्मुनिर्मोक्षपरायणः ।

विगतेच्छाभयक्रोधो यः सदा मुक्त एव सः ॥

यतेन्द्रियमनोबुद्धिः, मुनिः, मोक्षपरायणः,

विगतेच्छाभयक्रोधः, यः, सदा, मुक्तः, एव, सः ॥२८॥

यतेन्द्रिय-	{ जीती हुई हैं	यः = जो
मनोबुद्धिः	{ इन्द्रिया मन	मोक्ष-
	{ और बुद्धि	परायणः } = मोक्षपरायण
	{ जिनकी ऐमा	मुनिः = मुनि*

* परमेश्वरके स्वरूपका निरन्तर मनन करनेवाला ।

विगतेच्छा-	= { इच्छा भय और क्रोधसे रहित है }	सदा	= सदा
भयक्रोधः		मुक्तः	= मुक्त
सः	= वह	एव	= ही है

प्रभावसहित परमेश्वर को जाननेसे शान्ति-की प्राप्ति । भोक्तारं यज्ञतपसां सर्वलोकमहेश्वरम् ।
सुहृदं सर्वभूतानां ज्ञात्वा मां शान्तिमृच्छति ॥२६॥
भोक्तारम्, यज्ञतपसाम्, सर्वलोकमहेश्वरम्,
सुहृदम्, सर्वभूतानाम्, ज्ञात्वा, माम्, शान्तिम्, ऋच्छति ॥२९॥
और हे अर्जुन ! मेरा भक्त-

माम्	= मेरेको	सर्व-	= { सपूर्ण भूत-
यज्ञतपसाम्	= { यज्ञ और तपोंका	भूतानाम्	= { प्राणियोंका
भोक्तारम्	= भोगनेवाला (और)	सुहृदम्	= { सुहृद् अर्थात् स्वार्थरहित प्रेमी (ऐसा)
सर्वलोक- महेश्वरम्	= { सपूर्ण लोकोंके ईश्वरोका भी ईश्वर (तथा)	ज्ञात्वा	= तत्त्वसे जानकर
		शान्तिम्	= शान्तिको
		ऋच्छति	= प्राप्त होता है

और सच्चिदानन्दघन परिपूर्ण शान्त ब्रह्मके सिवाय उसकी दृष्टिमें और कुछ भी नहीं रहता केवल वासुदेव ही वासुदेव रह जाता है ।

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्याया

योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे कर्मसंन्यासयोगो

नाम पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

ॐ श्रीपरमात्मने नमः

अथ षष्ठोऽध्यायः

प्रधान विषय—१ से ४ तक निष्काम कर्मयोगका विषय और योगारूढ पुरुषके लक्षण, (५-१०) आत्म-उद्धारके लिये प्रेरणा और भावत्-प्राप्तिवाले पुरुषके लक्षण, (११-३२) विस्तारसे ध्यानयोगका विषय, (३३-३६) मनके निग्रहका विषय, (३७-४७) योगभ्रष्ट पुरुषकी गतिका विषय और ध्यानयोगीकी महिमा ।

श्रीभगवानुवाच

निष्काम कर्म- अनाश्रितः कर्मफलं कार्यं कर्म करोति यः ।
योगीकी प्रशंसा स सन्यासी च योगी च न निरग्निर्न चाक्रियः ॥१॥

अनाश्रित, कर्मफलम्, कार्यम्, कर्म, करोति, यः,
स, सन्यासी, च, योगी, च, न, निरग्निः, न, च, अक्रियः ॥ १ ॥

उसके उपरान्त श्रीकृष्णमहाराज बोले हे अर्जुन—

यः	= जो पुरुष	च	= और (केवल)
कर्मफलम्	= कर्मके फलको	निरग्निः	= { अग्निको
अनाश्रितः	= न चाहता हुआ		{ त्यागनेवाला
कार्यम्	= करने योग्य		(सन्यासी योगी)
कर्म	= कर्म	न	= नहीं है
करोति	= करता है	च	= तथा (केवल)
सः	= वह	अक्रियः	= { क्रियाओको
सन्यासी	= सन्यासी		{ त्यागनेवाला
च	= और		(भी सन्यासी योगी)
योगी	= योगी है	न	= नहीं है

मन्यास और यं संन्यासमिति प्राहुर्योगं तं विद्धि पाण्डव ।
निष्कामकर्मयोग की प्रकृति । न ह्यसंन्यस्तसंकल्पो योगी भवति कश्चन ॥२॥

यम्, संन्यासम्, इति, प्राहुः, योगम्, तम्, विद्धि, पाण्डव,
न, हि, असंन्यस्तसंकल्पः, योगी, भवति, कश्चन ॥ २ ॥

इसलिये—

पाण्डव	= हे अर्जुन	हि	= क्योंकि
यम्	= जिसको	असंन्यस्त-	= { सकल्योको न
संन्यासम्	= संन्यास*	संकल्पः	= { त्यागनेवाला
इति	= ऐसा	कश्चन	= कोई भी पुरुष
प्राहुः	= कहते हैं	योगी	= योगी
तम्	= उसीको (तुम्)	न	= नहीं
योगम्	= योग	भवति	= होता
विद्धि	= जान		

मुमुक्षुके लिये आरुरुक्षोर्मुनेर्योगं कर्म कारणमुच्यते ।
कुरुप्राणके उपाय का कथन । योगारूढस्य तस्यैव शमः कारणमुच्यते ॥३॥

आरुरुक्षो, मुने, योगम्, कर्म, कारणम्, उच्यते,
योगारूढस्य, तस्य, एव, शमः, कारणम्, उच्यते ॥ ३ ॥

और—

योगम्	= { समत्वबुद्धि- रूप योगमें	मुनेः	= { मननशील पुरुषके लिये
आरुरुक्षोः	= { आरूढ होने- की इच्छावाले		(योगकी प्राप्तिमें)

कर्म = { निष्कामभावसे
कर्म करना ही

कारणम् = हेतु

उच्यते = कहा है
(और योगारूढ
हो जानेपर)

तस्य = उस

योगारूढस्य = { योगारूढ
पुरुषके लिये

शमः = { सर्वसकम्पो-
का अभाव

एव = ही (कल्याणमे)

कारणम् = हेतु

उच्यते = कहा है

योगारूढ पुरुष यदा हि नेन्द्रियार्थेषु न कर्मस्वनुपज्जते ।

के लक्षण ।

सर्वसंकल्पसंन्यासी योगारूढस्तदोच्यते ॥४॥

यदा, हि, न, इन्द्रियार्थेषु, न, कर्मसु, अनुपज्जते,

सर्वसंकल्पसंन्यासी, योगारूढ, तदा, उच्यते ॥ ४ ॥

और-

यदा = जिस कालमे

न = न (तो)

इन्द्रियार्थेषु = { इन्द्रियोंके
भोगमे

(अनुपज्जते) = { आसक्त
होना है
(तथा)

न = न

कर्मसु = कर्मोंमें

हि = ही

अनुपज्जते = { आसक्त
होता है

तदा = उस कालमें

सर्वसंकल्प-
संन्यासी = { सर्वसकम्पोका
त्यागी पुरुष

योगारूढः = योगारूढ

उच्यते = कहा जाता है

लक्षणा उद्धार

परनचे, लिये

प्रश्ना ।

उद्धरेदात्मनात्मानं

नात्मानमवसादयेत् ।

आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः ॥५॥

उद्धरेत्, आत्मना, आत्मानम्, न, आत्मानम्, अवसादयेत्,

आत्मा, एव, हि, आत्मन, बन्धु, आत्मा, एव, रिपु, आत्मन ॥५॥

और यह योगारूढता कल्याणमें हेतु कही है इसलिये मनुष्यको चाहिये कि

आत्मना	= अपने द्वारा	हि	= क्योंकि (यह)
आत्मानम्	= आपका (ससारसमुद्रसे)	आत्मा	= जीवात्मा आप
उद्धरेत्	= उद्धार करे (और)	एव	= ही (तो)
आत्मानम्	= { अपने आत्माको	आत्मनः	= अपना
न	= { अवगतिमें	बन्धुः	= मित्र है (और)
अवसादयेत्	= { न पहुँचावे	आत्मा	= आप
		एव	= ही
		आत्मनः	= अपना
		रिपुः	= शत्रु है

अर्थात् और कोई दूसरा शत्रु या मित्र नहीं है ।

॥] बन्धुरात्मात्मनस्तस्य येनात्मैवात्मना जितः ।

अनात्मनस्तु शत्रुत्वे वर्तेतात्मैव शत्रुवत् ॥६॥

बन्धु , आत्मा , आत्मन , तस्य , येन , आत्मा , एव , आत्मना ,

जित , अनात्मन , तु , शत्रुत्वे , वर्तेत , आत्मा , एव , शत्रुवत् ॥६॥

तस्य	= उस	जितः	= जीता हुआ है
आत्मनः	= जीवात्माका तो (वह)	तु	= और
आत्मा	= आप	अनात्मनः =	{ जिसके द्वारा मन और इन्द्रियोंसहित शरीर नहीं जीता गया है उसका (वह)
एव	= ही		
बन्धुः	= मित्र है (कि)		
येन	= जिस		
आत्मना	= जीवात्माद्वारा	आत्मा	= आप
आत्मा	= { मन और इन्द्रियों- महित शरीर		

एव = ही | शत्रुत्वे = शत्रुतामें
 शत्रुवत् = शत्रुके सदृश | वर्तेत = वर्तता है

परमात्माको
 प्राप्त हुए योगीके
 दृक्षण ।

जितात्मनः प्रशान्तस्य परमात्मा समाहितः ।

शीतोष्णसुखदुःखेषु तथा मानापमानयोः ॥७॥

जितात्मन , प्रशान्तस्य, परमात्मा, समाहित ,

शीतोष्णसुखदुःखेषु, तथा, मानापमानयो ॥ ७ ॥

और हे अर्जुन—

शीतोष्ण- सुखदुःखेषु	= { सर्दी गर्मी और सुख- दुःखादिकोमें	जितात्मनः = { स्वाधीन आत्मावाले पुरुषके
तथा	= तथा	(ज्ञानमें)
मानाप- मानयोः	= { मान और अपमानमें	परमात्मा = { मच्चिदानन्द- घन परमात्मा
प्रशान्तस्य	= { जिमके अन्त - करणकी वृत्तिया अच्छी प्रकार शान्त है अर्थात् विकार- रहित है (ऐसे) ।	समाहित = { सम्यक् प्रकारसे स्थित है अर्थात् उसके ज्ञानमें परमात्माके सिवाय अन्य कुछ है ही नहीं

[,] ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा कूटस्थो विजितेन्द्रियः ।

युक्त इत्युच्यते योगी समलोष्टाश्मकाञ्चनः ॥८॥

ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा, कूटस्थ , विजितेन्द्रिय ,

युक्त . इति, उच्यते, योगी, समलोष्टाश्मकाञ्चन ॥ ८ ॥

और—

ज्ञान-	= { ज्ञान विज्ञानसे	(तथा)	
विज्ञान-	= { तृप्त है अन्त -		{ समान है
तृप्तात्मा	= { करण जिसका	समलोपाश्रम-	{ मिट्टी पत्थर
	(तथा)	काश्चनः	{ और सुवर्ण
कूटस्थः	= { विकाररहित है		{ जिसके (वह)
	= { स्थिति जिसकी	योगी	= योगी
	(और)		{ युक्त अर्थात्
विजितेन्द्रियः	= { अच्छी प्रकार	युक्तः	= { भगवत्की
	{ जीती हुई हैं		{ प्राप्तिवाला है
	{ इन्द्रिया	इति	= ऐसे
	{ जिसकी	उच्यते	= कहा जाता है

सबसे समबुद्धि-
वाले योगीका
प्रशंसा ।

सुहृन्मित्रार्युदासीनमध्यस्थद्वेष्यबन्धुषु ।
साधुष्वपि च पापेषु समबुद्धिर्विशिष्यते ॥६॥

सुहृन्मित्रार्युदासीनमध्यस्थद्वेष्यबन्धुषु,
साधुषु, अपि, च, पापेषु, समबुद्धि, विशिष्यते ॥ ९ ॥

और जो पुरुष—

सुहृद्	= सुहृद्*	(तथा)	
मित्र	= मित्र	साधुषु	= धर्मात्माओंमें
अरि	= वैरी	च	= और
उदासीन	= उदासीन†	पापेषु	= पापियोंमें
मध्यस्थ	= मध्यस्थ‡	अपि	= भी
द्वेष्य	= द्वेषी (और)	समबुद्धिः	= { समान भाव-
बन्धुषु	= बन्धुगणोंमें		{ वाला है

* स्वार्थरहित सवका हित करनेवाला । † पक्षपातरहित ।

‡ दोनों ओरका भगवत् चाहनेवाला ।

(वह) | विशिष्यते = अति श्रेष्ठ है

ध्यानयोगका
साधन करनेके
लिये प्रेरणा ।

योगी युञ्जीत सततमात्मानं रहसि स्थितः ।

एकाकी यतचित्तात्मा निराशीरपरिग्रहः ॥१०॥

योगी, युञ्जीत, सततम्, आत्मानम्, रहसि, स्थितः,

एकाकी, यतचित्तात्मा, निराशी, अपरिग्रह ॥१०॥

इमलिये उचित है कि—

यत-	जिसका मन और	एकाकी	= अकेला ही
चित्तात्मा =	इन्द्रियोसहित	रहसि	= एकान्त स्थानमें
	अगीर जीता हुआ	स्थितः	= स्थित हुआ
	है ऐसा	सततम्	= निरन्तर
निराशी =	वासनारहित (और)	आत्मानम्	= आत्माको
अपरिग्रह =	संग्रहरहित	युञ्जीत	= { (परमेश्वरके ध्यानमें) लगावे
योगी = योगी			

ध्यानयोगके
लिये आसन-
स्थापनकी विधि ।

शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य स्थिरमासनमात्मनः ।

नात्युच्छ्रितं नातिनीचं चैलाजिनकुशोत्तरम् ॥११॥

शुचौ, देशे, प्रतिष्ठाप्य, स्थिरम्, आसनम्, आत्मन ,

न, अत्युच्छ्रितम्, न, अतिनीचम्, चैलाजिनकुशोत्तरम् ॥११॥

कैसे कि—

शुचौ	= शुद्ध	आत्मनः	= अपने
देशे	= भूमिमें	आसनम्	= आसनको
चैलाजिन-	{ कुशा मृगछाला	न	= न
कुशोत्तरम्	{ और वस्त्र है	अत्युच्छ्रितम्	= अति ऊंचा
	{ उपरोपरि		(और)
	{ जिसके ऐसे	न	= न

अतिनीचम् = अति नीचा | प्रतिष्ठाप्य = स्थापन करके
 स्थिरम् = स्थिर

भासनपर बैठ- तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा यतचित्तेन्द्रियक्रियः ।
 कर योग का उपविश्यासने युञ्ज्याद्योगमात्मविशुद्धये ॥१२॥
 साधन करनेके लिये कथन । तत्र, एकाग्रम्, मन, कृत्वा, यतचित्तेन्द्रियक्रिय,
 उपविश्य, आसने, युञ्ज्यात्, योगम्, आत्मविशुद्धये ॥१२॥

और—

तत्र	= उस	यत-	{ चित्त और इन्द्रियोकी क्रियाओंको वशमें किया हुआ
आसने	= आसनपर	चित्तेन्द्रिय-	
उपविश्य	= बैठकर (तथा)	क्रियः	
मनः	= मनको	आत्म-	{ अन्तःकरणकी शुद्धिके लिये
एकाग्रम्	= एकाग्र	विशुद्धये	
कृत्वा	= करके	योगम्	
		युञ्ज्यात्	= अभ्यास करे

ध्यानयोगकी विधि । समं कायशिरोग्रीवं धारयन्नचलं स्थिरः ।

संप्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयन् ॥१३॥

ममम्, कायशिरोग्रीवम्, धारयन्, अचलम्, स्थिर,
 संप्रेक्ष्य, नासिकाग्रम्, स्वं, दिश, च, अनवलोकयन् ॥१३॥

उसकी विधि इस प्रकार है कि—

कायशिरो-	{ काया शिर और ग्रीवाको	अचलम्	= अचल
ग्रीवम्		धारयन्	= धारण किये हुए
ममम्	= ममान	स्थिरः	= दृढ़
च	= और		(होकर)

स्वम्	= अपने	दिशः	= { अन्य
नासिकाग्रम्	= { नासिकाके	अनव-	= { दिशाओंको
संप्रेक्ष्य	= देखकर	लोकयन्	= { न देखता
			= { हुआ

॥] प्रशान्तात्मा विगतभीर्ब्रह्मचारिव्रते स्थितः ।

मनः संयम्य मच्चित्तो युक्त आसीत् मत्परः ॥१४॥

प्रशान्तात्मा, विगतभी, ब्रह्मचारिव्रते, स्थितः,

मन, संयम्य, मच्चित्त, युक्त, आसीत्, मत्पर. ॥१४॥

और-

ब्रह्मचारि-	= { ब्रह्मचर्यके	युक्तः	= सावधान
व्रते	= { व्रतमें		(होकर)
स्थितः	= { स्थित रहता	मनः	= मनको
	= { हुआ	संयम्य	= वशमें करके
विगतभीः	= भयरहित (तथा)	मच्चित्तः	= { मेरेमें लगे हुए
	= { अच्छी प्रकार		= { चित्तवाला
प्रशान्तात्मा	= शान्त अन्त -		(और)
	= { करणवाला	मत्परः	= मेरे परायण हुआ
	(और)	आसीत्	= स्थित होवे

ध्यानयोगका

पक्ष ।

युञ्जन्नेवं सदात्मानं योगी नियतमानसः ।

शान्तिं निर्वाणपरमां मत्संस्थामधिगच्छति ॥१५॥

युञ्जन्, एवम्, मदा, आत्मानम्, योगी, नियतमानसः,

शान्तिम्, निर्वाणपरमाम्, मत्संस्थाम्, अधिगच्छति ॥१५॥

एवम् = इस प्रकार [आत्मानम् = आत्माको

सदा	= निरन्तर	मत्संस्थाम्	= { मेरेमें स्थिति- रूप
युञ्जन्	= { (परमेश्वरके स्वरूपमें) लगाता हुआ	निर्वाण-	= { परमानन्द परमाम्
नियत-	= { स्वाधीन मन-	परमाम्	= { पराकाष्ठा- वाली
मानसः	= { वाला	शान्तिम्	= शान्तिको
योगी	= योगी	अधिगच्छति	= प्राप्त होता है

अनियमित नात्यश्नतस्तु योगोऽस्ति न चैकान्तमनश्नतः ।

भोजनादि करने-
वालेको योगकी
अप्राप्ति ।

न चाति स्वप्नशीलस्य जाग्रतो नैव चार्जुन ॥१६॥

न, अति, अश्नत, तु, योग, अस्ति, न, च, एकान्तम्, अनश्नत,
न, च, अति, स्वप्नशीलस्य, जाग्रत, न, एव, च, अर्जुन ॥१६॥

परन्तु-

अर्जुन	= हे अर्जुन	च	= तथा
योगः	= यह योग	न	= न
न	= न	अति	= अति
तु	= तो	स्वप्न-	= { शयन करनेके
अति	= बहुत	शीलस्य	= { स्वभाववालेका
अश्नतः	= खानेवालेका	च	= और
अस्ति	= सिद्ध होना है	न	= न
च	= और	जाग्रतः	= { अत्यन्त जागनेवालेका
न	= न	एव	= ही
एकान्तम्	= विष्कुल		
अनश्नतः	= न खानेवालेका		(मिद्ध होना है)

नियमित आहार
विहार आदि
करने वालेको
योगी प्राप्ति ।

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु ।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा ॥१७॥
युक्ताहारविहारस्य, युक्तचेष्टस्य, कर्मसु,
युक्तस्वप्नावबोधस्य, योग, भवति, दुःखहा ॥१७॥

यह—

दुःखहा	= { दुःखोका नाश करनेवाला	युक्त- चेष्टस्य	= { यथायोग्य चेष्टा करने- वालेका (और)
योगः	= योग (तो)		
युक्ताहार- विहारस्य	= { यथायोग्य आहार और विहार करने- वालेका (तथा)	युक्तस्वप्नाव- बोधस्य	= { यथायोग्य शयन करने तथा जागने- वालेका (ही) (सिद्ध)
कर्मसु	= कर्मोंमें	भवति	= होता है

योगयुक्त पुरुष-
का लक्षण ।

यदा विनियतं चित्तमात्मन्येवावतिष्ठते ।
निःस्पृहः सर्वकामेभ्यो युक्त इत्युच्यते तदा ॥१८॥

यदा, विनियतम्, चित्तम्, आत्मनि, एव, अवतिष्ठते,
निःस्पृह, सर्वकामेभ्यो युक्त, इति, उच्यते, तदा ॥१८॥

इस प्रकार योगके अभ्यासमें—

विनियतम्	= { अत्यन्त वशमें किया हुआ	एव	= ही
चित्तम्	= चित्त	अवतिष्ठते	= { भली प्रकार स्थित हो जाता है
यदा	= जिस कालमें		
आत्मनि	= परमात्मामें	तदा	= उस कालमें

सर्व-	=	{ सपूर्ण	युक्तः	= योगयुक्त
कामेभ्यः	=	{ कामनाओंसे	इति	= ऐसा
निःस्पृहः	=	{ स्पृहारहित	उच्यते	= कहा जाता है
		{ हुआ पुरुष		

दीपकके दृष्टान्त- यथा दीपो निवातस्थो नेङ्गते सोपमा स्मृता ।

से योगीके चित्त-
की उपमा ।

योगिनो यतचित्तस्य युञ्जतो योगमात्मनः ॥१६॥

यथा, दीप , निवातस्थ , न, इङ्गते, सा, उपमा, स्मृता,

योगिन , यतचित्तस्य, युञ्जत , योगम्, आत्मन ॥१७॥

और—

यथा	= जिस प्रकार	उपमा	= उपमा
निवातस्थः	= { वायुरहित	आत्मनः	= परमात्माके
	{ स्थानमें स्थित	योगम्	= { ध्यानमे लगे
दीपः	= दीपक	युञ्जतः	= { हुए
न	= नहीं	योगिनः	= योगीके
इङ्गते	= { चलायमान	यतचित्तस्य	= { जीते हुए
	{ होता है		{ चित्तकी
सा	= वैसी ही	स्मृता	= कही गई है

ध्यानयोगशी यत्रोपरमते चित्तं निरुद्धं योगसेवया ।

परिपक्व अवस्था-
के लक्षण और

यत्र चैवात्मनात्मानं पश्यन्नात्मनि तुष्यति ॥२०॥

ध्यानदेशी के

यत्र, उपरमते, चित्तम्, निरुद्धम्, योगसेवया,

आनन्द की

यत्र, च, एव, आत्मना, आत्मानम्, पश्यन्, आत्मनि, तुष्यति ॥

नहिना ।

और हे अर्जुन—

यत्र	= जिस अवस्थामे	निरुद्धम्	= निरुद्ध हुआ
योगसेवया	= { योगके	चित्तम्	= चित्त
	{ अभ्यासमे	उपरमते	= उपराम हो जाता है

च	= और	पश्यन्	= { साक्षात् करता
यत्र	= जिस अवस्थामें		{ हुआ
	(परमेश्वरके ध्यानसे)	आत्मनि	= { सच्चिदानन्द-
आत्मना	= { शुद्ध हुई सूक्ष्म		{ घन परमात्मा में
	{ बुद्धिद्वारा	एव	= ही
आत्मानम्	= परमात्माको	तुष्यति	= सतुष्ट होता है

[,] सुखमात्यन्तिकं यत्तद्बुद्धिग्राह्यमतीन्द्रियम् ।

वेत्ति यत्र न चैवायं स्थितश्चलति तत्त्वतः ॥२१॥

सुखम्, आत्यन्तिकम्, यत्, तत्, बुद्धिग्राह्यम्, अतीन्द्रियम्,
वेत्ति, यत्र, न, च, एव, अयम्, स्थित, चलति, तत्त्वतः ॥२१॥

तथा-

अतीन्द्रियम्	= { इन्द्रियोसे	तत्	= उसको
	{ अतीत	यत्र	= जिस अवस्थामें
	{ केवल शुद्ध	वेत्ति	= अनुभव करता है
	{ हुई सूक्ष्म	च	= और
बुद्धिग्राह्यम्	= { बुद्धिद्वारा	(यत्र)	= जिस अवस्थामें
	{ ग्रहण करने	स्थितः	= स्थित हुआ
	{ योग्य	अयम्	= यह योगी
यत्	= जो	तत्त्वतः	= भगवत्स्वरूपसे
आत्यन्तिकम्	= अनन्त	न एव	= नहीं
सुखम्	= आनन्द है	चलति	= चलायमान होता है

[,] यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः ।

यस्मिन्स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचाल्यते ॥

यम्, लब्ध्वा, च, अपरम्, लाभम्, मन्यते, न, अधिकम्, ततः,
यस्मिन्, स्थित, न, दुःखेन, गुरुणा, अपि, विचाल्यते ॥२२॥

और—

यम्	= { (परमेश्वरकी प्राप्तिरूप) जिस लाभको	च	= और
लब्ध्वा	= प्राप्त होकर	यस्मिन्	= { (भगवत्-प्राप्ति- रूप) जिस अवस्थामें
ततः	= उससे	स्थितः	= स्थित हुआ योगी
अधिकम्	= अधिक	गुरुणा	= बड़े भारी
अपरम्	= दूसरा (कुछ भी)	दुःखेन	= दुःखसे
लाभम्	= लाभ	अपि	= भी
न	= नहीं	न	= { चलायमान
मन्यते	= मानता है	विचाल्यते	= { नहीं होता है

तत्पर होकर
ध्यानयोग करने-
के लिये कथन ।

तं विद्याद्दुःखसंयोगवियोगं योगसंज्ञितम् ।

स निश्चयेन योक्तव्यो योगोऽनिर्विण्णचेतसा ॥२३॥

तम्, वियात्, दुःखसंयोगवियोगम्, योगसंज्ञितम्,

न, निश्चयेन, योक्तव्य, योग, अनिर्विण्णचेतसा ॥२३॥

और जो—

दुःख-	= { दुःखरूप ससार-	सः	= वह
मयोग-	= { के मयोगमे	योगः	= योग
वियोगम्	= गहित है (तथा)	अनिर्विण्ण-	= { न उक्तताये हुए
योग-	= { निमक्ता नाम	चेतमा	= { चित्तमे अर्थात्
संज्ञितम्	= { योग है		= { तत्पर दृष्ट चित्तमे
तम्	= उसको	निश्चयेन	= निश्चयपूर्वक
वियात्	= जानना चाहिये	योक्तव्यः	= करना कर्तव्य है

अचिन्त्यस्वरूप
परमात्मा के
ध्यानकी विधि ।

संकल्पप्रभवान्कामांस्त्यक्त्वा सर्वानशेषतः ।

मनसैवेन्द्रियग्रामं विनियम्य समन्ततः ॥२४॥

संकल्पप्रभवान्, कामान्, त्यक्त्वा, सर्वान्, अशेषतः,
मनसा, एव, इन्द्रियग्रामम्, विनियम्य, समन्ततः ॥२४॥

इसलिये मनुष्यको चाहिये कि-

संकल्प-	= { सकल्पमे उत्पन्न	(और)
प्रभवान्	= { होनेवाली	मनसा = मनके द्वारा
सर्वान्	= सपूर्ण	इन्द्रियग्रामम् = { इन्द्रियोके
कामान्	= कामनाओंको	{ समुदायको
अशेषतः	= { नि शेषतासे	समन्ततः = सब ओरसे
	{ अर्थात् वासना	एव = ही
	{ और आसक्ति-	विनियम्य = { अच्छी
	{ सहित	{ प्रकार वशमें
त्यक्त्वा	= त्यागकर	{ करके

[,] शनैः शनैरुपरमेद्बुद्ध्या धृतिगृहीतया ।

आत्मसंस्थं मनः कृत्वा न किञ्चिदपि चिन्तयेत् ॥

शनैः, शनैः, उपरमेत्, बुद्ध्या, धृतिगृहीतया,

आत्मसंस्थम्, मनः, कृत्वा, न, किञ्चित्, अपि, चिन्तयेत् ॥२५॥

शनैः	= { क्रम क्रममे (अभ्यास करना हुआ)	धृति-	} = वैर्ययुक्त
शनैः		गृहीतया	
		बुद्ध्या	= बुद्धिद्वारा
		मनः	= मनको
उपरमेत्	= { उपरामनाको प्राप्त होवे (तथा)	आत्म-	= { परमात्मामें स्थित
		मंस्थम्	

कृत्वा = करके

(परमात्माके

सिवाय और)

किंचित् = कुछ

अपि = भी

न चिन्तयेत् = चिन्तन न करे

मनको परमात्मा
में लगावेगा
उपाय ।

यतो यतो निश्चरति मनश्चञ्चलमस्थिरम् ।

ततस्ततो नियम्यैतदात्मन्येव वशं नयेत् ॥२६॥

यत , यत , निश्चरति, मन , चञ्चलम्, अस्थिरम्,

तत , तत , नियम्य, एतत्, आत्मनि, एव, वशम्, नयेत् ॥२६॥

परन्तु जिसका मन वशमें नहीं हुआ हो उसको चाहिये कि-

एतत् = यह

ततः = उस

अस्थिरम् = { स्थिर न रहने-
वाला (और)

ततः = उससे

नियम्य = रोककर

चञ्चलम् = चञ्चल

(बारम्बार)

मनः = मन

आत्मनि = परमात्मा में

यतः = { जिस जिस

एव = ही

यतः = { कारणसे

वशम् = निरोध

निश्चरति = { सासारिक पदार्थों-
में विचरता है

नयेत् = करे

प्रशान्तमनसं ह्येनं योगिनं सुखमुत्तमम् ।

उपैति शान्तरजमं ब्रह्मभूतमकल्मषम् ॥२७॥

प्रशान्तमनसम्, हि, एनम्, योगिनम्, सुखम्, उत्तमम्,

उपैति, शान्तरजमम्, ब्रह्मभूतम्, अकल्मषम् ॥२७॥

हि = क्योंकि

प्रशान्त-

मनसम् = { जिसका मन
अच्छी प्रकारअकल्मषम् = { जो पापमें
रहित है (और)

शान्त है (और) ।

प्रशान्त मन
उत्तम और
ब्रह्मभूत
प्रशान्त ।

शान्त-	= { जिसका रजोगुण शान्त हो गया है ऐसे	योगिनम्	= योगीको
रजसम्		उत्तमम्	= अति उत्तम
एनम्	= इस	सुखम्	= आनन्द
ब्रह्म-	= { सच्चिदानन्दधन ब्रह्मके साथ एकीभाव हुए	उपैति	= प्राप्त होता है
भूतम्			

१] युञ्जन्नेवं सदात्मानं योगी विगतकल्मषः ।

सुखेन ब्रह्मसंस्पर्शमत्यन्तं सुखमश्नुते ॥२८॥

युञ्जन्, एवम्, सदा, आत्मानम्, योगी, विगतकल्मष, सुखेन, ब्रह्मसंस्पर्शम्, अत्यन्तम्, सुखम्, अश्नुते ॥२८॥

और वह-

विगतकल्मष	= पापरहित	सुखेन	= सुखपूर्वक
योगी	= योगी	ब्रह्म-	= { परब्रह्म परमात्माकी प्राप्तिरूप
एवम्	= इस प्रकार	संस्पर्शम्	
सदा	= निरन्तर	अत्यन्तम्	= अनन्त
आत्मानम्	= आत्माको	सुखम्	= आनन्दको
युञ्जन्	= { (परमात्मामें) लगाता हुआ	अश्नुते	= अनुभव करता है

सर्वत्र आत्म

दर्शकों वाच्यन ।

सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि ।

ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः ॥२९॥

सर्वभूतस्थम्, आत्मानम्, सर्वभूतानि, च, आत्मनि, ईक्षते, योगयुक्तात्मा, सर्वत्र, समदर्शन ॥२९॥

और हे अर्जुन-

योग- युक्तात्मा	=	{ सर्वव्यापी अनन्त चेतनमे एकी- भावसे स्थितिरूप योगमे युक्त हुए आत्मावाला (तथा)	}	आत्मानम्	= आत्माको
				सर्वभूतस्थम्	= { सपूर्ण भूतोमे वर्षमे जलके मृदु व्यापक (देखना है)
सर्वत्र	=	मयमे		च	= और
समदर्शनः	=	{ समभावसे देखने- वाला योगी		सर्वभूतानि	= सपूर्ण भूतोंको
				आत्मनि	= आत्मामे
				ईक्षते	= देखता है

अर्थात् जैसे स्वप्नसे जगा हुआ पुरुष स्वप्नके ससारको अपने अन्तर्गत सकल्पके आधार देखता है वैसे ही वह पुरुष सपूर्ण भूतोको अपने सर्वव्यापी अनन्त चेतन आत्माके अन्तर्गत सकल्पके आधार देखता है ।

तत्र परमान-
दस्य प्रमाणम् ।

यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति ।

तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति ॥३०॥

य , माम्, पश्यति, सर्वत्र, सर्वम्, च, मयि, पश्यति,
तस्य, अहम्, न, प्रणश्यामि, स, च, मे, न, प्रणश्यति ॥३०॥

और-

य	=	ना पुरुष	पश्यति	=	देखता है
सर्वत्र	=	सपूर्ण भूतोमे	च	=	और
माम्	=	{ मयके आत्मरूप (मुझ वामुन्देवको ही (व्यापक)	सर्वम्	=	सपूर्ण भूतोको
			मयि	=	{ मुझ वामुन्देवके अन्तर्गत

• तस्य अहम् ० ओह ६ देवता चाहिये ।

पश्यति	= देखता है	च	= और
तस्य	= उसके (लिये)	सः	= वह
अहम्	= मैं	मे	= मेरे (लिये)
न प्रणश्यामि	= { अदृश्य नहीं होता हूँ	न प्रणश्यति	= { अदृश्य नहीं होता है—

क्योंकि वह मेरेमें एकीभावसे स्थित है ।

सर्वभूतस्थितं यो मां भजत्येकत्वमास्थितः ।

सर्वभूतस्थितं

परमात्माकी एकी

भावसे ध्यान

करनेवाले योगी

की महिमा ।

सर्वथा वर्तमानोऽपि स योगी मयि वर्तते ॥३१॥

सर्वभूतस्थितम्, य, माम्, भजति, एकत्वम्, आस्थित.,

सर्वथा, वर्तमान, अपि, स, योगी, मयि, वर्तते ॥३१॥

इस प्रकार—

यः	= जो	भजति	= भजता है
एकत्वम्	= एकीभावमें	सः	= वह
आस्थितः	= स्थित हुआ	योगी	= योगी
सर्वभूत- स्थितम्	= { सपूर्ण भूतोंमें आत्मरूपसे स्थित	सर्वथा	= सब प्रकारसे
		वर्तमानः	= वर्तता हुआ
		अपि	= भी
माम्	= { मुझ सच्चिदानन्दघन वासुदेवको	मयि	= मेरेमें ही
		वर्तते	= वर्तता है—

क्योंकि उसके अनुभवमें मेरे सिवाय अन्य कुछ है ही नहीं ।

परम योगीके आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति योऽर्जुन ।

पश्यति ।

सुखं वा यदि वा दुःखं स योगी परमो मतः ॥३२॥

आत्मौपम्येन, सर्वत्र, समम्, पश्यति, य, अर्जुन,
सुखम्, वा, यदि, वा, दुःखम्, सः, योगी, परम, मत ॥३२॥

और-

अर्जुन	= हे अर्जुन	सुखम्	= सुख
यः	= जो योगी	यदि वा	= अथवा
आत्मौपम्येन	= { अपनी सादृश्यतासे*	दुःखम्	= दुःखको (भी) (सबमें सम देखता है)
सर्वत्र	= सपूर्ण भूतोंमें	सः	= वह
समम्	= सम	योगी	= योगी
पश्यति	= देखता है	परमः	= परम श्रेष्ठ
वा	= और	मतः	= माना गया है

अर्जुन उवाच

मनकी चञ्चलता- योऽयं योगस्त्वया प्रोक्तः साम्येन मधुसूदन ।

के कारण अर्जुन एतस्याहं न पश्यामि चञ्चलत्वात्स्थितिं स्थिराम् ॥

और मन के य, अयम्, योग, त्वया, प्रोक्त, साम्येन, मधुसूदन,
निग्रहको कठिन एतस्य, अहम्, न, पश्यामि, चञ्चलत्वात्, स्थितिम्, स्थिराम् ॥३३॥
मानना ।

इस प्रकार भगवान्‌के वाक्योंको सुनकर अर्जुन बोला-

मधुसूदन	= हे मधुसूदन	अयम्	= यह
यः	= जो	योगः	= ध्यानयोग

* जैसे मनुष्य अपने मस्तक, हाथ, पैर और गुदादिके साथ ब्राह्मण, क्षत्रिय, शूद्र और म्लेच्छादिकोंका-सा बर्ताव करता हुआ भी उनमें आत्मभाव अर्थात् अपनापना समान होनेसे, सुख और दुःखको समान ही देखता है वैसे ही सब भूतोंमें देखना 'अपनी सादृश्यतासे' सम देखना है ।

त्वया	= आपने	स्थिराम्	= { बहुत काल- तक ठहरने- वाली
साम्येन	= समत्वभावसे	स्थितिम्	= स्थितिको
प्रोक्तः	= कहा है	न	= नहीं
एतस्य	= इसकी	पश्यामि	= देखता हूँ
अहम्	= मैं (मनके)		
चञ्चलत्वात्	= चञ्चल होनेसे		

॥ चञ्चलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद्दृढम् ।

तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम् ॥३४॥

चञ्चलम्, हि, मन, कृष्ण, प्रमाथि, बलवत्, दृढम्,

तस्य, अहम्, निग्रहम्, मन्ये, वायो, इव, सुदुष्करम् ॥३४॥

हि	= क्योंकि	(अतः)	= इसलिये
कृष्ण	= हे कृष्ण (यह)	तस्य	= उसका
मनः	= मन	निग्रहम्	= वशमें करना
चञ्चल	= बड़ा चञ्चल (और)	अहम्	= मैं
प्रमाथि	= { प्रमथनस्वभाव- वाला है (तथा)	वायोः	= वायुकी
दृढम्	= बड़ा दृढ (और)	इव	= भाति
बलवत्	= बलवान् है	सुदुष्करम्	= अति दुष्कर
		मन्ये	= मानता हूँ

श्रीभगवानुवाच

असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम् ।

अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते ॥३५॥

असंशयम्, महाबाहो, मन, दुर्निग्रहम्, चलम्,

अभ्यासेन, तु, कौन्तेय, वैराग्येण, च, गृह्यते ॥३५॥

इस प्रकार अर्जुनके पूछनेपर श्रीकृष्ण भगवान् बोले-

महाबाहो	= हे महाबाहो	कौन्तेय	= { हे कुन्तीपुत्र अर्जुन
असंशयम्	= नि सन्देह		
मनः	= मन		
चलम्	= चञ्चल (और)	अभ्यासेन	= { अभ्यास* अर्थात् स्थितिके लिये बारम्बार यत्न करनेसे
दुर्निग्रहम्	= { कठिनातासे वशमें होने- वाला है	च	= और
		वैराग्येण	= वैराग्यसे
तु	= परन्तु	गृह्यते	= वशमें होता है

इसलिये इसको अवश्य वशमें करना चाहिये ।

मनके निग्रहसे
ध्यानयोग की
प्राप्ति ।

असंयतात्मना योगो दुष्प्राप इति मे मतिः ।

वश्यात्मना तु यतता शक्योऽवाप्तुमुपायतः ॥३६॥

असंयतात्मना, योग, दुष्प्राप, इति, मे, मति,

वश्यात्मना, तु, यतता, शक्य, अवाप्तुम्, उपायत ॥३६॥

क्योंकि-

असंयतात्मना	= { मनको वशमें न करनेवाले पुरुषद्वारा	दुष्प्रापः	= { दुष्प्राप्य है अर्थात् प्राप्त होना कठिन है
योगः	= योग	तु	= और
		वश्यात्मना	= स्वाधीन मनवाले

* गीता अ० १२ श्लोक ९ की टिप्पणामें इसका विस्तार देखना चाहिये ।

यतता	= { प्रयत्नशील पुरुषद्वारा	शक्यः	= सहज है
उपायतः	= साधन करनेसे	इति	= यह
अवाप्तुम्	= प्राप्त होना	मे	= मेरा
		मतिः	= मत है

अर्जुन उवाच

योगज्ञः पुनश्च योऽयतिः श्रद्धयोपेतो योगाच्चलितमानसः ।

गतिके सम्बन्धमें अप्राप्य योगसंसिद्धिं कां गतिं कृष्ण गच्छति ॥

और उभयभ्रष्ट अयति, श्रद्धया, उपेत, योगात्, चलितमानस,
होनेकी वृत्ति अप्राप्य, योगसंसिद्धिम्, काम्, गतिम्, कृष्ण, गच्छति ॥३७॥
करना ।

इत्थपर अर्जुन बोला-

कृष्ण	= हे कृष्ण	योग-	{ योगकी सिद्धिको
योगात्	= योगसे	संसिद्धिम्	= { अर्थात् भगवत्-
चलित-	{ चलायमान हो		{ साक्षात्कारताको
मानसः	= { गमा है मन	अप्राप्य	= न प्राप्त होकर
	{ जिसका ऐसा	काम्	= किम्
अयतिः	= शिथिल यत्नवाला	गतिम्	= गतिको
श्रद्धया }	= श्रद्धायुक्त पुरुष	गच्छति	= प्राप्त होता है
उपेतः }			

[,] कच्चिन्नोभयविभ्रष्टश्छिन्नाभ्रमिव नश्यति ।

अप्रतिष्ठो महाबाहो विमूढो ब्रह्मणः पथि ॥३८॥

कच्चित्, न, उभयविभ्रष्ट, छिन्नाभ्रम्, इव, नश्यति,

अप्रतिष्ठ, महाबाहो, विमूढ, ब्रह्मण, पथि ॥३८॥

और-

महाबाहो = हे महाबाहो कच्चित् = क्या (वह)

ब्रह्मणः	= भगवत्प्राप्तिके	इव	= भाति
पथि	= मार्गमें		{ दोनों ओरसे
विमूढः	= मोहित हुआ	उभय-	{ अर्थात् भगवत्-
अप्रतिष्ठः	= { आश्रयरहित	विभ्रष्टः	= { प्राप्ति और
	= { पुरुष		{ सासारिक भोगोंसे
			{ भ्रष्ट हुआ
छिन्नाभ्रम्	= { छिन्न-भिन्न	न	= { नष्ट तो नहीं हो
	= { बादलकी	नश्यति	= { जाना है ?

संशय निवारण करनेके लिये धर्जुन की भगवान् से प्रार्थना ।

एतन्मे संशयं कृष्ण छेत्तुमर्हस्यशेषतः ।
 त्वदन्यः संशयस्यास्य छेत्ता न ह्युपपद्यते ॥३६॥

एतत्, मे, संशयम्, कृष्ण, छेत्तुम्, अर्हसि, अशेषतः,
 त्वदन्य, संशयस्य, अस्य, छेत्ता, न, हि, उपपद्यते ॥३९॥

कृष्ण	= हे कृष्ण	हि	= क्योंकि
मे	= मेरे	त्वदन्यः	= { आपके सिवाय
एतत्	= इस		{ दूसरा
संशयम्	= संशयको	अस्य	= इस
अशेषतः	= सपूर्णतासे	संशयस्य	= संशयका
छेत्तुम्	= { छेदन करनेके	छेत्ता	= छेदन करनेवाला
	= { लिये (आप ही)	न	= { मिलना संभव
अर्हसि	= योग्य हैं	उपपद्यते	= { नहीं है

श्रीभगवानुवाच

धर्जुनकी शक्ती के उत्तरमें निष्कामकर्म करने-वाले श्रीदुर्गनिका निषेध ।

पार्थ नैवेह नामुत्र विनाशस्तस्य विद्यते ।
 न हि कल्याणकृत्कश्चिद्दुर्गतिं तात गच्छति ॥४०॥

पार्थ, न, एव, इह, न, अमुत्र, विनाश, तस्य, विद्यते,
 न, हि, कल्याणकृत्, कश्चित्, दुर्गतिम्, तात, गच्छति ॥४०॥

इस प्रकार अर्जुनके पूछनेपर श्रीकृष्ण भगवान् बोले—

पार्थ	= हे पार्थ	तात	= हे प्यारे
तस्य	= उस पुरुषका	कश्चित्	= कोई भी
न	= न तो		{ शुभ कर्म
इह	= इस लोकमें (और)	कल्याण-	{ करनेवाला
न	= न	कृत्	= अर्थात्
अमुत्र	= परलोकमें		{ भगवत्-अर्थ
एव	= ही		{ कर्म करनेवाला
विनाश	= नाश	दुर्गतिम्	= दुर्गतिको
विद्यते	= होता है	न	= नहीं
हि	= क्योंकि	गच्छति	= प्राप्त होता है

योगभ्रष्ट पुरुषको प्राप्य पुण्यकृतां लोकानुषित्वा शाश्वतीः समाः ।
 चर्गलोक और शुचीनां श्रीमतां गेहे योगभ्रष्टोऽभिजायते ॥४१॥
 पवित्र धनवानों-
 के घरमें जन्म प्राप्य पुण्यकृताम्, लोकान्, उपित्वा, शाश्वती, समा,
 प्राप्त लेनेवा शुचीनाम्, श्रीमताम्, गेहे, योगभ्रष्ट, अभिजायते ॥४१॥
 कथन ।

किन्तु वह—

योगभ्रष्टः	= योगभ्रष्ट पुरुष	शाश्वतीः	= बहुत
पुण्य-	} = पुण्यवानोंके	समाः	= वर्षोंतक
कृताम्		उपित्वा	= बाम करके
लोकान्	= { लोकोको अर्थात् स्वर्गादिक उत्तम लोकोको	शुचीनाम्	= शुद्ध आचरणवाले
प्राप्य	= प्राप्त होकर	श्रीमताम्	= { श्रीमान् पुरुषोंके
(उनमें)		गेहे	= घरमें
		अभिजायते	= जन्म लेता है

वैराग्यवान् योग- अथवा योगिनामेव कुले भवति धीमताम् ।
 भ्रष्टकी क्षानियों- एतद्धि दुर्लभतरं लोके जन्म यदीदृशम् ॥४२॥
 के कुलमें उत्पत्ति और साधन में अथवा, योगिनाम्, एव, कुले, भवति, धीमताम्,
 स्वामयिक प्र- एतत्, हि, दुर्लभतरम्, लोके, जन्म, यत्, ईदृशम् ॥४२॥
 वृत्ति होने का कथन ।

अथवा	= अथवा	(परन्तु)
	(वैराग्यवान् पुरुष उन	ईदृशम् = इस प्रकारका
	लोकोमें न जाकर)	यत् = जो
धीमताम्	= ज्ञानवान्	एतत् = यह
योगिनाम्	= योगियोंके	जन्म = जन्म है (मो)
एव	= ही	लोके = मसारमे
कुले	= कुलमें	हि = नि सन्देह
भवति	= जन्म लेता है	दुर्लभतरम् = अति दुर्लभ है

[„] तत्र तं बुद्धिसंयोगं लभते पौर्वदेहिकम् ।

यतते च ततो भूयः संसिद्धौ कुरुनन्दन ॥४३॥

तत्र, तम्, बुद्धिसंयोगम्, लभते, पौर्वदेहिकम्,
 यतते, च, तत, भूय, संसिद्धौ, कुरुनन्दन ॥४३॥

और वह पुरुष-

तत्र	= वहा	बुद्धि- संयोगम् = { बुद्धिके संयोगको अर्थात् समत्व- बुद्धियोगके संस्कारोंको
तम्	= उस	
पौर्व-	{ पहिले शरीरमे साधन किये हुए	
देहिकम्		

	(अनायाम ही)	भूयः	= फिर
लभते	= प्राप्त हो जाता है		(अच्छी प्रकार)
च	= और	संसिद्धौ	= { भगवत्प्राप्तिके
कुरुनन्दन	= हे कुरुनन्दन		{ निमित्त
ततः	= उसके प्रभावसे	यतते	= यत्न करता है

पूर्वाभ्यासेन तेनैव हियते ह्यवशोऽपि सः ।
 जिज्ञासुरपि योगस्य शब्दब्रह्मातिवर्तते ॥४४॥

इह से पुन योग-
 साधनमें लगने-
 का कथन ।

पूर्वाभ्यासेन तेन, एव, हियते, हि, अवश, अपि, स ,
 जिज्ञासु , अपि, योगस्य, शब्दब्रह्म, अतिवर्तते ॥४४॥

आर-

सः	= वह *		(तथा)
अवशः	= { विप्रयोके वशमें हुआ	योगस्य	= { समन्व बुद्धि- रूप योगका
अपि	= भी		
तेन	= उम	जिज्ञासुः	= जिज्ञासु
पूर्वाभ्यासेन	= { पहिलेके अभ्यासमें	अपि	= भी
एव	= ही		
हि	= नि मन्देह	शब्दब्रह्म	= { विदमें कहे हुए मकाम कर्मोंके फलको
हियते	= { भगवत्की ओर आकर्षित किया जाता है	अतिवर्तते	= { उल्लंघन कर जाना है

* यथा "वह" शब्दसे आमानोके परम जन्म लेनेवाला योगभट्ट पुरुष
 भगवन्ना चाहिए ।

परमगतिकी प्राप्तिके लिये भक्ति प्रयत्नसे अनेकजन्मसंसिद्धस्ततो याति परां गतिम् ॥४५॥
 अभ्यास करने- प्रयत्नात्, यतमान, तु, योगी, संशुद्धकिन्त्रिप,
 की आवश्यकता अनेकजन्मसंसिद्ध, तत, याति, पराम्, गतिम् ॥४५॥

जब कि इम प्रकार मन्द प्रयत्न करनेवाला योगी भी परम-
 गतिको प्राप्त हो जाता है तब क्या कहना है कि-

अनेक-जन्म-संसिद्धः	= { अनेक जन्मोंसे अन्त करणकी शुद्धिरूप सिद्धि- को प्राप्त हुआ	संशुद्ध- किन्त्रिपः	= { सपूर्ण पापोंसे अच्छी प्रकार शुद्ध होकर
तु	= और	तत	= { उस साधनके प्रभावसे
प्रयत्नात्	= अति प्रयत्नसे	पराम्	= परम
यतमानः	= { अभ्यास करने- वाला	गतिम्	= गतिको
योगी	= योगी	याति	= { प्राप्त होता है अर्थात् परमात्मा- को प्राप्त होता है

योगीकी महिमा तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः ।
 और योगी बनने के लिये आज्ञा । कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन ॥
 तपस्विभ्य, अधिक, योगी, ज्ञानिभ्य, अपि, मत, अधिक,
 कर्मिभ्य, च, अधिक, योगी, तस्मात्, योगी, भव, अर्जुन ॥४६॥

क्योंकि-

योगी	= योगी	च	= और
तपस्विभ्यः	= तपस्वियोंसे	ज्ञानिभ्यः	= { शास्त्रके ज्ञान- वालोंसे
अधिकः	= श्रेष्ठ है		

अपि	= भी	योगी	= योगी
अधिकः	= श्रेष्ठ	अधिकः	= श्रेष्ठ है
मतः	= माना गया है	तस्मात्	= इससे
	(तथा)	अर्जुन	= हे अर्जुन (तू)
कर्मिभ्यः	= { निकाम कर्म करनेवालोसे (भी) }	योगी	= योगी
		भव	= हो

सम योगियोंमें योगिनामपि सर्वेषां मद्भतेनान्तरात्मना ।

एकानयोगी की
प्रेरणा ।

श्रद्धावान्भजते यो मां स मे युक्ततमो मतः ॥४७॥

योगिनाम्, अपि, सर्वेषाम्, मद्भतेन, अन्तरात्मना,

श्रद्धावान्, भजते, य, माम्, म, मे, युक्ततम, मत ॥४७॥

और हे प्यारे—

सर्वेषाम्	= सर्व	माम्	= मेरेको
योगिनाम्	= योगियोंमें	भजते	= { निरन्तर भजना है
अपि	= भी	मः	= वह योगी
यः	= जो	मे	= मुझे
श्रद्धावान्	= श्रद्धावान् योगी	युक्ततम	= परमश्रेष्ठ
मद्भतेन	= मेरेमे लगे हुए	मतः	= मान्य है
अन्तरात्मना	= अन्तरात्मासे		

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मसिद्धान्तायामष्टाध्याय

योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे आत्मनयमयोगो

नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

हरि ॐ तत्सत् हरि ॐ तत्सत् हरि ॐ तत्सत्

ॐ श्रीपरमात्मने नमः

अथ सप्तमोऽध्यायः

प्रधान विषय—१ से ७ तत्त्वविज्ञानसहित ज्ञानका विषय, (८-१२) सपूर्ण पदार्थोंमें कारणरूपसे भगवान्की व्यापकताका कथन, (१३-१९) आसुरी स्वभाववालोंकी निन्दा और भगवद्भक्तोंकी प्रशंसा, (२०-२३) अन्य देवताओंकी उपासनाका विषय, (२४-३०) भगवान्के प्रभाव और स्वरूपको न जाननेवालोंकी निन्दा और जाननेवालोंकी महिमा ।

श्रीभगवानुवाच

ज्ञानसहित मय्यासक्तमनाः पार्थ योगं युञ्जन्मदाश्रयः ।

भक्तियोग सुनने-
के लिये अर्जुन-

असंशयं समग्रं मां यथा ज्ञास्यसि तच्छृणु ॥१॥

के प्रति भगवान्- मयि, आसक्तमना, पार्थ, योगम्, युञ्जन्, मदाश्रयः,
की आज्ञा ।

असंशयम्, समग्रम्, माम्, यथा, ज्ञास्यसि, तत्, शृणु ॥ १ ॥

उसके उपरान्त श्रीकृष्ण भगवान् बोले-

पार्थ	= हे पार्थ (तू)		
मयि	= मेरेमें		
आसक्त- मनाः	= { अनन्य प्रेमसे आसक्त हुए मनवाला (और) (अनन्य भावसे)	समग्रम्	= { सपूर्ण विभूति बल ऐश्वर्यादि गुणोंसे युक्त सर्वका आत्म- रूप
मदाश्रयः	= मेरे परायण	यथा	= जिस प्रकार
योगम्	= योगमें	असंशयम्	= संशयरहित
युञ्जन्	= लगा हुआ	ज्ञास्यसि	= जानेगा
माम्	= मुझको	तत्	= उसको
		शृणु	= सुन

विज्ञानसहित ज्ञानं तेऽहं सविज्ञानमिदं वक्ष्याम्यशेषतः ।
 ज्ञानका वणन यज्ज्ञात्वा नेह भूयोऽन्यज्ज्ञातव्यमवशिष्यते ॥२॥
 करनेके लिये भगवान् की ज्ञानम्, ते, अहम्, सविज्ञानम्, इदम्, वक्ष्यामि, अशेषतः,
 प्रतिज्ञा और यत्, ज्ञात्वा, न, इह, भूयः, अन्यत्, ज्ञातव्यम्, अवशिष्यते ॥२॥
 उसकी महिमा ।

अहम्	= मैं	ज्ञात्वा	= जानकर
ते	= तेरे लिये	इह	= ससारमे
इदम्	= इस	भूयः	= फिर
सविज्ञानम्	= रहस्यमहित	अन्यत्	= और कुछ भी
ज्ञानम्	= तत्त्वज्ञानको	ज्ञातव्यम्	= जानने योग्य
अशेषतः	= सपूर्णतामे	न	= { शेष नहीं
वक्ष्यामि	= कहूँगा (कि)	अवशिष्यते	= { रहता है
यत्	= जिसको		

हजारों मनुष्यों मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चित्तति सिद्ध्ये ।
 मैं भगवान् को यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः ॥३॥
 करनेवाले जानने- मनुष्याणाम्, सहस्रेषु, कश्चित्, यतति, सिद्ध्ये,
 वाले की दुर्लभता या निरूपण । यतताम्, अपि, सिद्धानाम्, कश्चित्, माम्, वेत्ति, तत्त्वतः ॥३॥

परन्तु—

सहस्रेषु	= हजारों	यतताम्	= उन यत् करनेवाले
मनुष्याणाम्	= मनुष्योंमे	सिद्धानाम्	= योगिधर्मोंने
कश्चित्	= कोई ही मनुष्य	अपि	= भी
सिद्ध्ये	= मेरी प्राप्तिके लिये		{ कोई ही पुरुष
यतति	= यत् करता है	कश्चित्	= { (मेरे परायण
	(और)		हुआ)

माम् = मेरेको
तत्त्वतः = तत्त्वसे

वेत्ति = { जानता है अर्थात्
यथार्थ मर्मसे जानता है

अपरा प्रकृति- भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च ।
का वर्णन ।

अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा ॥४॥

भूमि , आप , अनलः, वायु , खम्, मन , बुद्धि , एव, च,
अहंकारः, इति, इयम्, मे, भिन्ना, प्रकृति , अष्टधा ॥४॥

और हे अर्जुन-

भूमिः = पृथिवी

आपः = जल

अनलः = अग्नि

वायुः = वायु (और)

खम् = आकाश (तथा)

मनः = मन

बुद्धिः = बुद्धि

च = और

अहंकारः = अहंकार

एव = भी

इति = ऐसे

इयम् = यह

अष्टधा = आठ प्रकारसे

भिन्ना = विभक्त हुई

मे = मेरी

प्रकृतिः = प्रकृति है

परा प्रकृति- अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम् ।
का वर्णन ।

जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत् ॥५॥

अपरा, इयम्, इतः, तु, अन्याम्, प्रकृतिम्, विद्धि, मे, पराम्,
जीवभूताम्, महाबाहो, यया, इदम्, धार्यते, जगत् ॥५॥

मो—

इयम् = { यह (आठ प्रकार-
के मेरीवाली)

तु = तो

अपरा = { अपरा है अर्थात्
मेरी जड़ प्रकृति
है (और)

महाबाहो	= हे महाबाहो	प्रकृतिम्	= प्रकृति
इतः	= इममे	विद्धि	= जान (कि)
अन्याम्	= दूसरीको	यया	= जिससे
मे	= मेरी	इदम्	= यह (सपूर्ण)
जीवभृताम्	= जीवरूप	जगत्	= जगत्
पराम्	= { परा अर्थात् चेतन	धार्यते	= { धारण किया जाता है

मत्सारके कारण एतद्योनीनि भूतानि सर्वाणीत्युपधारय ।

का वाक्यन ।

अहं कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा ॥६॥

एतद्योनीनि, भूतानि, सर्वाणि, इति, उपधारय,

अहम्. कृत्स्नस्य, जगत्, प्रभव, प्रलय, तथा ॥ ६ ॥

और हे अर्जुन तू-

इति	= ऐसा	(और)	
उपधारय	= समझ (कि)	अहम्	= मैं
सर्वाणि	= सपूर्ण	कृत्स्नस्य	= सपूर्ण
भूतानि	= भूत	जगतः	= जगत्का
एतद्योनीनि	= { इन दोनों प्रवृत्तियोमे ही उत्पत्ति गले है	प्रभवः	= उत्पत्ति
		तथा	= तथा
		प्रलय	= प्रलयरूप हू-

अर्थात् सपूर्ण जगत्का मूलकारण हू ।

परमेष्ठे वे सन्तः परतरं नान्यत्किञ्चिदस्ति धनंजय ।

मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव ॥७॥

रूपका वचन ।

सन्त, परतरम्, न, अन्यत्, किञ्चित्, अस्ति, धनजय,

मयि, सर्वम्, इदम्, प्रोतम्, सूत्रे, मणिगणा, इव ॥ ७ ॥

द्वयलिये—

धनंजय	= हे धनंजय	इदम्	= यह
मत्तः	= मेरेसे	सर्वम्	= सपूर्ण (जगत्)
परतरम्	= सिवाय	सूत्रे	= सूत्रमें
किंचित्	= किंचित्मात्र भी	मणिगणाः	= { (सूत्रके) मणियोंके
अन्यत्	= दूसरी वस्तु	इव	= सदृश
न	= नहीं	मयि	= मेरेमें
अस्ति	= है	प्रोतम्	= गुया हुआ है

रसादिरूपसे रसोऽहमप्सु कौन्तेय प्रभास्मि शशिसूर्ययोः ।
 अल आदि में मगवान् की प्रणवः सर्ववेदेषु शब्दः खे पौरुषं नृषु ॥८॥
 व्यापकता का रस , अहम्, अप्सु, कौन्तेय, प्रभा, अस्मि, शशिसूर्ययो ,
 कान । प्रणव , सर्ववेदेषु, शब्द , खे, पौरुषम्, नृषु ॥ ८ ॥

कैसे कि—

कौन्तेय	= हे अर्जुन	सर्ववेदेषु	= सपूर्ण वेदोंमें
अप्सु	= जलमें	प्रणवः	= ओंकार हू (तथा)
अहम्	= मैं	खे	= आकाशमें
रसः	= रस हू (तथा)	शब्द.	= शब्द (और)
शशि- सूर्ययोः	= { चन्द्रमा और सूर्यमें	नृषु	= पुरुषोंमें
प्रभा	= प्रकाश	पौरुषम्	= पुरुषत्व हू
अस्मि	= हू (और)		

गन्धादिरूपमे
पृथिवी आदिमें
भगवान् को
स्थापकता का
कथन ।

पुण्यो गन्धः पृथिव्यां च तेजश्चास्मि विभावसौ ।
जीवनं सर्वभूतेषु तपश्चास्मि तपस्विषु ॥ ६ ॥
पुण्य , गन्ध , पृथिव्याम् , च , तेज , च , अस्मि . विभावसौ ,
जीवनम् , सर्वभूतेषु , तप , च , अस्मि , तपस्विषु ॥ ९ ॥

तथा-

पृथिव्याम् = पृथिवीमें	(उनका)
पुण्यः = पवित्र*	जीवनम् = { जीवन हूँ अर्थात् जिनसे वे जीते हैं वह मैं हूँ
गन्धः = गन्ध	च = और
च = ओर	तपस्विषु = तपस्वियोंमें
विभावसौ = अग्निमे	तपः = तप
तेजः = तेज	अस्मि = हूँ
अस्मि = हूँ	
च = और	
सर्वभूतेषु = सपूर्ण भूतोमे	

बीजातिरूपमे
संपूर्ण भूतोमे
भगवान् की
स्थापकता का
कथन ।

बीज मां सर्वभूतानां विद्धि पार्थ सनातनम् ।
बुद्धिर्बुद्धिमतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहम् ॥ १० ॥
बीजम् , माम् , सर्वभूतानाम् , विद्धि , पार्थ , सनातनम् ,
बुद्धि . बुद्धिमताम् , अस्मि , तेज , तेजस्विनाम् , अहम् ॥ १० ॥

तथा-

पार्थ = हे अर्जुन (त)	सनातनम् = सनातन
सर्व- }	बीजम् = कारण
भूतानाम् } = सपूर्ण भूतोका	माम् = मेरेको ही

* शब्द , रचना , रूप , रस , गन्धसे इस प्रसङ्गम इनके कारणरूप
त मात्त्राशेषोंका प्रकरण है । इस बातको स्पष्ट करनेके लिये उनके साथ पवित्र
शब्द जोड़ा गया है ।

विद्धि	= जान	(और)
अहम्	= मैं	तेजस्विनाम् = तेजस्वियोंका
बुद्धिमताम्	= बुद्धिमानोंकी	तेजः = तेज
बुद्धिः	= बुद्धि	अस्मि = हूँ

बलवि रूपसे बलं बलवतां चाहं कामरागविवर्जितम् ।

भगवान् की
व्यापकता का
वचन ।

धर्माविरुद्धो भूतेषु कामोऽस्मि भरतर्षभ ॥११॥

बलम्, बलवताम्, च, अहम्, कामरागविवर्जितम्,

धर्माविरुद्ध, भूतेषु, काम, अस्मि, भरतर्षभ ॥११॥

और—

भरतर्षभ	= हे भरतश्रेष्ठ	च	= और
अहम्	= मैं	भूतेषु	= सब भूतोंमें
बलवताम्	= बलवानोंका	धर्माविरुद्धः	= { धर्मके अनुकूल अर्थात् शास्त्रके अनुकूल
कामराग- विवर्जितम्	= { आसक्ति और कामनाओंसे रहित	कामः	= काम
बलम्	= { बल अर्थात् सामर्थ्य हूँ	अस्मि	= हूँ

परमात्मसत्तामें ये चैव सात्त्विका भावा राजसास्तामसाश्च ये ।

त्रिगुणमय सपूर्ण
पदार्थोंके होने-

मत्त एवेति तान्विद्धि न त्वहं तेषु ते मयि ॥१२॥

का वचन ।

ये, च, एव, सात्त्विका, भावा, राजसा., तामसा, च, ये,

मत्त, एव, इति, तान्, विद्धि, न, तु, अहम्, तेषु, ते, मयि ॥१२॥

तथा—

च	= और	एव	= भी
---	------	----	------

ये	= जो	तान्	= उन सबको (त)
सात्त्विका	= { सत्त्वगुणमे उत्पन्न होने- वाले	मत्तः	= मेरेसे
भावा	= भाव है	एव	= ही (होनेवाले हैं)
च	= और	इति	= ऐसा
ये	= जो	विद्धि	= जान
राजमा	= रजोगुणमे (तथा)	तु	= परन्तु (वास्तवमे)*
तामसा	= { तमोगुणसे होनेवाले भाव है	तेषु	= उनमे
		अहम्	= मैं (और)
		ते	= वे
		मयि	= मेरेमें
		न	= नहीं है

भगवान् जो तन्त्र
मे न जाननेके
कारणका कथन।

त्रिभिर्गुणमयैर्भावैरेभिः सर्वमिदं जगत् ।

मोहितं नाभिजानाति मामेभ्यः परमव्ययम् ॥

त्रिभिः, गुणमयै भाव, एभिः, सर्वम्, इदम्, जगत्,

मोहितम्, न अभिजानाति, माम एभ्यः, परम्, अव्ययम् ॥ १३ ॥

किन्तु—

गुणमयैः	= गुणोंके कार्यरूप	इदम्	= यह
	(सात्त्विक राजस और तामस)	सर्वम्	= सब
एभिः	= इन	जगत्	= संसार
त्रिभिः	= तीनो प्रकारके	मोहितम्	= { मोहित हो रहा है (इमलिये)
भावैः	= भावोंमें	एभ्यः	= इन तीनो गुणोंसे

* गाथा अध्याय ९ श्लोक ४- । देवता नाद्वये ।

† अर्थात् रागद्वेषादि विकारोंसे और अपूर्ण, निषक्षमे ।

परम् = परे
 माम् = मुझ
 अव्ययम् = अत्रिनाशीको

न
 अभिजानाति = { तत्त्वमे नहीं
 जानता

भगवान्की दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया ।

दुस्तर मायासे
 तरनेके लिये
 सहज उपायका
 कथन ।

मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते ॥१४॥

दैवी, हि, एषा, गुणमयी, मम, माया, दुरत्यया,

माम्, एव, ये, प्रपद्यन्ते, मायाम्, एताम्, तरन्ति, ते ॥१४॥

हि = क्योंकि

एषा = यह

दैवी = { अलौकिक
 = { अर्थात् अति
 अद्भुत

गुणमयी = त्रिगुणमयी

मम = मेरी

माया = योगमाया

दुरत्यया = बड़ी दुस्तर है

(परन्तु)

ये = जो पुरुष

माम् = मेरेको

एव = ही

प्रपद्यन्ते = निरन्तर भजते हैं

ते = वे

एताम् = इस

मायाम् = मायाको

तरन्ति = { उल्लव्न कर जाते
 = { अर्थात् ममार-
 से तर जाते हैं

पापकर्म करन वाले मूर्खों का भगवद्भजन मे प्रवृत्ति न होने का कथन । न मां दुष्कृतिनो मूढाः प्रपद्यन्ते नराधमाः ।

वाले मूर्खों का
 भगवद्भजन मे
 प्रवृत्ति न होने-
 का कथन ।

माययापहतजाना आसुरं भावमाश्रिताः ॥१५॥

न, माम्, दुष्कृतिन, मूढा, प्रपद्यन्ते, नराधमा,

मायया, अपहतजाना, आसुरम्, भावम्, आश्रिता ॥१५॥

ऐसा सुगम उपाय होनेपर भी-

मायया = मायाद्वारा

अपहत-
 जाना = { हरे हुए ज्ञान-
 वाते (ओर)

आसुरम् = आसुरी
भावम् = स्वभावको
आश्रिताः = धारण किये हुए
(तथा)
नराधमा = मनुष्योमें नीच
(और)

दुष्कृतिनः = { दूषित कर्म
करनेवाले
मूढाः = मूढ लोग (तो)
माम् = मेरेको
न = नहीं
प्रपद्यन्ते = भजते हैं

चार प्रकारके
भक्तों का वर्णन

चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन ।

आर्त्ता जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ ॥१६॥

चतुर्विधा, भजन्ते, माम्, जना, सुकृतिन, अर्जुन,
आर्त्ता, जिज्ञासु, अर्थार्थी, ज्ञानी, च, भरतर्षभ ॥१६॥

और—

भरतर्षभ = { है भरतवशियोंमें	च	= और
अर्जुन = अर्जुन	ज्ञानी	= { ज्ञानी अर्थात्
सुकृतिन = उत्तम कर्मवाले	चतुर्विधाः	= चार प्रकारके
अर्थार्थी = अर्थार्थी*	जनाः	= भक्तजन
आर्त्ताः = आर्त्ता†	माम्	= मेरेको
जिज्ञासु = जिज्ञासु‡	भजन्ते	= भजते ८

ज्ञानी भक्तों के
प्रेमकी प्रशंसा ।

तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिर्विशिष्यते ।

प्रियो हि ज्ञानिनोऽत्यर्थमहं स च मम प्रियः ॥१७॥

तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त, एकभक्ति विशिष्यते,

प्रिय हि ज्ञानिन अत्यर्थम्, अहम् स, च, मम प्रिय ॥१७॥

* माम्मा व परार्थों के लिये भजनेवाला ।

† मूढों के लिये भजनेवाला ।

‡ मूर्खों के लिये भजनेवाला ।

तेषाम्	= उनमें (भी)	ज्ञानिनः	= { (मेरेको तत्त्वसे जाननेवाले) ज्ञानीको
नित्ययुक्तः	= { नित्य मेरेमे एकीभावसे स्थित हुआ	अहम्	= मैं
एकभक्तिः	= { अनन्य प्रेम- भक्तियाला	अत्यर्थम्	= अत्यन्त
ज्ञानी	= ज्ञानी भक्त	प्रिय.	= प्रिय हू
विशिष्यते	= अति उत्तम है	च	= और
हि	= क्योंकि	सः	= वह ज्ञानी
		मम	= मेरेको (अत्यन्त)
		प्रियः	= प्रिय है

ज्ञानी भक्तकी उदाराः सर्व एवैते ज्ञानी त्वात्मैव मे मतम् ।
विशेष प्रशंसा ।

आस्थितः स हि युक्तात्मा मामेवानुत्तमां गतिम् ॥

उदारा , सर्वे, एव, एते, ज्ञानी, तु, आत्मा, एव, मे, मतम् ,

आस्थित , स हि, युक्तात्मा, माम्, एव, अनुत्तमाम् , गतिम् ॥ १८ ॥

यद्यपि—

एते	= यह	ज्ञानी	= ज्ञानी (तो)
सर्वे	= सब		(माक्षात्)
एव	= ही	आत्मा	= मेरा स्वरूप
	{ उदार है अर्थात् श्रद्धामहित मेरे	एव	= ही है (प्रेमा)
उदाग.	= { भजनके लिये ममय लगानेवाले होनेमे उत्तम है	मे	= मेरा
		मतम्	= मत है
		हि	= क्योंकि
तु	= परन्तु	सः	= वह

युक्तात्मा	= { स्थिरबुद्धि (ज्ञानी भक्त)	माम्	= मेरेमें
		एव	= ही
अनुत्तमाम्	= अति उत्तम	आस्थितः	= { अच्छी प्रकार स्थित है
गतिम्	= गतिस्वरूप		

ज्ञानी महात्मा- बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते ।
की दुर्लभताका वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः ॥१६॥
वापन ।

बहूनाम्, जन्मनाम्, अन्ते, ज्ञानवान्, माम्, प्रपद्यते,
वासुदेव, सर्वम्, इति, स, महात्मा, सुदुर्लभ ॥१९॥

और जो-

बहूनाम्	= बहुत	इति	= इस प्रकार
जन्मनाम्	= जन्मोंके	माम्	= मेरेको
अन्ते	= अन्तके जन्ममें	प्रपद्यते	= भजता है
ज्ञानवान्	= { तत्त्वज्ञानको प्राप्त हुआ ज्ञानी	सः	= वह
सर्वम्	= सब कुछ	महात्मा	= महात्मा
वासुदेवः	= वासुदेव ही है*	सुदुर्लभः	= अति दुर्लभ है

अन्य देवताओं
को भजनेमें
हेतुका वापन ।

कामैस्तैस्तैर्हृतज्ञानाः प्रपद्यन्तेऽन्यदेवताः ।
तं तं नियममास्थाय प्रकृत्या नियताः स्वया ॥२०॥
वांमे, तै, तै, हृतज्ञाना, प्रपद्यन्ते, अन्यदेवता,
तम्, तम्, नियमम्, आस्थाय, प्रकृत्या, नियता, स्वया ॥२०॥

और ह अर्जुन ! जो विषयासक्त पुरुष हैं वे तो-

स्वया	= अपने	नियताः	= प्रेरे हुए (तथा)
प्रकृत्या	= स्वभावसे	तैः	= उन

* ज्ञानी वासुदेवसे भिन्नान्य अन्य कुछ हैं ही नहीं ।

म० गी० १३-

तैः	= उन	आस्थाय	= धारण करके*
कामैः	= { भोगोंकी कामनाद्वारा	अन्यदेवताः	= { अन्य देवताओंको
हृतज्ञानाः	= ज्ञानसे भ्रष्ट हुए		
तम्	= उस		
तम्	= उस	प्रपद्यन्ते	= { भजते हैं अर्थात् पूजते हैं
नियमम्	= नियमको		

अन्य देवताओं-
में श्रद्धा स्थिर
करनेका कथन ।

यो यो यां यां तनुं भक्तः श्रद्धयार्चितुमिच्छति ।

तस्य तस्याचलां श्रद्धां तामेव विदधाम्यहम् ॥

य , य., याम्, याम्, तनुम्, भक्त , श्रद्धया, अर्चितुम्, इच्छति,
तस्य, तस्य, अचलाम्, श्रद्धाम्, ताम्, एव, विदधामि, अहम् २१

यः	= जो	इच्छति	= चाहता है
यः	= जो	तस्य	= उस
भक्तः	= सकामी भक्त	तस्य	= उस भक्तकी
याम्	= जिस	अहम्	= मैं
याम्	= जिस	ताम्	= { उस ही देवता-
तनुम्	= { देवताके स्वरूपको	एव	= { के प्रति
श्रद्धया	= श्रद्धामे	श्रद्धाम्	= श्रद्धाको
अर्चितुम्	= पूजना	अचलाम्	= स्थिर
		विदधामि	= करता हूँ

अन्य देवताओं-
की उपासनाका
कथन ।

स तथा श्रद्धया युक्तस्तस्याराधनमीहते ।

लभते च ततः कामान्मयैव विहितान्हि तान् ॥

* अथ तन्मि त्वेतादी पूजते नित्यं जा गो निदम लोभम प्रमिदु है
उत्तं त्वम नियमते, धारण करने ।

स, तथा, श्रद्धया, युक्त, तस्य, आराधनम्, ईहते,
लभते, च, तत्, कामान्, मया, एव, विहितान्, हि, तान्॥२२॥

तथा—

सः	= वह पुरुष	ततः	= उस देवतासे
तथा	= उस	मया	= मेरे द्वारा
श्रद्धया	= श्रद्धासे	एव	= ही
युक्तः	= युक्त हुआ	विहितान्	= विधान किये हुए
तस्य	= उस देवताके	तान्	= उन
आराधनम्	= पूजनकी	कामान्	= इच्छित भोगोंको
ईहते	= चेष्टा करता है	हि	= नि सन्देह
च	= और	लभते	= प्राप्त होता है

अन्य देवताओं- अन्तवत्तु फलं तेषां तद्भवत्यल्पमेधसाम् ।
की उपासनाके देवान्देवयजो यान्ति मद्भक्ता यान्ति मामपि ॥२३॥
पालकी निन्दा- अन्तवत्, तु, फलम्, तेषाम्, तत्, भवति, अल्पमेधसाम्,
और भगवद्भक्ति- देवान्, देवयज यान्ति, मद्भक्ता, यान्ति, माम्, अपि ॥२३॥

तु	= परन्तु	देवान्	= देवताओंको
तेषाम्	= उन	यान्ति	= प्राप्त होने हैं
अल्प-	(अल्प बुद्धि-	(और)	
मेधसाम्	= { वालोंका	मद्भक्ताः	= मेरे भक्त
तत्	= वह	(चाहे जैसे ही	
फलम्	= फल	भजे तेषामे वे)	
अन्तवत्	= नाशमान	माम्	= मेरेको
भवति	= है (त्रा वे)	अपि	= ही
देवयजः	= { देवताओंको	यान्ति	= प्राप्त होने हैं
	(पूजनेवाले		

भगवान्को न
जाननेमें हेतुका
कथन ।

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः ।

परं भावमजानन्तो ममाव्ययमनुत्तमम् ॥२४॥

अव्यक्तम्, व्यक्तिम्, आपन्नम्, मन्यन्ते, माम्, अबुद्धयः,
परम्, भावम्, अजानन्तः, मम, अव्ययम्, अनुत्तमम् ॥२४॥

ऐसा होनेपर भी सब मनुष्य मेरा भजन नहीं करते इसका
कारण यह है कि—

अबुद्धयः = बुद्धिहीन पुरुष

मम = मेरे

अनुत्तमम् = { अनुत्तम अर्थात्
जिससे उत्तम
और कुछ भी
नहीं ऐसे

अव्ययम् = अविनाशी

परम् = परम

भावम् = { भावको अर्थात्
अजन्मा अवि-
नाशी हुआ भी
अपनी मायामे
प्रकट होता है
ऐसे प्रभावको

अजानन्तः = { तत्त्वसे न
जानते हुए

अव्यक्तम् = { मन इन्द्रियोसे
परे

माम् = { मुझ सच्चिदा-
नन्दधन
परमात्माको

(मनुष्यकी भाँति
जन्मकर)

व्यक्तिम् = व्यक्तिभावको

आपन्नम् = प्राप्त हुआ

मन्यन्ते = मानते हैं

[॥] नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमायाममावृतः ।

मूढोऽयं नाभिजानानि लोको मामजमव्ययम् ॥

न अहम्, प्रकाशः, सर्वस्य, योगमायागमावृतः,

मूढः अहम् न, अभिजानानि, लोको, माम्, अजम्, अव्ययम् ॥

तथा—

योगमाया- समावृत.	= { अपनी योगमायामे छिपा हुआ	मूढः	= अज्ञानी
अहम्	= मैं	लोकः	= मनुष्य
सर्वस्य	= सबके	माम्	= मुझ
प्रकाशः	= प्रत्यक्ष	अजम्	= जन्मरहित
न	= नहीं होता हू (इगलिये)	अव्ययम्	= { अविनाशी परमात्माको (तत्त्वसे)
अयम्	= यह	न	= नहीं
		अभिजानाति	= जानता है—

अर्थात् मेरेको जन्मने मरनेवाला समझता है ।

भावानुकी
संज्ञता वा
कथन ।

वेदाहं समतीतानि वर्तमानानि चार्जुन ।

भविष्याणि च भूतानि मां तु वेद न कश्चन ॥२६॥

वेद अहम्, समतीतानि, वर्तमानानि च, अर्जुन.

भविष्याणि, च, भूतानि, माम्, तु, वेद, न, कश्चन ॥२६॥

और—

अर्जुन	= हे अर्जुन	अहम्	= मैं
समतीतानि	= पूर्वमे व्यतीत हुए	वेद	= जानता हू
च	= और	तु	= परन्तु
वर्तमानानि	= वर्तमानमे स्थित	माम्	= मेरेको
च	= तथा	कश्चन	= { कोई भी (भ्रष्टाभक्ति- रहित पुरुष)
भविष्याणि	= { आगे होने- वाले	न	= नहीं
भूतानि	= गत भूतको	वेद	= जानता है

इच्छा-द्वेषसे
मोहकी प्राप्ति ।

इच्छाद्वेषसमुत्थेन द्वन्द्वमोहेन भारत ।

सर्वभूतानि संमोहं सर्गे यान्ति परंतप ॥२७॥

इच्छाद्वेषसमुत्थेन, द्वन्द्वमोहेन, भारत,
सर्वभूतानि, समोहम्, सर्गे, यान्ति, परंतप ॥२७॥
क्योंकि—

भारत = हे भरतवशी

परंतप = अर्जुन

सर्गे = ससारमें

इच्छाद्वेष-
समुत्थेन = { इच्छा और
द्वेषसे उत्पन्न
हुए

द्वन्द्वमोहेन = { सुखदुःखादि
द्वन्द्वरूप मोहसे

सर्वभूतानि = सपूर्ण प्राणी

संमोहम् = { अति
अज्ञानताको

यान्ति = प्राप्त हो रहे हैं

भावान्की
भजनेवालों के
एक ।

येषां त्वन्तगतं पापं जनानां पुण्यकर्मणाम् ।

ते द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ता भजन्ते मां दृढव्रताः ॥२८॥

येषाम्, तु, अन्तगतम्, पापम्, जनानाम्, पुण्यकर्मणाम्,
ते, द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ता, भजन्ते, माम्, दृढव्रता ॥२८॥

तु = परन्तु ते = वे

पुण्य-
कर्मणाम् = { (निष्काम-
भावमे) श्रेष्ठ
कर्मोंका
आचरण
करनेवाले

द्वन्द्वमोह-
निर्मुक्ताः = { रागद्वेषादि
द्वन्द्वरूप मोहमे
मुक्त हुए (ओर)

दृढव्रताः = { दृढ निश्चयवाले
पुरुष

येषाम् = निन

जनानाम् = पुरुषोंका

पापम् = पाप

अन्तगतम् = नष्ट हो गया है

माम् = मेरेको

(मय प्रकारमे)

भजन्ते = भजते हैं

ब्रह्म, अध्यात्म
और कर्म को
जाननेमें भगवत्
शरण को
प्रधानता ।

जरामरणमोक्षाय मामाश्रित्य यतन्ति ये ।

ते ब्रह्म तद्विदुः कृत्स्नमध्यात्मं कर्म चाखिलम् ॥

जरामरणमोक्षाय, माम्, आश्रित्य, यतन्ति, ये,
ते, ब्रह्म, तत्, विदुः, कृत्स्नम्, अध्यात्मम्, कर्म, च, अखिलम् २९

और—

ये	= जो	ब्रह्म	= ब्रह्मको
माम्	= मेरे	च	= तथा
आश्रित्य	= शरण होकर	कृत्स्नम्	= सपूर्ण
जरामरण- मोक्षाय	= { जरा और मरणसे छूटनेके लिये	अध्यात्मम्	= अध्यात्मको (और)
यतन्ति	= यत्न करते हैं	अखिलम्	= सपूर्ण
ते	= वे (पुरुष)	कर्म	= कर्मको
तत्	= उस	विदुः	= जानते हैं

अधिभूत
अधिदैव और
अधियज्ञ सहित
भगवान् को
जाननेवालों की
महिमा ।

साधिभूताधिदैवं मां साधियज्ञं च ये विदुः ।

प्रयाणकालेऽपि च मां ते विदुर्युक्तचेतसः ॥३०॥

साधिभूताधिदैवम्, माम्, साधियज्ञम्, च, ये, विदुः,
प्रयाणकाले, अपि, च, माम्, ते, विदुः, युक्तचेतसः ॥३०॥

और—

ये	= जो पुरुष	च	= तथा
साधि-	= { अधिभूत और	साधि-	= { अधियज्ञके
भूताधि-	= { अधिदैवके	यज्ञम्	= { सहित (सत्त्वका आत्मरूप)
दैवम्	= महित		

माम्	= मेरेको	अपि	= भी
विदुः	= जानते हैं*	माम्	= मुझको
ते	= वे	च	= ही
युक्तचेतसः	= { युक्त चित्त- वाले पुरुष	विदुः	= { जानते हैं अर्थात् प्राप्त होते हैं
प्रयाणकाले	= अन्तकालमें		

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्याया योगशास्त्रे
श्रीकृष्णार्जुनसंवादे ज्ञानविज्ञानयोगो नाम सप्तमोऽध्याय ॥७॥

अध्याष्टमोऽध्यायः

प्रधान विषय—१ से ७ तक ब्रह्म, अध्यात्म और कर्मादिके विषयमें
अर्जुनके मान प्रथ और उनका उत्तर, (८-२२) भक्तियोगका विषय,
(२३-२८) शुरु और कृष्णमार्गका विषय ।

अर्जुन उवाच

किं तद्ब्रह्म किमध्यात्मं किं कर्म पुरुषोत्तम ।
अधिभूतं च किं प्रोक्तमधिदैवं किमुच्यते ॥१॥
जिन, तत्, ब्रह्म, किम्, अध्यात्मम्, किम्, कर्म, पुरुषोत्तम,
अधिभूतम्, च, किम्, प्रोक्तम्, अधिदैवम्, किम्, उच्यते ॥१॥

इस प्रकार भगवान् ने व्यवहारों न समझकर अर्जुन बोला—

पुरुषोत्तम = हे पुरुषोत्तम (जिसका आपने वर्णन किया)
'तत्' = वह

ब्रह्म	= ब्रह्म	अधिभूतम्	= अधिभूत (नामसे)
किम्	= क्या है (और)	किम्	= क्या
अध्यात्मम्	= अध्यात्म	प्रोक्तम्	= कहा गया है
किम्	= क्या है (तथा)		(तथा)
कर्म	= कर्म	अधिदैवम्	= अधिदैव (नामसे)
किम्	= क्या है	किम्	= क्या
च	= और	उच्यते	= कहा जाता है

[,] अधियज्ञः कथं कोऽत्र देहेऽस्मिन्मधुसूदन ।

प्रयाणकाले च कथं ज्ञेयोऽसि नियतात्मभिः ॥

अधियज्ञ , कथम् , क , अत्र , देहे , अस्मिन् , मधुसूदन ,

प्रयाणकाले , च , कथम् , ज्ञेय , अग्नि , नियतात्मभि ॥२॥

और-

मधुसूदन	= हे मधुसूदन	नियता-	= { युक्त चित्तवाले
अत्र	= यहाँ	त्मभिः	= { पुरुषोंद्वारा
अधियज्ञ	= अधियज्ञ	प्रयाण-	} = अन्त समयमें
क	= कोन है (और वह)	काले	
अस्मिन्	= इस		(आप)
देहे	= शरीरमें	कथम्	= किम् प्रकार
कथम्	= कैसे है	ज्ञेय	} = जाननेमें
च	= और	अग्नि	

श्रीभगवानुवाच

अक्षरं ब्रह्म परमं स्वभावोऽध्यात्ममुच्यते ।

भूतभावोद्भववर्गे विसर्गः कर्ममंजितः ॥ ३ ॥

अक्षरम् , ब्रह्म , परमम् , स्वभाव , अध्यात्मम् , उच्यते ,

भूतभावोद्भववर्ग , विसर्ग , कर्ममंजित ॥३॥

इस प्रकार अर्जुनके प्रश्न करनेपर श्रीकृष्ण भगवान् बोले हे अर्जुन-			
परमम्	= परम	उच्यते	= कहा जाता है
अक्षरम्	= { अक्षर अर्थात् जिसका कभी नाग नहीं हो ऐसा सच्चिदा- नन्दधन परमात्मा तो	भूतभावोद्भव- करः	(तथा) { भूतोंके भाव- को उत्पन्न करनेवाला
ब्रह्म	= ब्रह्म है (और)	विसर्गः	= { शास्त्रविहित यज्ञ दान और होम आदिके निमित्त जो
स्वभावः	= { अपना स्वरूप अर्थात् जीवात्मा		{ द्रव्यादिकोका त्याग है वह
अध्यात्मम्	= आत्मा (नामसे)	कर्मसंज्ञितः	= { कर्म नामसे कहा गया है

अधिभूतं क्षरो भावः पुरुषश्चाधिदैवतम् ।

अधियजोऽहमेवात्र देहे देहभृतां वर ॥ ४ ॥

अधिभूतम्, क्षर, भाव, पुरुष, च, अधिदैवतम् ।

अधियज्ञ, अहम्, एव, अत्र, देहे, देहभृताम्, वर ॥ ४ ॥

तथा-

क्षरः	}	उपनि विनाश	}	पुरुषः	}	हिरण्यमय
मात्र		= वर्मण्ये मत्रपदार्थ		पुरुषः		= पुरुषः
अधिभूतम्	= अधिभूत है		}	अधि-	}	= अधिदेव है (और)
च	= और			दैवतम्		

देहभृताम्	= { हे देहधारियोंमें	अहम्	= मैं वासुदेव
वर	= { श्रेष्ठ अर्जुन	एव	= ही
अत्र	= इस		(विष्णुरूपसे)
देहे	= शरीरमें	अधियज्ञः	= अधियज्ञ हू

अन्तकालमें अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम् ।

भगवत्-स्मरण-
का फल (अर्जुन
के नानवें प्रश्न-
का उत्तर) ।

यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः ॥

अन्तकाले, च, माम्, एव, स्मरन्, मुक्त्वा, कलेवरम्,

य, प्रयाति, स, मद्भावम्, याति, न, अस्ति, अत्र, संशय ॥५॥

च	= और	प्रयाति	= जाता है
यः	= जो पुरुष	सः	= वह
अन्तकाले	= अन्तकालमें	मद्भावम्	= { मेरे (साक्षात्)
माम्	= मेरेको		{ स्वरूपको
एव	= ही	याति	= प्राप्त होता है
स्मरन्	= { स्मरण करता	अत्र	= इसमें (कुछ भी)
	{ हुआ	संशयः	= संशय
कलेवरम्	= शरीरको	न	= नहीं
मुक्त्वा	= त्यागकर	अस्ति	= है

यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम् ।

ये भावनानुसार
गति देने का
वर्णन ।

तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः ॥ ६ ॥

यम्, यम्, वा, अपि, स्मरन्, भावम्, त्यजति, अन्ते, कलेवरम्,
तम्, तम्, एव, एति, कौन्तेय, सदा, तद्भावभावित ॥६॥

कारण कि-

कौन्तेय = हे कुन्तीपुत्र अर्जुन	अन्ते = अन्तकालमें
(यह मनुष्य)	यम् = जिस

यम् = जिस	तम् = उसको
वा अपि = भी	एव = ही
भावम् = भावको	एति = प्राप्त होता है (परन्तु)
स्मरन् = स्मरण करता हुआ	सदा = सदा
कलेवरम् = शरीरको	तद्भाव- = { उस ही भावको
त्यजति = त्यागता है	भावितः = { चिन्तन करता
तम् = उस	हुआ-

क्योंकि सदा जिस भावका चिन्तन करता है अन्तकालमें भी प्रायः उसीका स्मरण होता है ।

तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च ।

मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मामेवैष्यस्यसंशयम् ॥ ७ ॥

तस्मात्, सर्वेषु, कालेषु, माम्, अनुस्मर, युय, च,

मयि, अर्पितमनोबुद्धि, माम्, एव, एष्यसि, असंशयम् ॥७॥

तस्मान् = इसलिये	मयि = मेरेमे
(हे अर्जुन त)	
सर्वेषु = सब	अर्पित- = { अर्पण किये हुए
कालेषु = समयमें (निरन्तर)	मनोबुद्धिः = { मन बुद्धिमें
माम् = मेरा	युक्त हुआ
अनुस्मर = स्मरण कर	असंशयम् = नि गन्देह
च = और	माम् = मेरेको
युध्य = युद्ध भी कर	एव = ही
(इस प्रकार)	एष्यसि = प्राप्त होगा

अभ्यासयोगयुक्तेन चेतसा नान्यगामिना ।

दमस पुष्प दिव्यं याति पार्थानुचिन्तयन् ॥ ८ ॥

अभ्यासयोगयुक्तेन, चेतसा, नान्यगामिना,
परमम्, पुरुषम्, दिव्यम्, याति, पार्थ, अनुचिन्तयन् ॥ ८ ॥

और-

पार्थ	= हे पार्थ (यह नियम है कि)	अनु-चिन्तयन्	= { निरन्तर चिन्तन करता हुआ पुरुष
अभ्यास-योगयुक्तेन	= { परमेश्वरके ध्यानके अभ्यासरूप योगसे युक्त	परमम्	= परम (प्रकाशस्वरूप)
नान्य-गामिना	= { अन्य तरफ न जानेवाले	दिव्यम्	= दिव्य
चेतसा	= चित्तमे	पुरुषम्	= { पुरुषको अर्थात् परमेश्वरको ही
		याति	= प्राप्त होता है

परम दिव्य

पुरुषको स्वरूप

का वर्णन और

उपदे, चिन्तन.

को दिधि ।

कविं पुराणमनुशासितार-

मणोरणीयांसमनुस्मरेद्यः ।

सर्वस्य धातारमचिन्त्यरूप-

मादित्यवर्णं तमसः परस्तात् ॥ ९ ॥

कविम्, पुराणम्, अनुशासितारम्, अणो, अणीयानम्,
अनुस्मरेत्, य, सर्वस्य, धातारम्, अचिन्त्यरूपम्,
आदित्यवर्णम्, तमस, परस्तात् ॥ ९ ॥

इससे-

य	= जो पुरुष	अनु-	= { तमको
कविम्	= सर्वको	शासितारम्	= { नियन्ता*
पुराणम्	= अनादि		

* अ मर्यादास्थाने मन् प्राणिनां च शुभं और अशुभं कर्मके अनुस्मर
शासन करनेवाला ।

अणोः	= { सूक्ष्मसे भी	आदित्य-	= { सूर्यके सदृश
अणीयांसम्	= { अति सूक्ष्म	वर्णम्	= { नित्य चेतन
सर्वस्य	= सबके		{ प्रकाशरूप
धातारम्	= { धारण पोषण	तमसः	= अविद्यासे
	= { करनेवाले		{ अतिपरे शुद्ध
अचिन्त्य-	= { अचिन्त्य-	परस्तात्	= { सच्चिदानन्दधन
रूपम्	= { स्वरूप		{ परमात्माको
		अनुसरेत्	= स्मरण करता है

["]

प्रयाणकाले मनसाचलेन

भक्त्या युक्तो योगबलेन चैव ।

भ्रुवोर्मध्ये प्राणमावेश्य सम्यक्

स त परं पुरुषमुपैति दिव्यम् ॥१०॥

प्रयाणकाले, मनसा, अचलेन, भक्त्या, युक्त, योगबलेन,
च, एव. भ्रुवो, मध्ये, प्राणम्, आवेश्य, सम्यक्, स, तम्,
पुष्प, पुरुषम्, उपैति, दिव्यम् ॥१०॥

म.	= त	च	= फिर
भक्त्या	= { भक्तियुक्त	अचलेन	= निश्चल
युक्त	= { पुरुष	मनसा	= मनसे
प्रयाणकाले	= अन्तर्कालमे (भी)	(स्मरन्)	= स्मरण करता हुआ
योगबलेन	= योगबलसे	तम्	= उग
भ्रुवो	= मधुर्बोके	दिव्यम्	= दिव्यस्वरूप
मध्ये	= मध्यमे	पुरुषम्	= { परम पुरुष
प्राणम्	= प्राणको		{ परमात्माको
सम्यक्	= उचित प्रकार	एव	= ही
आवेश्य	= आश्रित करके	उपैति	= प्राप्त होता है

अक्षरस्वरूप

परमपद की

प्रशंसा ।

यदक्षरं वेदविदो वदन्ति

विशन्ति यद्यतयो वीतरागाः ।

यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति

तत्ते पदं संग्रहेण प्रवक्ष्ये ॥११॥

यत्, अक्षरम्, वेदविद, वदन्ति, विशन्ति, यत्, यतय, वीतरागा, यत्, इच्छन्त, ब्रह्मचर्यम्, चरन्ति, तत्, ते, पदम्, संग्रहेण, प्रवक्ष्ये ॥११॥

और है अर्जुन-

वेदविदः = { वेदके जानने- वाले (विद्वान्)	विशन्ति = प्रवेश करते हैं (तथा)
यत् = { जिस मच्छिदा- नन्दघनरूप परमपदको	यत् = जिस परमपदको इच्छन्तः = चाहनेवाले ब्रह्मचर्यम् = ब्रह्मचर्यका
अक्षरम् = ओकार (नाममे)	चरन्ति = आचरण करते हैं
वदन्ति = कहते हैं (ओर)	तत् = उम्
वीतरागा = आगतिरहित	पदम् = परमपदको
यतयः = { यत्नशील महात्माजन	ते = तेरेलिये
यत् = जिसमे	संग्रहेण = संक्षेपमे
	प्रवक्ष्ये = बतहागा

ध्यानयोगकी

विधिते ओकार-यत्

वा उच्चारण और

भगवत्स्वरूपका

चिन्तन करते

हुए मरनेवाले की

परमगति हो-

या वदन्त ।

सर्वद्वाराणि संयम्य मनो हृदि निरुध्य च ।

मूर्ध्न्याधायात्मनः प्राणमास्थितो योगधारणाम् ॥

सर्वद्वाराणि, संयम्य, मन, हृदि, निरुध्य च,

मूर्ध्नि आधाय, आत्मन, प्राणम्, आस्थित, योगधारणाम् ॥१२॥

हे अर्जुन-

सर्व-	= } सब इन्द्रियोके	च	= और
द्वाराणि		= } द्वारोंको	आत्मनः
संयम्य	= { रोककर अर्थात् इन्द्रियोको विषयोसे हटाकर (तथा)	प्राणम्	= प्राणको
		मूर्ध्नि	= मस्तकमे
		आधाय	= स्थापन करके
मनः	= मनको	योग-	} = योगधारणामें
हृदि	= हृदयमे	धारणाम्	
निरुध्य	= स्थिर करके	आस्थितः	= स्थित हुआ

["] ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन् ।

यः प्रयाति त्यजन्देहं स याति परमां गतिम् ॥

ॐ, इति, एकाक्षरम्, ब्रह्म, व्याहरन्, माम्, अनुस्मरन्,

यः, प्रयाति, त्यजन्, देहम्, स, याति, परमाम्, गतिम् ॥ १३ ॥

य	= जो पुरुष	माम्	= मेरेको
ॐ	= ॐ	अनुस्मरन्	= { निन्तन करना हआ
इति	= इसके (इस)	देहम्	= शरीरको
एकाक्षरम्	= एक अक्षरम्	त्यजन्	= त्याग कर
ब्रह्म	= ब्रह्म	प्रयाति	= जाता है
व्याहरन्	= { व्याहरन् करता हआ	यः	= जो पुरुष
		परमाम्	= परमा
		गतिम्	= गति
		याति	= जाता है

नित्य निरन्तर
भगवन्निर्गुणमे
१७६-शक्तिज्ञा
सु-मना ।

अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः ।

तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः ॥१४॥

अनन्यचेता, सततम्, य, माम्, स्मरति, नित्यशः,
तस्य, अहम्, सुलभः, पार्थ, नित्ययुक्तस्य, योगिनः ॥१४॥

और-

पार्थ	= हे अर्जुन	स्मरति	= स्मरण करता है
य.	= जो पुरुष	तस्य	= उस
अनन्यचेताः	= { मेरेमे अनन्य चित्तमे स्थित हुआ	नित्य- युक्तस्य	= { निरन्तर मेरेमें युक्त हुए
नित्यशः	= मना ही	योगिनः	= योगीके (लिये)
सततम्	= निरन्तर	अहम्	= मैं
माम्	= मेरेको	सुलभ	= सुलभ है

अर्थात् महज ही प्राप्त हो जाता है ।

भगवन्निर्गुण-
मा १७६ व ।

मासुपेत्य पुनर्जन्म दुःखालयमशाश्वतम् ।

नाप्नुवन्ति महात्मानः संसिद्धिं परमा गताः ॥१५॥

माप् उपेत्य, पुनर्जन्म, दुःखालयम्, अशाश्वतम्,

न, आप्नुवन्ति, महात्मानः, संसिद्धिम्, परमां, गताः ॥१५॥

और व-

परमाम्	= परम	दुःखालयम्	= { दुःखके स्थानरूप
संसिद्धिम्	= सिद्धिबो	अशाश्वतम्	= क्षणभङ्गुर
गताः	= प्राप्त हुए	पुनर्जन्म	= पुनर्जन्मको
महात्मानः	= महात्माजन	न	= नहीं
माम्	= मेरेको	आप्नुवन्ति	= प्राप्त होने हैं
उपेत्य	= प्राप्त होकर		

म. १०. १४

॥] आब्रह्मभुवनाल्लोकाः पुनरावर्तिनोऽर्जुन ।

मामुपेत्य तु कौन्तेय पुनर्जन्म न विद्यते ॥१६॥

आब्रह्मभुवनात्, लोका, पुनरावर्तिन, अर्जुन,
माम्, उपेत्य, तु, कौन्तेय, पुनर्जन्म, न, विद्यते ॥१६॥

क्योंकि—

अर्जुन	= हे अर्जुन	कौन्तेय	= हे कुन्तीपुत्र
आब्रह्म-	= { ब्रह्मलोकमें लेकर	माम्	= मेरेको
भुवनात्		उपेत्य	= प्राप्त होकर
लोका	= सब लोक		(उम्का)
पुनरावर्तिनः	= { पुनरावर्त* समावृत्त हैं	पुनर्जन्म	= पुनर्जन्म
		न	= नहीं
तु	= परन्तु	विद्यते	= होता है

इति मे काव्यतीतं ह आरंभं यत्तु ब्रह्मादिभ्यो लोका
मां तस्मै आगच्छते होनेमें अनि ग है ।

मत्तमयुगपर्यन्तमहर्षद्वयप्रणो विदुः ।

गच्छि युगमद्वयान्ता तेष्वोरात्रविदो जनाः ॥१७॥

रात्रिम् = रात्रिको (भी) विदुः = { तत्त्वमे
= { जानते हैं*
युग- = { हजार चौकड़ी
= { युगतक
महामान्ताम् = { अवधिवाली
(ये) = जो पुरुष अहो- = { कालके तत्त्वको
= { जाननेवाले हैं
रात्रिविदः

अव्यक्ताद्व्यक्तयः सर्वाः प्रभवन्त्यहरागमे ।
रात्र्यागमे प्रलीयन्ते तत्रैवाव्यक्तमंजुके ॥१८॥
अव्यक्तात् व्यक्तय सर्वा प्रभवन्ति, अहरागमे,
रात्र्यागमे, प्रलीयन्ते, तत्र एव, अव्यक्तमंजुके ॥१८॥
दृग्स्थित्ये व दृष्ट भी जानते हैं कि-

सर्वाः = मूर्ण (और)
व्यक्तय = { दृश्यमात्र रात्र्यागमे = { रात्र्याकी रात्रिके
= { भूतगण = { प्रवेशकालमे
अहरागमे = { ब्रह्माके दिनके तत्र = उन
= { प्रवेशकालमे अव्यक्त- = { अव्यक्त नामक
अव्यक्तान् = { अव्यक्तमे मंजुके = { ब्रह्माके मृत्यु-
= { अर्थात् ब्रह्माका = { शरीरमे
= { मृत्यु शरीरमे एव = ही
प्रभवन्ति = उत्पन्न होते । प्रलीयन्ते = लुप्त होते हैं

। ,] भूतधामः स एवायं भूत्वा भूत्वा प्रलीयते ।

रात्र्यागमेऽवशः पार्थ प्रभवत्यहरागमे ॥१९॥

भूतधाम, न एव, अथ भूत्वा, भूत्वा प्रलीयते,
न रात्र्यागमे अथ, पार्थ प्रभवति अहरागमे ॥१९॥

* ११ । १९ ८२२ ५२ ५३ ५४ ५५ ५६ ५७ ५८ ५९ ६० ६१ ६२ ६३ ६४ ६५ ६६ ६७ ६८ ६९ ७० ७१ ७२ ७३ ७४ ७५ ७६ ७७ ७८ ७९ ८० ८१ ८२ ८३ ८४ ८५ ८६ ८७ ८८ ८९ ९० ९१ ९२ ९३ ९४ ९५ ९६ ९७ ९८ ९९ १००

और—

सः	= वह	रात्र्यागमे	= { रात्रिके प्रवेग- कालमे
एव	= ही	प्रलीयते	= लय होता है (और)
अयम्	= यह	अहर्गामे	= { दिनके प्रवेग- कालमे (फिर)
भूतग्रामः	= भूतममुदाय	प्रभवति	= उत्पन्न होता है
भूत्वा	= { उत्पन्न हो होकर	पार्थ	= हे अर्जुन—
भूत्वा	= { प्रकृतिके वशमे हुआ		

इस प्रकार ब्रह्माके एक मा तर्प पूर्ण होनेमे अपने लोक-
गति तथा भी ज्ञान हो जाता है ।

परस्मैमात्तु भानोऽन्योऽव्यक्तोऽव्यक्तात्मनातनः ।

यः न गर्वेण भनेण नश्यत्सु न विनश्यति ॥२०॥

मात्तु, भात, जय, जयन्त, जयन्त, गनागन,
मद, भात, नश्यत्सु, न, विनश्यति ॥२०॥

अव्यक्त, अक्षर और परमानि तथा परमधाम-यो पदार्थ । अव्यक्त, अक्षर, इति, उक्त, तम्, आहु, परमाम्, गतिम्, यम्, प्राप्य, न, निवर्तन्ते, तत्, धाम, परमम्, मम ॥२१॥
और जो वह—

अव्यक्तः	= अव्यक्त	यम्	= { जिम सनातन
अक्षरः	= अक्षर		अव्यक्तभावको
इति	= ऐसे	प्राप्य	= प्राप्त होकर
उक्तः	= कहा गया है		(मनुष्य)
तम्	= { उग ही अक्षर	न	= { पीछे नहीं
	नामक अव्यक्त	निवर्तन्ते	{ आते है
	भावको	तत्	= वह
परमाम्	= परम	मम	= मेरा
गतिम्	= गति	परमम्	= परम
आहु	= कहते हैं (तथा ,	धाम	= धाम है

दानन्दगतिः पुरः स परः पार्थ भक्त्या लभ्यस्त्वनन्यया ।
यस्यान्तःस्थानि भूतानि येन सर्वमिदं ततम् ॥
पुरः, न पर, पार्थ, भक्त्या, लभ्य, तु अनन्यया,
यस्य अन्तःस्थानि, भूतानि, येन सर्वम् इदम्, ततम् ॥२२॥

तु	= आर	भूतानि	= सर्व भूत हैं
पार्थ	= है पार्थ		(और)
यस्य	= { जिम	येन	{ जिम लब्धि-
	परमात्मावे,		=, दानन्दधन
अन्तःस्थानि	= अतर्गत		, परमात्मासे

इदम्	= यह	पुरुषः	= पुरुष
सर्वम्	= सत्र जगत्	अनन्यया	= अनन्य †
ततम्	= परिपूर्ण है*	भक्त्या	= भक्तिसे
सः	= { वह सनातन अन्यक्त	लभ्यः	= { प्राप्त होने योग्य है
परः	= परम		

यत्र काले त्वनावृत्तिमावृत्तिं चैव योगिनः ।

प्रयाता यान्ति त कालं वक्ष्यामि भग्नर्पभ ॥२३॥

त्र कालं तु अनावृत्तिम्, आवृत्तिम्, च, एव, योगिनः ,

प्रयाता यान्ति, तम् कालम्, वक्ष्यामि भग्नर्पभ ॥२३॥

अग्नि , ज्योति , अह , शुक्र , षण्मासा , उत्तरायणम् ,
तत्र , प्रयाता , गच्छन्ति , ब्रह्म , ब्रह्मविद , जना ॥२४॥

उन दो प्रकारके मार्गोंमें जिन मार्गोंमें—

ज्योतिः	= ज्योतिर्मय	षण्मासाः	{ उत्तरायणके छ
अग्निः	= { अग्नि अभिमानी देवता है	उत्तरा-	= { महीनोंका अभि-
	(और)	यणम्	{ मानी देवता हैं
		तत्र	= उस मार्गमें
		प्रयाताः	= मरकर गये हुए
अहः	= { दिनका अभिमानी देवता है	ब्रह्मविदः	= ब्रह्मवेत्ता *
	(तथा)	जनाः	= योगीजन
			(उपरोक्त
			देवताओंद्वारा
शुक्रः	= { शुक्र पक्षका अभि-		क्रममें ले गये हुए)
	{ मानी देवता है	ब्रह्म	= ब्रह्मको
	(और)	गच्छन्ति	= प्राप्त होने हैं

धूमो रात्रिस्तथा कृष्णः षण्मासा दक्षिणायनम् ।

धूमो रात्रिस्तथा कृष्णः

तत्र चान्द्रमस ज्योतियोगी प्राप्य निवर्तते ॥२५॥

धूम रात्रि तथा कृष्ण , षण्मासा , दक्षिणायनम् ,

तत्र , चान्द्रमसम् , ज्योति , योगी , प्राप्य निवर्तते ॥२५॥

तथा जिन मार्गोंमें—

धूमः	= { धूमाभिमानी देवता है	रात्रिः	= { रात्रि अभिमानी देवता है
	(और)	तथा	= तथा

* ज्योतिर्मय (१) दिनका अभिमानी देवता है (२) उपरोक्त देवताओंद्वारा

कृष्णः	= { कृष्णपक्षका अ- भिमानि देवता है (और)	(उपरोक्त देवताओद्धार क्रममे ले गया हुआ)
पञ्चासां दक्षिणायनम्	{ दक्षिणायनके छ महीनोका अभिमानि देवता है	चान्द्रमसम् = चन्द्रमाकी ज्योतिः = ज्योतिको
तत्र	= उग्र मार्गमे (मरकर गया हुआ)	प्राप्य = प्राप्त होकर (स्वर्गमे अपने शुभकर्मोका फल भोगकर)
योगी	{ सक्तास कर्म- योगी	निवर्तते = पीरा आता है

भूतकृष्णे गती ह्येते जगतः शाश्वते मते ।

एतया गान्धिन्यानुत्तिमन्ययावर्तते पुनः ॥२६॥

अन्यथा = दूसरेद्वारा
(गया हुआ*)

आवर्तते = आता है अर्थात्
जन्म-मृत्युको
प्राप्त होता है

पुनः = पीछा

दोनों मार्गोंको
जानने वाले
योगीश्वरी प्रधान ।

नैते सृती पार्थ जानन्योगी मुह्यति कश्चन ।

तस्मात्सर्वेषु कालेषु योगयुक्तो भवार्जुन ॥२७॥

न, एते, सृती, पार्थ, जानन्, योगी, मुह्यति, कश्चन,

तस्मात् सर्वेषु, कालेषु, योगयुक्त, भव, अर्जुन ॥२७॥

आर-

पार्थ = हे पार्थ
(इस प्रकार)

न मुह्यति = { मोहित नहीं
होता है }

एते = इन दोनों

तस्मात् = इस कारण

सृती = मार्गोंको

अर्जुन = हे अर्जुन (तू)

जानन् = { तत्परमे जानता
हुआ

सर्वेषु = सब

कश्चन = कोई भी

कालेषु = कालमें

योगी = योगी

योगयुक्तः = { समत्वबुद्धिरूप
योगसे युक्त

भव = हो

अर्थात् निरन्तर मार्ग प्राप्तिके लिये साधन करनेवाला हो।

* अध्याय इति अध्यायके शीर्ष - ५ के अनुन्तर धर्ममार्गमें गया हुआ स्वामी समयोगी ।

* अध्याय पिर वर निष्कामभावसे हो साधन करना है, कामनाओंसे नहीं करना ।

वेदेषु यज्ञेषु तपःसु चैव
दानेषु यत्पुण्यफलं प्रदिष्टम् ।
अत्येति तत्सर्वमिदं विदित्वा
योगी परं स्थानमुपैति चाद्यम् ॥२८॥

ॐ श्रीपरमात्मने नमः

अथ तत्त्वसौध्यायः

प्रधान विषय-१ ने ६ नक प्रभावसहित ज्ञानका विषय। (७-१०)
जातको उत्पत्तिका विषय। (११-१५) भगवान्का निरस्कार करने-
वाले आगुरी प्रकृतिवालोंको निन्दा और ईश्वरी प्रकृतिवालोंके भयवत्-
भक्तका प्रकाश। (१६-१९) सर्वोत्तरूपमे प्रभावमहित भगवान्के
रूपका वर्णन। (२०-२२) सकाम और निष्काम उपासनाका फल।
(२३-३४) निष्काम भगवद्भक्तिका महिमा।

श्रीभगवानुवाच

विज्ञानमहित

इदं तु ते गुह्यतमं प्रवक्ष्याम्यनसूयवे ।

ज्ञानका प्रव

ज्ञान विज्ञानसहितं यज्ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात् ॥

प्रवक्ष्यामि

इदं, तु ते, गुह्यतमम्, प्रवक्ष्यामि, अनसूयवे,

ज्ञानं विज्ञानमहितम् यत् ज्ञात्वा, मोक्ष्यसे, अशुभात् ॥१॥

उपर्युपर्युत श्रीगुण भगवान् बाले हे अजुन-

ते = तुझ

प्रवक्ष्यामि = कहूँगा

अनसूयवे = { दोष-शिरहित
= { भक्तके लिए

तु = कि

इदम् = इस

यत् = जिसको

गुह्यतमम् = परम गोपनीय

ज्ञात्वा = जानकर (तु)

ज्ञानम् = ज्ञानका

अशुभात् = { दु खरूप
= { सनारसे

विज्ञान-
सहितम् } = रहस्यके सहित

मोक्ष्यसे = मुक्त हो जायगा

विज्ञानमस्ति गजविद्या राजगुह्यं पवित्रमिदमुत्तमम् ।
ज्ञानं महिमा ।

प्रत्यक्षावगमं धर्म्यं सुसुखं कर्तुमव्ययम् ॥२॥

गजविद्या, राजगुह्यम्, पवित्रम्, इदम्, उत्तमम्,
प्रत्यक्षावगमम्, धर्म्यम्, सुसुखम्, कर्तुम्, अव्ययम् ॥२॥

इदम्	= यह (ज्ञान)	प्रत्यक्षाव-	= { प्रत्यक्ष फल-
गजविद्या	= { मत्र विद्याओक्त	गमम्	= { वात्स (आर)
	= { गजा (नया)	धर्म्यम्	= धर्मयुक्त त
राजगुह्यम्	= { मत्र गोपनीयो-	कर्तुम्	= मान करने हो
	= { का भी राजा	सुगुह्यम्	= तडा सुगम
	(एव)		(ओर)
पवित्रम्	अति पवित्र		
उत्तमम्	= उत्तम	अव्ययम्	= अनित्यगी

प्रभावमतिन
भावावृत्ते सर्वं
रूपाणां स्वरूपज्ञा
कथन ।

मया ततमिदं सर्वं जगदव्यक्तमूर्तिना ।

मत्स्थानि सर्वभूतानि न चाहं तेष्ववस्थितः ॥४॥

मया, ततम्, इदम्, सर्वम्, जगत्, अव्यक्तमूर्तिना,
मत्स्थानि, सर्वभूतानि, न, च, अहम्, तेषु, अवस्थित ॥ ४ ॥

और है अर्जुन-

मया	= मुझ	सर्वभूतानि	= सब भूत
अव्यक्त-	= { सच्चिदानन्दघन परमात्मा मे	मत्स्थानि	= { मेरे अन्तर्गत सकल्पके आधार स्थित है (इमलिये वान्तर्गमे)
मूर्तिना			
इदम्	= यह	अहम्	= मैं
सर्वम्	= सब	तेषु	= उनमें
जगत्	= जगत् (जलमे वर्षके सदृश)	न अवस्थित	= स्थित नहीं है
ततम्	= परिपूर्ण है		
च	= और		

[॥] न च मत्स्थानि भूतानि पश्य मे योगमैश्वरम् ।

भूतभृन्न च भूतस्थो ममात्मा भूतभावनः ॥५॥

न च, मत्स्थानि भूतानि, पश्य, मे योगम्, ऐश्वरम्,

उत्पद्यत, न, च भूतस्थ, मम आत्मा भूतभावन ॥ ५ ॥

च	= और (व)	योगम्	= योगमाया (और)
भूतानि	= सब भूत	ऐश्वरम्	= प्रभावशक्ति
मत्स्थानि	= मेरेमे स्थित	पश्य	= देख (जि)
न	= नहीं (कित्हु)	भूतभृन्	= (भूतोंका धारण- कर्ता)
मे	= मेरी		

	(और)	मम	= मेरा
भूतभावन	= {	भूतोको उत्पन्न करनेवाला	आत्मा = आत्मा (वास्तवमे) भूतस्य = भूतोमे स्थित
च	= भी	न	= नहीं है

यथाकाशस्थितो नित्यं वायुः सर्वत्रगो महान् ।
तथा सर्वाणि भूतानि मत्स्थानीत्युपधारय ॥६॥

यथा आकाशस्थित, नित्यम्, वायुः, सर्वत्रगो महान्,
तथा सर्वाणि भूतानि, मत्स्थानी इति उपधारय ॥ ६ ॥

प्रकृतिम् = प्रकृतिको	कल्पादौ = कल्पके आदिमे
यान्ति = { प्राप्त होने है	तानि = उनको
{ अर्थात् प्रकृतिमे	अहम् = मैं
{ लय होते हैं	पुनः = फिर
(और)	विसृजामि = रचता हूँ

नच भूतौको प्रकृतिं स्वामवष्टभ्य विसृजामि पुनः पुनः ।

एन एन
उपस्थितिका कश्चन

भूतग्राममिम कृत्स्नमवशं प्रकृतेर्वशात् ॥८॥

प्रकृतिम् स्वाम्, अवष्टभ्य, विसृजामि, पुनः, पुनः,

भूतग्रामम् इमम्, कृत्स्नम्, अवशम्, प्रकृतेः, वशात् ॥ ८ ॥

कैसे कि-

स्वाम् = अपनी	इमम् = इस
प्रकृतिम् = { त्रिगुणमयी	कृत्स्नम् = सम्पूर्ण
{ मायाको	भूतग्रामम् = भूतमनुदायको
अवष्टभ्य = अङ्गीकार करके	पुनः पुनः = बारम्बार
प्रकृतेः = स्वभावके	(उनके कामके
वशात् = वशमे	अनुसार)
अवशम् = परतन्त्र हुए	विसृजामि = रचता हूँ

भगवान्चो म न च मा तानि कर्माणि निवधन्ति धनंजय ।

न च मा तानि
कर्माणि निवधन्ति

उदासीनवदासीनमसत्तं तेषु कर्मसु ॥९॥

न च मा तानि कर्माणि निवधन्ति धनंजय

उदासीनवदासीनमसत्तं तेषु कर्मसु ॥ ९ ॥

धनंजय - न अर्जुन

तेषु उन

कर्मसु = कर्मोंमें

असत्तम् = शान्तिवर्तिन

सबका आदि न मे विदुः सुरगणाः प्रभवं न महर्षयः ।
 होनेसे मेरी अहमादिहि देवानां महर्षीणां च सर्वशः ॥२॥
 उत्पत्ति जो देवादि भी नहीं न, मे, विदुः, सुरगणा, प्रभवम्. न, महर्षय,
 जानते इस अहम्, आदि, हि, देवानाम्, महर्षाणाम्, च, सर्वश. ॥२॥
 विषयम भगवान्- हे अर्जुन-

का कथन । मे	= मेरी	महर्षयः	= महर्षिजन (ही)
	[उत्पत्तिको	विदुः	= जानते हैं
प्रभवम्	= [अर्थात् विभूति-	हि	= क्योंकि
	[सहित लीलासे	अहम्	= मैं
	[प्रकट होनेको	सर्वशः	= सब प्रकारसे
न	= न	देवानाम्	= देवताओंका
सुरगणा	= देवतालोक	च	= और
(विदुः)	= जानते हैं (और)	महर्षाणाम्	= महर्षियोंका (भी)
न	= न	आदिः	= आदि कारण हू

प्रकाशमयित यो मामजमनादिं च वेत्ति लोकमहेश्वरम् ।
 परमेश्वर जो असमृद्धः स मर्त्येषु सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥३॥
 य, माम, अजम्, अनादिम्, च, वेत्ति, लोकमहेश्वरम्,
 असमृद्ध म, मर्त्येषु, सर्वपाप, प्रमुच्यते ॥ ३ ॥

और-

य	= जो	अनादिम्	= अनादि*
माम्	= मेरेको	च	= तथा
	[अनन्ता अर्थात्		

वेत्ति = तत्त्वसे जानता है

सः = वह

मर्त्येषु = मनुष्योंमें

असंमूढः = ज्ञानवान् (पुरुष)

सर्वपापैः = सपूर्ण पापोंसे

प्रमुच्यते = मुक्त हो जाता है

भाववान्ने बुद्धि
आदि भावोंकी
उत्पत्तिका कथन

बुद्धिर्ज्ञानमसमोहः क्षमा सत्यं दमः शमः ।

सुखं दुःख भवोऽभावो भयं चाभयमेव च ॥४॥

बुद्धि , ज्ञानम् , अममोह , क्षमा , सत्यम् , दम , शम ,

सुखम् , दुःखम् , भव , अभाव , भयम् , च , अभयम् , एव , च ॥४॥

और हे अर्जुन-

बुद्धिः = { निश्चय करनेकी (तथा)
शक्ति (एव)

सुखम् = सुख

ज्ञानम् = तत्त्वज्ञान (और)

दुःखम् = दुःख

असंमोहः = अममोहता

भवः = उत्पत्ति

क्षमा = क्षमा

च = और

सत्यम् = सत्य (तथा)

अभावः = प्रलय (एव)

दम = { इन्द्रियोंका
वशमे करना

भयम् = भय

(और)

च = और

शम = मनका निग्रह

अभयम् = अभय

एव = भी

["] अहिंसा समता तुष्टिस्तपोदान यशोऽयशः ।

भवन्ति भावा भूतानां मत्त एव पृथग्विधाः ॥५॥

अहिंसा , नमता , तुष्टि , तप , दानम् , यश , अयश ,

भवन्ति भावा , भूतानाम् , मत्त , एव , पृथग्विधा ॥५॥

तथा-

अहिंसा = अहिंसा

समता = समता

तुष्टिः	= मतोप	भूतानाम्	= प्राणियोंके
तपः	= तपः	पृथग्विधाः	= नाना प्रकारके
दानम्	= दान	भावाः	= भाव
यज्ञः	= कीर्ति (और)	मत्तः	= मेरेसे
अयज्ञः	= अपकीर्ति	एव	= ही
(एवम्)	= ऐसे (यह)	भवन्ति	= होते हैं

भगवान्के महर्षयः सप्त पूर्वे चत्वारो मनवस्तथा ।

सकल्पमे नर्त्तयि-

ओर मनका-

टिकोंका च पत्ति- महर्षय , सप्त , पूर्वे , चत्वार , मनव , तथा ,

या स्थित । मद्भावा , मानमा , जाता , येषाम् , लोके , इमा , प्रजा ॥६॥

और हे अर्जुन-

सप्त	= सप्त (तो)	मद्भावाः	= मेरेमे भाववाले
महर्षयः	= महर्षिजन (और)		(मन्त्रके सब)
चत्वार	= चार (उनमे भी)	मानमा	= { मेरे सकल्पमे
पूर्वे	= { पूर्वमे होने वाले	जाता	= { उत्पन्न हुए हैं
	(मनकादि)		(कि)
तथा	= तथा	येषाम्	= जिनकी
मनवः	= { म्यायगुप्त आदि	लोके	= गमाम
	(चत्वार मन	इमा	= यह संपूर्ण
(मने)	= यह	प्रजा	= प्रजा हैं

एता विभृति योग च मम यो वेत्ति तत्त्वतः ।

संश्रित्वा येन योगेन युज्यते नात्र मशयः ॥ ७ ॥

एताम्, विभृतिम्, योगम्, च, मम, य, वेत्ति, तत्त्वतः,
म, अविकम्पेन, योगेन, युज्यते, न, अत्र, संशयः ॥७॥

और—

यः	= जो (पुरुष)	(पुरुष)
एताम्	= इस	अविकम्पेन = निश्चल
मम	= मेरी	योगेन = ध्यानयोगद्वारा
विभृतिम्	= { परमैश्वर्यरूप विभृतिको	(मेरेमे ही)
च	= और	युज्यते = { एकीभावेसे स्थित होता है
योगम्	= योगशक्तिको	अत्र = इसमे (कुछ भी)
तत्त्वतः	= तत्त्वसे	संशयः = संशय
वेत्ति	= जानता है*	न = नहीं
नः	= वह	(अस्ति) = हैं

भगवान्‌के प्रभाव अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्तते ।

वो समझकर

भजनेवालों ने इति मत्वा भजन्ते मां बुधा भावसमन्विताः ॥८॥

प्रशंसा ।

अहम्, सर्वस्य, प्रभव, मत्तः, सर्वम्, प्रवर्तते,

इति मत्वा, भजन्ते, माम्, बुधा, भावसमन्विता ॥८॥

अहम्	= मैं वासुदेव ही	मत्तः	= मेरेसे ही
सर्वस्य	= सम्पूर्ण जगत्‌की	सर्वम्	= सब जगत्
प्रभव	= उत्पत्तिका कारण है	प्रवर्तते	= चेष्टा करना है
	(और)	इति	= इस प्रकार

* जो कुछ दृश्यमात्र समझा है सो सब भगवान्‌की माया है और एक
वास्तव भगवान्‌ ही सर्वत्र परिपूर्ण है यह जानना ही तत्त्वसे जानना है ।

मत्वा	= तत्त्वसे समझकर	माम्	= { मुझ
भाव-	{ श्रद्धा और भक्ति-		{ परमेश्वरको
समन्विता	= { से युक्त हुए		(ही)
बुधाः	= { बुद्धिमान्	भजन्ते	= { निरन्तर
	{ भक्तजन		{ भजते हैं

मच्चित्ता मद्गतप्राणा बोधयन्तः परस्परम् ।

कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च ॥६॥

मच्चित्ता , मद्गतप्राणा , बोधयन्त , परस्परम् ,
कथयन्त , च , माम् , नित्यम् , तुष्यन्ति , च , रमन्ति , च ॥९॥

और वे-

मच्चित्ता	= { निरन्तर मेरेमे मन च	= तथा
	{ लगानेवाले (और)	(गुण और
मद्गत-	{ मेरेमे ही प्राणोको	प्रभावमहित)
प्राणा	= { अर्पण करनेवाले + माम्	= मेरा
	(भक्तजन)	कथयन्तः = कथन करने हुए
नित्यम्	= सदा ही	च = ही
	(मेरी भक्तिकी	तुष्यन्ति = मनष्ट होने +
	चर्चाके द्वारा)	च = और
परस्परम्	= आपसमे	(मुझ पासु-गमे ही)
बोधयन्त	= { मेरे प्रभावको	रमन्ति = { निरन्तर रमण
	{ उठाते हुए	{ करने +

तेषां मततयुक्तानां भजता प्रीतिर्पर्यवस्यति ।

उदासि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते ॥१०॥

तेषाम्, सनतयुक्तानाम्, भजताम्, प्रीतिपूर्वकम्,
ददामि, बुद्धियोगम्, तम्, येन, माम्, उपयान्ति, ते ॥१०॥

तेषाम्	= उन	तम्	= वह
सनत-	{ निरन्तर मेरे	बुद्धियोगम्	= { तत्त्वज्ञानरूप
युक्तानाम्	= { ध्यानमे लगे हुए		= { योग
	(और)	ददामि	= देता हूँ (कि)
प्रीतिपूर्वकम्	= प्रेमपूर्वक	येन	= जिससे
		ते	= वे
भजताम्	= { भजनेवाले	माम्	= मेरेको (ही)
	= { भक्तोको (मैं)	उपयान्ति	= प्राप्त होते हैं

[] तेषामेवानुकम्पार्थमहमज्ञानजं तमः ।

नाशयाम्यात्मभावस्थो ज्ञानदीपेन भास्वता ॥११॥

नेषाम्, एव, अनुकम्पार्थम्, अहम्, अज्ञानजम्, तम्,
नाशयामि, आत्मभावस्थ, ज्ञानदीपेन, भास्वता ॥११॥

और हे अर्जुन-

तेषाम्	= उनके (ऊपर)	अज्ञानजम्	= { अज्ञानसे
अनु-	= { अनुग्रह करनेके		= { उत्पन्न हुए
कम्पार्थम्	= { श्रिये	तमः	= अन्धकारको
एव	= ही	भास्वता	= प्रकाशमय
अहम्	= मैं स्वयं	ज्ञानदीपेन	= { तत्त्वज्ञानरूप
आत्म-	= { (उनके) अन्त -		= { दीपकद्वारा
भावस्थः	= { करणमें एकीभाव-	नाशयामि	= नष्ट करता हूँ
	= { में स्थित हुआ		

स्वयम् = स्वयम् आप मे = मेरे (प्रति)
 एव = भी ब्रवीषि = कहते हैं

कर्जुनद्वारा के
 भावान् के
 प्रभावका वर्णन सर्वमेतद्वत् मन्ये यत्मां वदसि केशव ।
 न हि ते भगवन्व्यक्तिं विदुर्देवा न दानवाः ॥१४॥

सर्वम्, एतत्, ऋतम्, मन्ये, यत्, मान्, वदसि, केशव,
 न, हि, ते, भगवन्, व्यक्तिम्, विदुः, देवा, न, दानवा ॥१४॥

और—

केशव	= हे केशव	व्यक्तिम्	= { लीलामय*
यत्	= जो (कुछ भी)		{ स्वरूपको
माम्	= मेरे प्रति	न	= न
वदसि	= आप कहते हैं	दानवाः	= दानव
एतत्	= इस	विदुः	= जानते हैं
सर्वम्	= समस्तको (मैं)		(और)
ऋतम्	= सत्य	न	= न
मन्ये	= मानता हूँ	देवाः	= देवता
भगवन्	= हे भगवन्	हि	= ही
ते	= आपके	(विदुः)	= जानते हैं

[„] स्वयमेवात्मनात्मानं वेत्थ त्वं पुरुषोत्तम ।

भूतभावन भूतेश देवदेव जगत्पते ॥१५॥

स्वयम्, एव, आत्मना, आत्मानम्, वेत्थ, त्वम्, पुरुषोत्तम,
 भूतभावन, भूतेश, देवदेव, जगत्पते ॥ १५ ॥

भूतभावन = { हे भूतोंको
 उत्पन्न करनेवाले भूतेश = { हे भूतोंके
 ईश्वर

* गाना अध्याय ४ श्लोक ६ में ईश्वर विस्तार देखना चाहिये ।

देवदेव	= हे देवोंके देव	मयम्	= स्वयम्
जगत्पते	= { हे जगत्के स्वामी	एव	= ही
पुरुषोत्तम	= हे पुरुषोत्तम	आत्मना	= अपनेमे
त्वम्	= आप	आत्मानम्	= आपको
		वेत्य	= जानते हैं

वक्तुमर्हस्यशेषेण दिव्या ह्यात्मविभूतयः ।

याभिर्विभूतिभिर्लोकानिमांस्त्वं व्याप्य तिष्ठसि ॥

वक्तुम् अर्हमि, अशेषेण, दिव्या, हि, आत्मविभूतय, याभि, विभूतिभि, लोकान्, इमान्, त्वम्, व्याप्य, तिष्ठसि ॥

उमलिये हे भगवान्—

त्वम्	= आप	याभिः	= जिन
हि	= ही (उन)	विभूतिभिः	= { विभूतियोंके द्वारा
दिव्याः	} = { अपनी दिव्य आत्म- विभूतय }	इमान्	= इन मन
आत्म- विभूतय		लोकान्	= लोकोंको
अशेषेण	= शेषरूपे	व्याप्य	= व्याप्त करके
वक्तुम्	= बताने के लिये	तिष्ठसि	= स्थित हैं
अर्हमि	= उचित है (हि),		

परिचिन्तयन् =	{ चिन्तन करता हुआ	केषु =	किन
त्वाम् =	आपको	केषु =	किन
विद्याम् =	जानू	भावेषु =	भावोंमें
च =	और	मया =	मेरेद्वारा
भगवन् =	हे भगवन् (आप)	चिन्त्यः =	चिन्तन करने योग्य
		असि =	है

योगात्मिकां विस्तरेणात्मनो योगं विभूतिं च जनार्दन ।

भूयः कथय तृप्तिर्हि शृण्वतो नास्ति मेऽमृतम् ॥

विस्तरेण. आत्मन, योगम्, विभूतिम्, च, जनार्दन, भय, कथय, तृप्ति, हि, शृण्वत, न, अस्ति, मे, अमृतम् । १८।

और—

जनार्दन =	हे जनार्दन	हि =	क्योंकि (आपके)
आत्मन. =	अपनी	अमृतम् =	{ अमृतमय वचनोंको
योगम् =	योगशक्तिको	शृण्वतः =	सुनते हुए
च =	और (परमैश्वर्यरूप)	मे =	मेरी
विभूतिम् =	विभूतिको	तृप्तिः =	तृप्ति
भूय =	फिर (भी)	न =	नहीं
विस्तरेण =	विस्तारपूर्वक	अस्ति =	होती है
कथय =	कहिये		

अर्थात् सुननेकी उत्कण्ठा बनी ही रहती है ।

श्रीभगवानुवाच

हन्त ते कथयिष्यामि दिव्या ह्यात्मविभूतयः ।

प्राधान्यतः कुरुश्रेष्ठ नास्त्यन्तो विस्तरस्य मे ॥

हन्त. ते, कथयिष्यामि, दिव्या, हि, आत्मविभूतय,

प्राधान्यत, कुरुश्रेष्ठ, न, अस्ति, अन्त, विस्तरस्य, मे ॥ १९॥

इस प्रकार अर्जुनके पूछनेपर श्रीकृष्ण भगवान् बाले-

कुरुश्रेष्ठ	= हे कुरुश्रेष्ठ	कथयिष्यामि	= कहगा
हन्त	= अब (मे)	हि	= क्योंकि
ते	= तेरे लिये	मे	= मेरे
दिव्या	} = { अपनी दिव्य विभूतियोंको	विस्तरस्य	= विस्तारका
आत्म-		अन्त	= अन्त
विभूतयः		न	= नहीं
प्राधान्यतः	= प्रधानतासे	अस्ति	= है

अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताण्यस्थितः ।

अहमादिश्च मध्यं च भूतानामन्त एव च ॥२०॥

अहम्, आत्मा, गुडाकेश, सर्वभूताण्यस्थित,

अहम् आदि, च, मध्यम्, च, भूतानाम्, अन्त, एव, च ॥२०॥

गुडाकेश	= हे अर्जुन	भूतानाम्	= भूतोंका
अहम्	= मे	आदिः	= आदि
सर्वभूताण्य-	{ सर्व भूतोंके स्थित	मध्यम्	= मध्य
स्थित		च	= और
आत्मा	{ शरीरका आत्मा	अन्त	= अन्त
		च	= भी
एव	तब	अहम्	= मैं
	(मध्यम्)	एव	= ही

और हे अर्जुन-

अहम्	= मैं	मरुताम्	= { वायु- देवताओंमे
आदित्या- नाम्	= { अदितिके वारह पुत्रोंमे	मरीचि.	= { मरीचि नामक वायुदेवता
विष्णुः	= { विष्णु अर्थात् वामन अवतार	(और)	
ज्योतिषाम्	= ज्योतियोंमे	नक्षत्राणाम्	= नक्षत्रोंमे
अंशुमान्	= किरणोंवाला	शशी	= { (नक्षत्रोंका अधिपति)
रविः	= सूर्य हू (तथा)	चन्द्रमा	
अहम्	= मैं (उन्चास)	अस्मि	= हू

सामवेद यदि
विभूतिशैली
कथन ।

वेदानां सामवेदोऽस्मि देवानामस्मि वासवः ।

इन्द्रियाणां मनश्चास्मि भूतानामस्मि चेतना ॥२२॥

वेदानाम्, सामवेद, अस्मि, देवानाम्, अस्मि, वासव,

इन्द्रियाणाम् मन, च, अस्मि, भूतानाम्, अस्मि, चेतना ॥२२॥

और मैं-

वेदानाम्	= वेदोंमे	इन्द्रियाणाम्	= इन्द्रियोंमें
सामवेदः	= सामवेद	मनः	= मन
अस्मि	= हू	अस्मि	= हू
देवानाम्	= देवोंमें	भूतानाम्	= भूतप्राणियोंमें
वासवः	= इन्द्र	चेतना	= { चेतनता अर्थात् ज्ञान-
अस्मि	= हू	शक्ति	
च	= और	अस्मि	= हू

रुद्राणां शंकरश्चास्मि वित्तेजो यश्चरश्चसाम ।

वसूनां पावकश्चास्मि मेरुः शिखण्डिणामहम् ॥२३॥

रुद्राणाम्, शंकर, च, अस्मि, वित्तेज, यश्चरश्चसाम्,

वसूनाम्, पावक, च, अस्मि मेरु, शिखण्डिणाम्, अहम् ॥२३॥

और मैं-

रुद्राणाम्	= एकादश रुद्रोंमें	च	= और
शंकर.	= शंकर	अहम्	= मैं
अस्मि	= हैं	वसूनाम्	= आठ वसुओंमें
च	= और	पावकः	= अग्नि
यश्चरश्चसाम्	= { यश तथा गश्चगोमे	अस्मि	= हैं (तथा)
वित्तेज.	= { जनता सामी । कुपेर ३	शिखण्डिणाम्	= { शिखण्डोंमें पर्वतोंमें
		मेरु	= सुमेरु पर्वत

पगंनगा च मुख्य मां विद्धि पार्थ बृहस्पतिम् ।

नैनानानामहं हृन्दः गरगामस्मि आगरः ॥२४॥

(और) सागरः = समुद्र
सरसाम् = जलाशयोमे अस्मि = हू

२३ आदि विभूतियों का वचन । महर्षीणां भृगुरहं गिरामस्त्येकमक्षरम् ।
यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि स्थावराणां हिमालयः ॥२५॥

महर्षीणाम्, भृगु, अहम्, गिराम्, अस्मि, एकम्, अक्षरम्,
यज्ञानाम्, जपयज्ञ, अस्मि, स्थावराणाम्, हिमालय ॥२५॥
और हे अर्जुन-

अहम् = मे	यज्ञानाम् = { सव प्रकारके यज्ञोंमे
महर्षीणाम् = महर्षियोंमें	
भृगुः = भृगु (और)	जपयज्ञः = जपयज्ञ (और)
गिराम् = वचनोमे	स्थावराणाम् = { स्थिर रहने- वालोंमें
एकम् = एक	
अक्षरम् = { अक्षर अर्थात् ओंकार	हिमालयः = { हिमालय पहाड
अस्मि = हू (तथा)	अस्मि = हू

२४ आदि विभूतियों का वचन । अश्वत्थः सर्ववृक्षाणां देवर्षीणां च नारदः ।
गन्धर्वाणां चित्ररथः सिद्धानां कपिलो मुनिः ॥२६॥

अश्वत्थ, सर्ववृक्षाणाम्, देवर्षीणाम्, च, नारद,
गन्धर्वाणाम्, चित्ररथ सिद्धानाम्, कपिल मुनि ॥२६॥

और-

सर्ववृक्षाणाम् = सब वृक्षोमे	नारद = नारदमुनि
अश्वत्थः = पीपल्का वृक्ष	(तथा)
च = और	गन्धर्वाणाम् = गन्धर्वोंमे
देवर्षीणाम् = देवऋषियोंमे	चित्ररथः = चित्ररथ (और)

सिद्धानाम् = सिद्धिमे
कपिलः = कपिल

मुनिः = मुनि
(अस्मि) = इ

उच्चैःश्रवसमश्चाना विद्धि माममृतोद्भवम् ।

ऐरावत गजेन्द्राणां नराणां च नगधिपम् ॥२७॥

उच्चैः श्रवसम्, अश्चनाम्, विद्धि माम्, अमृतोद्भवम्,

ऐरावतम्, गजेन्द्राणाम्, नराणाम्, च, नगधिपम् ॥२७॥

भौर हे अर्जुन ! त-

अश्चनाम् = गेडोंमें
अमनमे

ऐरावतम् = { ऐरावत
नामक तथा

अमृतोद्भवम् = उत्पन्न होने-
वाला

च = तथा
नगराणाम् मनुष्यों

उच्चैः श्रवसम् - { उच्चैः वा
(अर्)
नामक योग

नगधिपम् = राजा
माम् = मेरे लिये (ही)

गजेन्द्राणाम् = गजों

विद्धि = जान

माम् तानामहं वदं धेनूनामस्मि कामधुक् ।

प्रदानश्राम्मि कन्दर्प, सर्पाणामस्मि वागकिः ॥२८॥

प्रजनः = { सन्तानकी
उत्पत्तिका हेतु
कन्दर्पः = कामदेव
अस्मि = हूँ

सर्पाणाम् = सर्पोंमें
वासुकिः = { (सर्पराज)
वासुकि
अस्मि = हूँ

अनन्त आदि विभूतियों का कथन । अनन्तश्चास्मि नागानां वरुणो यादसामहम् ।
पितृणामर्यमा चास्मि यमः संयमतामहम् ॥२६॥
अनन्त, च, अस्मि, नागानाम्, वरुण, यादसाम्, अहम्,
पितृणाम्, अर्यमा, च, अस्मि, यम, संयमताम्, अहम् ॥२९॥

अहम् = मैं
नागानाम् = नागोंमें *
अनन्तः = शेषनाग
च = और
यादसाम् = जलचरोंमें

वरुणः = { (उनका अधि-
पति) वरुण-
देवता

अस्मि = हूँ

च = और
पितृणाम् = पितरोंमें
अर्यमा = { अर्यमा नामक
पित्रेश्वर (तथा)
संयमताम् = { शासन करने-
वालोंमें

यमः = यमराज
अहम् = मैं
अस्मि = हूँ

प्रहाद आदि विभूतियों का कथन । प्रहादश्चास्मि दैत्यानां कालः कलयतामहम् ।
मृगाणां च मृगेन्द्रोऽहं वैनतेयश्च पक्षिणाम् ॥३०॥
प्रहाद च अस्मि, दैत्यानाम्, काल, कलयताम्, अहम्,
मृगाणाम्, च, मृगेन्द्र, अहम्, वैनतेय, च, पक्षिणाम् ॥३०॥
और हे ऋजुन-

अहम् = मैं
दैत्यानाम् = दैत्योंमें

* नाग और सर्प यह दो प्रकारकी सर्पोंकी ही जाति हैं ।

प्रह्लादः	= प्रह्लाद	मृगाणाम्	= पशुओमे
च	= और	मृगेन्द्रः	= मृगराज (सिंह)
कलयताम्	= { गिनती करने- वालोमे	च	= और
कालः	= समय *	पक्षिणाम्	= पक्षियोंमें
अस्मि	= हैं	वैनतेयः	= गरुड
च	= तथा	अहम्	= मैं
		(अस्मि)	= हैं

पवनः पवतामस्मि रामः शस्तभृतामहम् ।
 जघाणां मकरश्चास्मि सोतसामस्मि जाह्नवी ॥ ३१ ॥

पवन , पवताम् , अस्मि राम , शस्तभृताम् अहम् ,
 जघाणाम् , मकर , च , अस्मि , सोतसाम् अस्मि , जाह्नवी ॥ ३१ ॥

और -

अहम्	= मैं	च	= और
पताम	{ पति करने- वाला	शपाणाम्	= मृगाओंमें
पवनः	= समय (और)	मकर	= मगरमच्छ
शस्तभृताम्	= शक्तिशाली	अस्मि	= हैं (और)
माम्	= राम	सोतसाम्	= नदियोंमें
अस्मि	= हैं	जाह्नवी	= यमुना नदी
		अस्मि	= हैं

और—

अर्जुन	= हे अर्जुन	अध्यात्म-	{ अध्यात्मविद्या
सर्गाणाम्	= सृष्टिर्योका	विद्या	{ अर्थात् ब्रह्मविद्या
आदिः	= आदि		(एव)
अन्तः	= अन्त		
च	= और	प्रवदताम् =	{ परस्परमें विवाद
मध्यम्	= मध्य		{ करनेवालोंमें
च	= भी		
अहम्	= मैं	वादः =	{ तत्त्वनिर्णयके
एव	= ही हूँ (तथा)		{ लिये किया
अहम्	= मैं		{ जानेवाला वाद
विद्यानाम्	= विद्याओंमें	(असि) =	हूँ

अक्षरं धादि विभूतियौ का कथन । अक्षराणामकारोऽस्मि द्वन्द्वः सामासिकस्य च ।
अहमेवाक्षयः कालो धाताहं विश्वतोमुखः ॥

अक्षराणाम्, अकार, अस्मि, द्वन्द्व, सामासिकस्य, च,
अहम्, एव, अक्षय, काल, धाता, अहम्, विश्वतोमुख ॥३३॥

तथा—

अहम्	= मैं	असि	= हूँ (तथा)
अक्षराणाम्	= अक्षरोंमें	अक्षयः	= अक्षय
अकारः	= अकार		
च	= और	कालः	= { काल अर्थात्
सामासिकस्य	= ममासोंमें		{ कालका भी
			{ महाकाल
द्वन्द्वः	= { द्वन्द्व नामक		(और)
	{ ममाम		

विश्वतोमुखः	= विराट्स्वरूप	अहम्	= मे
धाता	= { सत्रका धारण पोषण करने- वाला (भी) }	एव	= ही
		(अस्मि)	= ह

मृत्युः सर्वहरश्चाहमुद्धवश्च भविष्यताम् ।

कीर्तिः श्रीर्वाक्च नारीणां स्मृतिर्मेधा धृतिः क्षमा ॥

मृत्यु, सर्वहर, च, अहम्, उद्धव, च, भविष्यताम्,
कीर्ति, श्री, वाक्, च, नारीणाम्, स्मृति, मेधा धृति, क्षमा । ३४।

हे अर्जुन—

अहम्	= मे	नारीणाम्	= स्त्रियों
सर्वहर	= { माता नाश करनेवाला }	कीर्ति	= कीर्ति*
मृत्यु	= मृत्यु	श्री	= श्री
च	और	वाक्	= वाक्
भविष्यताम्	= भविष्यताम्	स्मृति	= स्मृति
	{ भाग होने- वाली }	मेधा	= मेधा
		धृतिः	= धृति
	{ उद्भवित वाला }	च	= और
		क्षमा	= क्षमा
	= अहम्	(अस्मि)	= ह

बृहत्साम, तथा, साम्नाम्, गायत्री, छन्दसाम्, अहम्,
मासानाम्, मार्गशीर्षः, अहम्, ऋतूनाम्, कुसुमाकरः ॥३५॥

तथा	= तथा	मासानाम्	= महीनोंमें
अहम्	= मैं	मार्गशीर्षः	= { मार्गशीर्षका महीना (और)
साम्नाम्	= { गायन करने योग्य श्रुतियोंमें	ऋतूनाम्	= ऋतुओंमें
बृहत्साम	= बृहत्साम (और)	कुसुमाकरः	= वसन्त ऋतु
छन्दसाम्	= छन्दोंमें	अहम्	= मैं
गायत्री	= गायत्री छन्द (तथा)	(अस्मि)	= हूँ

घृत आदि घृतं छलयतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहम् ।
विभूतियों का जयोऽस्मि व्यवसायोऽस्मि सत्त्वं सत्त्ववतामहम् ॥
कदन ।

घृतम्, छलयताम्, अस्मि, तेज, तेजस्विनाम्, अहम्,
जय, अस्मि, व्यवसाय, अस्मि, सत्त्वम्, सत्त्ववताम्, अहम् ॥३६॥

हे अर्जुन—

अहम्	= मैं	जय	= विजय
छलयताम्	= { छल करने- वालोंमें	अस्मि	= हूँ (और)
घृतम्	= जुवा (और)	(व्यव- सायिनाम्)	= { निश्चय करने- वालोंका
तेजस्विनाम्	= { प्रभावशाली पुरुषोंका	व्यवसायः	= निश्चय (एव)
तेजः	= प्रभाव	सत्त्ववताम्	= { सात्त्विक पुरुषोंका
अस्मि	= हूँ (तथा)	सत्त्वम्	= सात्त्विकभाव
अहम्	= मैं	अस्मि	= हूँ
(जेतृणाम्)	= जीतनेवालोंका		

वासुदेवः कश्चि
विभूतियोः का
कथन ।

वृष्णीनां वासुदेवोऽस्मि पाण्डवानां धनंजयः ।

मुनीनामप्यहं व्यासः कवीनामुगना कविः ॥

वृष्णीनाम्, वासुदेव, अस्मि, पाण्डवानाम् धनजयः,

मुनीनाम्, अपि, अहम्, व्यास, कवीनाम्, उगना, कवि ॥३७॥

और-

वृष्णीनाम्	= { वृष्णि- वशियोमे ॥	मुनीनाम्	= मुनिगोमे (एव)
वासुदेव.	= { वासुदेव अर्थात् मे स्नाम् वृष्णाग गणा	व्यासः	= वेदव्यास (और)
	(और)	कवीनाम्	= कविगोमे
		उगना	= शुक्तागर्ग
पाण्डवानाम्	= पाण्डवगोमे	कवि	= कवि
		अपि	= भी
धनंजय	= { धनजय नाना त	अहम्	= म (ही)
		अस्मि	= उ

गुह्यानाम्	= {	गोपनीयोर्मे	अस्मि	= हू (तथा)
		अर्थात् गुप्त	ज्ञानवताम्	= ज्ञानवानोंका
		रखने योग्य	ज्ञानम्	= तत्त्वज्ञान
		भावोंमें	अहम्	= मैं
मौनम्	= मौन		एव	= ही (हूँ)

सर्वरूपसे प्रभाव- यच्चापि सर्वभूतानां बीजं तदहमर्जुन ।

सहित भगवान्- न तदस्ति विना यत्स्यान्मया भूतं चराचरम् ॥३६॥

के स्वरूप का कथन । यत्, च, अपि सर्वभूतानाम्, बीजम्, तत्, अहम्, अर्जुन, न, तत्, अस्ति, विना, यत्, स्यात्, मया, भूतम्, चराचरम् ॥

च	= और	(यतः)	= क्योंकि (ऐसा)
अर्जुन	= हे अर्जुन	तत्	= वह
यत्	= जो	चराचरम्	= चर और अचर (कोई भी)
सर्वभूतानाम्	= सब भूतोंकी	भूतम्	= भूत
बीजम्	= { उत्पत्तिका कारण है	न	= नहीं
तत्	= वह	अस्ति	= है (कि)
अपि	= भी	यत्	= जो
अहम्	= मैं	मया	= मेरेसे
(एव)	= ही (हूँ)	विना	= रहित
		स्यात्	= होवे

इमलिये सब कुछ मेरा ही स्वरूप है ।

भगवत्-विभूति नान्तोऽस्ति मम दिव्यानां विभूतीनां परंतप ।

योयौ अनन्तता-
का का 'न' ।

एष तूद्देशतः प्रोक्तो विभूतेर्विस्तरो मया ॥४०॥

न, अन्त, अस्ति, मम, दिव्यानाम्, विभूतीनाम्, परतप,
एव, तु, उद्देगन्त, प्रोक्तः, विभूते, विस्तर, मया ॥१०॥

परंतप	= हे परतप	तु	= तो
मम	= मेरी	मया	= मैंने (अपनी)
दिव्यानाम्	= दिव्य	विभूते	= विभूतियोंका
विभूतीनाम्	= विभूतियोंका	विस्तर	= विस्तार
अन्तः	= अन्त		(तेरे लिये)
न	= नहीं	उद्देगन्तः	= { ण्कृपेशमे अर्थात् संक्षेपमे
अस्ति	= है	प्रोक्त	= कहा है
एव	= वर		

त्वम् = तू

मम = मेरे

तेजोऽश-संभवम् एव = { तेजके अशसे
ही उत्पन्न हुई
अवगच्छ = जान

भगवान्की योग अथवा बहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन ।
शक्तिके एक विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत् ॥४२॥
अशसे सपूर्ण
जगत्की स्थिति- अथवा, बहुना, एतेन, किम्, ज्ञातेन, तव, अर्जुन,
का कथन । विष्टभ्य, अहम्, इदम्, कृत्स्नम्, एकांशेन, स्थित, जगत् ॥४२॥

अथवा = अथवा
अर्जुन = हे अर्जुन
एतेन = इस
बहुना = बहुत
ज्ञातेन = जाननेसे
तव = तेरा
किम् = क्या प्रयोजन है
अहम् = मैं

इदम् = इस
कृत्स्नम् = सपूर्ण
जगत् = जगत्को
(अपनी
योगमायाके)
एकांशेन = एक अंशमात्रसे
विष्टभ्य = धारण करके
स्थितः = स्थित हू

इसलिये मेरेको ही तत्त्वसे जानना चाहिये ।

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्याया
योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे विभूतियोगो नाम
दशमोऽध्याय ॥ १० ॥

हरि ॐ तत्सत् हरि ॐ तत्सत् हरि ॐ तत्सत्

भगवद्द्वारा सुने
द्रुप माहात्म्यको
बजुन का
स्वीकार करना
और विश्वरूपको
देखनेके लिये
इच्छा प्रगट
करना ।

भवाप्ययौ हि भूतानां श्रुतौ विस्तरशो मया ।

त्वत्तः कमलपत्राक्ष माहात्म्यमपि चाव्ययम् ॥ २ ॥

भवाप्ययौ, हि. भूतानाम्, श्रुतौ, विस्तरश, मया,
त्वत्तः, कमलपत्राक्ष, माहात्म्यम्, अपि, च, अव्ययम् ॥ २ ॥

हि = क्योंकि
कमलपत्राक्ष = हे कमलनेत्र
मया = मैंने
भूतानाम् = भूतोंकी
भवाप्ययौ = { उत्पत्ति और
प्रलय

त्वत्तः = आपसे
विस्तरशः = विस्तारपूर्वक
श्रुतौ = सुने हैं
च = तथा (आपका)
अव्ययम् = अविनाशी
माहात्म्यम् = प्रभाव
अपि = भी (सुना है)

[„] एवमेतद्यथात्थ त्वमात्मानं परमेश्वर ।

द्रष्टुमिच्छामि ते रूपमैश्वरं पुरुषोत्तम ॥ ३ ॥

एवम्, एतत्, यथा, आत्थ, त्वम्, आत्मानम्, परमेश्वर,
द्रष्टुम् इच्छामि, ते, रूपम्, ऐश्वरम्, पुरुषोत्तम ॥ ३ ॥

परमेश्वर = हे परमेश्वर
त्वम् = आप
आत्मानम् = अपनेको
यथा = जैसा
आत्थ = कहने हो
एतत् = यह (ठीक)
एवम् = ऐसा
(एव) = ही है (परन्तु)
पुरुषोत्तम = हे पुरुषोत्तम

ते = आपके
ऐश्वरम् = { ज्ञान ऐश्वर्य
शक्ति बल वीर्य
और तेजयुक्त
रूपम् = रूपको
(प्रत्यक्ष)
द्रष्टुम् = देखना
इच्छामि = चाहता हूँ

विश्वरूपम्

मन्यसे

यदि

तत्

शक्यम्

मया

द्रष्टुमिति

प्रभो ।

मन्यसे यदि तच्छक्यं मया द्रष्टुमिति प्रभो ।

योगेश्वर ततो मे त्वं दर्शयात्मानमव्ययम् ॥ ४ ॥

योगेश्वर तत , मे त्वम्, दर्शय, आत्मानम्, अव्ययम् ॥ ४ ॥

योगेश्वर तत , मे त्वम्, दर्शय, आत्मानम्, अव्ययम् ॥ ४ ॥

इमल्लिगे-

प्रभो = हे प्रभो *

मया = मेरे द्वारा

तत् = तत् (आपका रूप)

द्रष्टुम् = देखना जाना

शक्यम् = शक्य है

यदि = यदि

तत् = तत्

मन्यसे = मानते हैं

तत = तो

योगेश्वर = हे योगेश्वर

त्वम् = आप (आपने)

अव्ययम् = अविनाशी

आत्मानम् = सम्पत्ति

मे = मे

दर्शय = दर्शन कराइयें

योगेश्वर तु त्वम्

च	= और	दिव्यानि	= अलौकिक
नानावर्णा-	= { नाना वर्ण तथा आकृतिवाले	रूपाणि	= रूपोंको
कृतीनि		पश्य	= देख

[„] पश्यादित्यान्वसूक्तद्रानश्विनौ मरुतस्तथा ।

बहून्यदृष्टपूर्वाणि पश्याश्चर्याणि भारत ॥ ६ ॥

पश्य, आदित्यान्, वसून्, रुद्रान्, अश्विनौ, मरुत, तथा,
बहूनि, अदृष्टपूर्वाणि, पश्य, आश्चर्याणि, भारत ॥ ६ ॥

और—

भारत	{ हे भरतवशी अर्जुन(मेरेमे)	(और)
	आदित्योंको	मरुतः = { उन्चास मरुद्गणोंको
आदित्यान्	= { अर्थात् अदितिके द्वादश पुत्रोंको (और)	पश्य = देख तथा = तथा (और भी) बहूनि = बहुतसे
वसून्	= आठ वसुओंको	अदृष्ट-पूर्वाणि = { पहिले न देखे हुए
रुद्रान्	= { एकादश रुद्रोंको (तथा)	आश्चर्याणि = { आश्चर्यमय रूपोंको
अश्विनौ	= { दोनों अश्विनी- कुमारोंको	पश्य = देख

विश्वरूपये एव इहैकस्य जगत्कृत्स्न पश्याद्य सचराचरम् ।

कःशमे सपूर्ण मम देहे गुडाकेश यच्चान्यद्द्रष्टुमिच्छसि ॥ ७ ॥

जगत्सर्वो देखने-

ये लिये भगवान् इह, एकस्यम्, जगत्, कृत्स्नम्, पश्य, अद्य, सचराचरम्,

वा वचन । मम, देहे, गुडाकेश, यत्, च, अन्यत्, द्रष्टुम्, इच्छामि ॥७॥

और-

गुडाकेज	= हे अर्जुन*	कृत्स्नम्	= सपूर्ण
अद्य	= अब	जगत्	= जगत्को
इह	= इस	पश्य	= भेग (ना)
मम	= मेरे	अन्यत्	= और
दंष्ट्रे	= शरीर	च	= भी
एकम्	= (एक जगत्)	यत्	= जो (हुआ)
	= (भिन्न जगत्)	द्रष्टुम्	= भेगना
नान्यत्	= (नाना)	उन्मगि	= चाहता है
	= (भिन्न)		(गो भेग)

सजय उवाच

अर्जुनके प्रति एवमुक्त्वा ततो राजन्महायोगेश्वरो हरिः ।
 भगवान् द्वारा दर्शयामास पार्थाय परमं रूपमैश्वरम् ॥ ६ ॥
 अपने विश्वरूप-
 का दिखाया एवम्, उक्त्वा, तत, राजन्, महायोगेश्वर., हरि,
 जाना । दर्शयामास, पार्थाय, परमम्, रूपम्, ऐश्वरम् ॥ ९ ॥

सजय बोला-

राजन्	= हे राजन्	उक्त्वा	= कहकर
महायोगेश्वर.	= महायोगेश्वर (और)	ततः	= उसके उपरान्त
हरिः	= { मत्र पापोंके नाश करने- वाले भगवान् ने	पार्थाय	= अर्जुनके लिये
एवम्	= इस प्रकार	परमम्	= परम
		ऐश्वरम्	= ऐश्वर्ययुक्त
		रूपम्	= दिव्य स्वरूप
		दर्शयामास	= दिखाया

सजयद्वारा विश्व- अनेकवक्त्रनयनमनेकाद्भुतदर्शनम् ।

रूपका वर्णन ।

अनेकदिव्याभरणं दिव्यानेकोद्यतायुधम् ॥ १० ॥

अनेकवक्त्रनयनम्, अनेकाद्भुतदर्शनम्,
 अनेकदिव्याभरणम्, दिव्यानेकोद्यतायुधम् ॥ १० ॥

और उस-

अनेकवक्त्र- नयनम्	= { अनेक मुख और नेत्रोंसे युक्त (तथा)	अनेक- दिव्या- भरणम्	= { बहुतसे दिव्य- भूषणोंसे युक्त (और)
अनेकाद्भुत- दर्शनम्	= { अनेक अद्भुत दर्शनोवा (एवं)	दिव्यानेको- द्यतायुधम्	= { बहुतसे दिव्य शस्त्रोंको हाथों- में उठाये हुए

] दिव्यमात्म्याम्बुधरं दिव्यगन्धानुलेपनम् ।

सर्वाश्चर्यमयं देवमनन्तं विश्वतोमुखम् ॥११॥

दिव्यमात्म्याम्बुधरम् दिव्यगन्धानुलेपनम्,

सर्वाश्चर्यमयम् देवम्, अनन्तम्, विश्वतोमुखम् ॥११॥

११-

दिव्य-	दिव्यमात्र ओ	सर्वाश्चर्य-	मि । पक्षारके
मात्म्याम्बु-	= चोक्तो नाग	मयम्	= आश्चर्यागे गत
धरम्	किरे - (ओ)	अनन्तम्	= गीमारहित
दिव्यगन्धा-	दिव्य गन्धा	विश्वतोमुखम्	= गन्धरूप
नुलेपनम्	= लेपन	देवम्	= परमेश
	कि । ना		= परमेश्वरता
	(११)	(अप्रगत)	= अर्जुनस्य

अनुनका विश्व-
रूपमे नपूर्ण
तात्को पक
जगह भित
देवना ।

तत्रैकस्थं जगत्कृत्स्नं प्रविभक्तमनेकधा ।
अपश्यद्देवदेवस्य शरीरे पाण्डवस्तदा ॥१३॥
तत्र, एकस्थम्, जगत्, कृत्स्नम्, प्रविभक्तम्, अनेकधा,
अपश्यत्, देवदेवस्य, शरीरे, पाण्डव., तदा ॥१३॥

ऐसे आश्चर्यमय रूपको देखते हुए-

पाण्डवः = { पाण्डुपुत्र तत्र = उस
= { अर्जुनने
तदा = उस कालमें
अनेकधा = अनेक प्रकारसे
प्रविभक्तम् = { विभक्त हुए शरीरे = शरीरमें
= { अर्थात् पृथक्
= { पृथक् हुए
कृत्स्नम् = सपूर्ण
जगत् = जगत्को
अपश्यत् = देखा

विश्वरूपः । ततः स विस्मयाविष्टो हृष्टरोमा धनंजयः ।

प्रणम्य शिरसा देवं कृताञ्जलिरभाषत ॥१४॥
ततः, स, विस्मयाविष्ट, हृष्टरोमा, धनजय,
प्रणम्य, शिरसा, देवन्, कृताञ्जलि, अभाषत ॥१४॥

और-

तत = { उमके
= { अनन्तर
स = वह
विस्मया- = { आश्चर्यमे
विष्टः = { युक्त हुआ
हृष्टरोमा = { हर्षित
= { रोमोंवाला
धनंजय = अर्जुन
देवम् = { विश्वरूप
= { परमात्माको

विश्वरूपको
अनेक बाहु और
उदर नाम्नि
युक्त देखना ।

अनेकबाहुदरवक्त्रनेत्रं
पश्यामि त्वां सर्वतोऽनन्तरूपम् ।
नान्तं न मध्यं न पुनस्तवादिं
पश्यामि विश्वेश्वर विश्वरूप ॥१६॥

अनेकबाहुदरवक्त्रनेत्रम्, पश्यामि, त्वाम्, सर्वत, अनन्तरूपम्,
न अन्तम्, न, मध्यम्, न, पुन, तव, आदिम्, पश्यामि,
विश्वेश्वर, विश्वरूप ॥१६॥

ओर-

विश्वेश्वर=	{ हे सपूर्ण विश्व- के स्वामिन्	विश्वरूप= हे विश्वरूप तव = आपके
त्वाम्	= आपको	न = न
अनेक-	{ अनेक हाथ पेट	अन्तम् = अन्तको (देखना है)
बाहुदर-	{ भुज और	(तथा)
वक्त्रनेत्रम्	{ नेत्रोत्तरे युक्त (तथा)	न = न
सर्वतः	= सब ओरसे	मध्यम् = मध्यको
अनन्त-	{ अनन्त	पुनः = और
रूपम्	{ रूपोंवाला	न = न
पश्यामि	= देखता हूँ	आदिम् = आदिको (ही)
		पश्यामि = देखता हूँ

(विश्वरूपको)
बिरीट, गदा
और चक्र नाम्नि-
युक्त देखना ।

किरीटिनं गदिनं चक्रिणं च
तेजोराशिं सर्वतो दीप्तिमन्तम् ।
पश्यामि त्वा दुर्निरीक्ष्यं समन्ता-
दीप्तानलार्वाद्युतिमप्रमेयम् ॥१७॥

इसलिये हे भगवन्-

त्वम्	= आप (ही)	निधानम्	= आश्रय है (तथा)
वेदितव्यम्	= जानने योग्य	त्वम्	= आप (ही)
परमम्	= परम	शाश्वत-	= { अनादि धर्म-
	अक्षर है	धर्मगोप्ता	= { के रक्षक हैं
अक्षरम्	= { अर्थात् परब्रह्म		(और)
	{ परमात्मा हैं	त्वम्	= आप (ही)
	(और)	अव्ययः	= अविनाशी
त्वम्	= आप (ही)	सनातनः	= सनातन
अस्य	= इस	पुरुषः	= पुरुष है (ऐसा)
विश्वस्य	= जगत्के	मे	= मेरा
परम्	= परम	मतः	= मत है

दानं नानर्थ्यं
और प्रभावयुक्त
विश्वरूप का
दशन ।

अनादिमध्यान्तमनन्तवीर्य-
मनन्तबाहुं शशिसूर्यनेत्रम् ।
पश्यामि त्वां दीप्तहुताशवक्त्रं

स्वतेजसा विश्वमिदं तपन्तम् ॥ १६ ॥

अनादिमध्यान्तम्, अनन्तवीर्यम्, अनन्तबाहुम्,
शशिसूर्यनेत्रम्, पश्यामि, त्वाम्, दीप्तहुताशवक्त्रम्,
स्वतेजसा, विश्वम्, इदम्, तपन्तम् ॥ १६ ॥

हे परमेश्वर ! मैं-

त्वाम्	= आपको	अनन्त-	= { अनन्त सामर्थ्यसे
अनादि-	= { आदि अन्त	वीर्यम्	= { युक्त (और)
मध्यान्तम्	= { और मध्यसे	अनन्त-	= { अनन्त
	{ रहित (तथा)	बाहुम्	= { हाथोवाला

रूपम् = रूपको
दृष्ट्वा = देखकर
लोकत्रयम् = तीनों लोक

प्रव्यथितम् = { अतिव्यथाको
प्राप्त हो रहे हैं

विधिरूपमें प्रवेश
करते हुए देवा-
देवियों और
स्तुति करने हुए
महर्षि आदिओं-
की प्रधान ।

अमी हि त्वां सुरसंघा विशन्ति
केचिद्धीताः प्राञ्जलयो गृणन्ति ।
स्वस्तीत्युक्त्वा महर्षिसिद्धसंघाः
स्तुवन्ति त्वां स्तुतिभिः पुष्कलाभिः ॥२१॥

अमी, हि, त्वाम्, सुरसंघा, विशन्ति, केचित्, भीता,
प्राञ्जलय, गृणन्ति, स्वस्ति, इति, उक्त्वा, महर्षिसिद्धसंघा,
स्तुवन्ति, त्वाम्, स्तुतिभिः, पुष्कलाभिः ॥ २१ ॥

और हे गोविन्द—

अमी	= वे (सब)	गृणन्ति	= उच्चारण करते हैं (तथा)
सुरसंघाः	= { देवताओंके समूह	महर्षि- सिद्धसंघाः	= { महर्षि और सिद्धोंके समुदाय
त्वाम्	= आपमें	स्वस्ति	= कन्याएँ होवे
हि	= ही	इति	= ऐसा
विशन्ति	= प्रवेश करने हैं (और)	उक्त्वा	= कहकर
केचित्	= कर्तृ एक	पुष्कलाभिः	= उत्तम उत्तम
भीताः	= भयभीत होकर	स्तुतिभिः	= स्तोत्रोंद्वारा
प्राञ्जलयः	= हाथ जोड़े हुए (आपके नाम और गुणोंका)	त्वाम्	= आपकी
		स्तुवन्ति	= स्तुति करते हैं

रूपम्, महत्, ते, बहुवक्त्रनेत्रम्, महाबाहो, बहुबाहुरूपादम्,
बह्वदरम्, बहुदंष्ट्राकरालम्, दृष्ट्वा, लोका, प्रव्यथिता,
तथा, अहम् ॥ २३ ॥

और-

महाबाहो	= हे महाबाहो	बहुदंष्ट्रा-	{ बहुतसी
ते	= आपके	करालम्	{ विकराल
बहुवक्त्र-	{ बहुत मुख		{ जाडोवाले
नेत्रम्	= { और नेत्रोंवाले	महत्	= महान्
	(तथा)	रूपम्	= रूपको
बहुबाहुरू-	{ बहुत हाथ	दृष्ट्वा	= देखकर
पादम्	= { जघा और	लोकाः	= सब लोक
	{ पैरोंवाले	प्रव्यथिताः	= { व्याकुल हो
	(और)		{ रहे हैं
बह्वदरम्	= { बहुत	तथा	= तथा
	{ उदरोंवाले	अहम्	= मैं
	(तथा)	(अपि)	= भी
			(व्याकुल हो रहा हूं)

नमःस्पृश दीप्तमनेकवर्णं
व्यात्तानन दीप्तविशालनेत्रम् ।
दृष्ट्वा हि त्वां प्रव्यथितान्तरात्मा
धृति न विन्दामि शम च विष्णो ॥ २४ ॥

नम स्पृशम् दीप्तम्, अनेकवर्णम्, व्यात्ताननम्,
दीप्तविशालनेत्रम्, दृष्ट्वा, हि त्वाम्, प्रव्यथितान्तरात्मा,
धृतिम्, न, विन्दामि, शमम्, च, विष्णो ॥२४॥

सुखानि	= सुखोंको	न	= नहीं
दृष्ट्वा	= देखकर	लभे	= प्राप्त होता हूँ
दिशः	= दिशाओंको	(अतः)	= इसलिये
न	= नहीं	देवेश	= हे देवेश
जाने	= जानता हूँ	जगन्निवास	= हे जगन्निवास
च	= और	(आप)	
गर्म	= सुखको	प्रसीद	= प्रसन्न होवे
एव	= भी		

दोनों सेनाओंके
योधों का
विराट स्वरूपके
मुझमें प्रवेश हो-
कर नष्ट होने
हुए गयना ।

अमी च त्वां धृतराष्ट्रस्य पुत्राः

सर्वे सहैवावनिपालसंघैः ।

भीष्मो द्रोणः सूतपुत्रस्तथासौ

सहास्मदीयैरपि योधमुख्यैः ॥ २६ ॥

अमी, च, त्वाम्, धृतराष्ट्रस्य, पुत्रा, सर्वे, सह, एव,
अवनिपालसंघैः, भीष्म, द्रोण, सूतपुत्र, तथा, असौ,
नह, अस्मदीये, अपि, योधमुख्यैः ॥ २६ ॥

और मैं देखता हूँ कि—

अमी	= वे	त्वाम्	= आपमें
सर्वे	= सब	(विशन्ति)	= प्रवेश करने हैं
एव	= ही	च	= और
धृतराष्ट्रस्य	= धृतराष्ट्रके	भीष्मः	= भीष्मपितामह
पुत्राः	= पुत्र	द्रोणः	= द्रोणाचार्य
अवनि-	= । राजाओंके	तथा	= तथा
पालसंघैः	= । समुदाय	असौ	= वह
सह	= सहित	सूतपुत्रः	= कर्ण (और)

यथा, नदीनाम्, बहव, अम्बुवेगा, समुद्रम्, एव,
अभिमुखा, द्रवन्ति, तथा, तत्र, अमी, नरलोकवीरा,
विशन्ति, वक्त्राणि, अभिविज्वलन्ति ॥ २८ ॥

आर हे विश्वमूर्ते-

यथा	= जैसे	तथा	= वैसे ही
नदीनाम्	= नदियोंके	अमी	= वे
बहवः	= बहुतसे	नरलोक-	{ शूरवीर
अम्बुवेगाः	= जलके प्रवाह	वीराः	{ मनुष्योंके
समुद्रम्	= समुद्रके		{ समुदाय (भी)
एव	= ही	तव	= आपके
अभिमुखाः	= सम्मुख	अभि-	} = प्रज्वलित हुए
	{ दौड़ते हैं	विज्वलन्ति	
द्रवन्ति	= { अर्थात् समुद्रमें	वक्त्राणि	= मुखोंमें
	{ प्रवेश करते हैं	विशन्ति	= प्रवेश करते हैं

द पत्र और पतङ्ग
न टूटानसे नाश
न टूटयका कालन

यथा प्रदीप्तं ज्वलनं पतङ्गा

विशन्ति नाशाय समृद्धवेगाः ।

तथैव नाशाय विशन्ति लोका-

स्तवापि वक्त्राणि समृद्धवेगाः ॥ २९ ॥

यथा प्रदीप्तम्, ज्वलनम्, पतङ्गा, विशन्ति, नाशाय,
समृद्धवेगा, तथा, एव, नाशाय, विशन्ति, लोका,
तत्र, अपि, वक्त्राणि, समृद्धवेगा ॥ २९ ॥

अथवा-

यथा = जैसे (मोहके बग होकर)
पतङ्गा = पतङ्ग , नाशाय = नष्ट होनेके लिये

उत्प्ररूपधारी
भवान्को तत्त्व-
मे जानने के
लिये अर्जुनका
प्रश्न ।

आख्याहि मे को भवानुग्ररूपो
नमोऽस्तु ते देववर प्रसीद ।
विज्ञातुमिच्छामि भवन्तमाद्यं
न हि प्रजानामि तव प्रवृत्तिम् ॥३१॥

आख्याहि, मे, क, भवान्, उग्ररूप, नम, अस्तु, ते, देववर,
प्रसीद, विज्ञातुम्, इच्छामि, भवन्तम्, आद्यम्, न, हि,
प्रजानामि, तव, प्रवृत्तिम् ॥ ३१ ॥

हे भगवन ! कृपा करके—

मे	= मेरे प्रति	आद्यम्	= आदिस्वरूप
आख्याहि	= कहिये (कि)	भवन्तम्	= आपको (मे)
भवान्	= आप	विज्ञातुम्	= तत्त्वमे जानना
उग्ररूपः	= उग्ररूपवाले	इच्छामि	= चाहता हूँ
कः	= कोन हूँ	हि	= क्योंकि
देववर	= हे देवोंमें श्रेष्ठ	तव	= आपकी
ते	= आपको	प्रवृत्तिम्	= प्रवृत्तिको (मे)
नम	= नमस्कार	न	= नहीं
अस्तु	= होवे (आप)	प्रजानामि	= जानना
प्रसीद	= प्रमन होइये		

श्रीभगवानुवाच

कालोऽस्मि लोकक्षयकृत्प्रवृद्धो
लोकांस्तमाहर्तुमिह प्रवृत्तः ।
ऋतेऽपि त्वां न भविष्यन्ति मर्वे
येऽवस्थिताः प्रत्यनीकेषु योधाः ॥३२॥

कौपीनी ना
चानवे लि
प्रत्य हृष्टा
गतावाल
इत्यादि वचनोंमें
अर्जुन
६६२ ।

उत्तिष्ठ	= खड़ा हो (और)	एव	= ही
यशः	= यशको	मया	= मेरेद्वारा
लभस्व	= प्राप्त कर (तथा)	निहताः	= मारे हुए हैं
शत्रून्	= शत्रुओंको	सव्यसाचिन्=	{ हे सव्य- साचिन्*
जित्वा	= जीतकर		
समृद्धम्	= धनधान्यसे सम्पन्न		(त तो)
राज्यम्	= राज्यको	निमित्त-	{ केवल निमित्तमात्र
भुङ्क्ष्व	= भोग (और)	मात्रम्	
एते	= यह सब (शूरवीर)	एव	= ही
पूर्वम्	= पहिलेसे	भव	= हो जा

["]

द्रोण च भीष्मं च जयद्रथं च
कर्णं तथान्यानपि योधवीरान् ।

मया हतांस्त्व जहि मा व्यथिष्ठा

युध्यस्व जेतारि रणे सपत्नान् ॥ ३४ ॥

द्रोणम्, च, भीष्मम्, च, जयद्रथम्, च कर्णम्, तथा,
अन्यान्, अपि, योधवीरान्, मया, हतान्, त्वम्, जहि,
मा, व्यथिष्ठा युध्यस्व, जेतारि, रणे सपत्नान् ॥ ३४ ॥

तथा हन-

द्रोणम्	= द्रोणाचार्य	जयद्रथम्	= जयद्रथ
च	= और	च	= और
भीष्मम्	= भीष्मपितामह	कर्णम्	= कर्ण
च	= तथा	तथा	= तथा

* सा. दायक भा द्रोण च नरा जयद्रथं दोनेसे अजुनरा नाम

सव्यसाची हुआ था ।

म० गी० ६९—

कृष्णम् = { भगवान् | सगद्गदम् = गद्गद वाणीसे
श्रीकृष्णके प्रति आह = बोला

अर्जुन उवाच

भगवान्के

महत्त्वका वर्णन

स्थाने हृषीकेश तव प्रकीर्त्या

जगत्प्रहृष्यत्यनुरज्यते च ।

रक्षांसि भीतानि दिशो द्रवन्ति

मर्वे नमस्यन्ति च सिद्धसंधाः ॥ ३६ ॥

स्थाने. हृषीकेश, तव, प्रकीर्त्या, जगत्, प्रहृष्यति, अनुरज्यते,
च, रक्षामि, भीतानि. दिश, द्रवन्ति, मर्वे, नमस्यन्ति,
च, सिद्धसंधा ॥ ३६ ॥

कि-

हृषीकेश	= हे अन्तर्यामिन्	(तथा)
स्थाने	= यह योग्य ही है (कि)	भीतानि = भयभीत हुए
(यत्)	= जो	रक्षांसि = राक्षसलोग
तव	= आपके	दिश = दिशाओंमें
प्रकीर्त्या	= { नाम और प्रभाव- के कीर्तनमें	द्रवन्ति = भागते हैं
जगत्	= जगत्	च = और
प्रहृष्यति	= अति हर्षित होता है	मर्वे = मर्व
च	= आर	सिद्धसंधा = { सिद्धगणोंके समुदाय
अनुरज्यते	= { अनुगमको भी प्राप्त होता है	नमस्यन्ति = नमस्कार करने हैं

त्वम्, आदिदेव, पुरुष, पुराण, त्वम्, अस्य, विश्वम्, परम्,
निधानम्, वेत्ता, अग्नि, वेद्यम्, च, परम्, च, धाम,
त्वया, ततम्, विश्वम्, अनन्तरूप ॥३८॥

और हे प्रभो-

त्वम्	= आप	(तथा)
आदिदेवः	= आदिदेव(और)	वेद्यम् = जानने योग्य
पुराणः	= सनातन	च = और
पुरुषः	= पुरुष हैं	परम् = परम
त्वम्	= आप	धाम = धाम
अस्य	= इम	असि = हैं
विश्वस्य	= जगत्के	अनन्तरूप = हे अनन्तरूप
परम्	= परम	त्वया = आपसे(यह मंत्र)
निधानम्	= आश्रय	विश्वम् = जगत्
च	= और	ततम् = { व्याप्त अर्थात्
वेत्ता	= जाननेवाले	{ परिपूर्ण हैं

”]

वायुर्यमोऽग्निर्वरुणः शशाङ्कः

प्रजापतिस्त्वं प्रपितामहश्च ।

नमो नमस्तेऽस्तु सहस्रकृत्वः

पुनश्च भूयोऽपि नमो नमस्ते ॥३९॥

वायु, यम, अग्नि, वरुण, शशाङ्क, प्रजापति, त्वम्,
प्रपितामह, च, नम, नम, ते, अस्तु, सहस्रकृत्व, पुन,
च, भूय, अपि, नम, नम, ते ॥३९॥

और हे हरे-

त्वम् = आप वायु = वायु

अस्तु	= होवे (क्योंकि)	समाप्नोषि	= { व्याप्त किये हुए हैं
अमित-	= { अनन्त	ततः	= इससे (आप ही)
विक्रमः	= { पराक्रमशाली	सर्वः	= सर्वरूप
त्वम्	= आप	असि	= है
सर्वम्	= सब ससारको		

अपराधक्षमाके
लिये अर्जुनको
प्रार्थना ।

सखेति मत्वा प्रसभं यदुक्तं

हे कृष्ण हे यादव हे सखेति ।

अजानता महिमान तवेदं

मया प्रमादात्प्रणयेन वापि ॥४१॥

सखा, इति, मत्वा, प्रसभम्, यत्, उक्तम्, हे कृष्ण,
हे यादव, हे सखे, इति, अजानता, महिमानम्, तव,
इदम् मया, प्रमादात् प्रणयेन, वा अपि ॥४१॥

हे परमेश्वर-

मखा	= मखा	वा	= अथवा
इति	= ऐसे	प्रमादात्	= प्रमादमे
मत्वा	= मानकर	अपि	= भी
तव	= आपके	हे कृष्ण	= हे कृष्ण
इदम्	= इस	हे यादव	= हे यादव
महिमानम्	= प्रभावको	हे सखे	= हे सखे
अजानता	= न जानते हुए	इति	= इस प्रकार
मया	= मेरेद्वारा	यत्	= जो (कह)
प्रणयेन	= प्रेमसे	प्रसभम्	= हठपूर्वक
		उक्तम्	= कहा गया है

यच्चावहासार्थमसत्कृतोऽसि

विहारशय्यासनभोजनेषु

1

एकोऽथवाप्यच्युत

तत्समक्षं

तत्क्षामये

त्वामहमप्रमेयम् ॥४२॥

यत्, च, अवहासार्थम्, असत्कृत, असि,
विहारशय्यासनभोजनेषु, एक, अथवा, अपि, अच्युत,
तत्त्वमक्षम्, तत्, क्षामये, त्वाम्, अहम्, अप्रमेयम् ।

च	= और	अपि	= भी
अच्युत	= हे अच्युत	असत्कृतः	= { अपमानित किये गये
यत्	= जो (आप)	अमि	= है
अव- हासार्थम् }	= हमीके लिये	तत्	= वह (सब अपराध)
{ विहार गय्या	= { विहार गया आमन और	अप्रमेयम्	= { अप्रमेयस्वरूप अर्थात् अनित्य
{ आमन भोजनेषु	{ भोजनादिकोमे		{ प्रभाव वाले
एकः	= अकेले	त्वाम्	= आपसे
अथवा	= अथवा	अहम्	= मैं
तन्ममक्षम्	= { उन मन्वाओ- के मामने	क्षामये	= क्षमा कराता हू

पितामि लोकस्य चराचरस्य

त्वमस्य पृथक् गुणगर्गियान् ।

न त्वत्तममोऽस्त्यभ्यधिकः कुतोऽन्यो

लोकत्रयेऽयप्रतिमप्रभाव

॥३३॥

पिता, असि, लोकत्रय, चराचरस्य, त्वम्, अस्य, पूज्य, च,
गुरु, गरीयान्, न, त्वत्सम, अस्ति, अभ्यधिक, कुतः,
अन्य, लोकत्रये, अपि, अप्रतिमप्रभाव ॥४३॥

हे विश्वेश्वर—

त्वम्	= आप	अप्रतिम-	= { हे अतिशय
अस्य	= इस	प्रभाव	= { प्रभाववाले
चराचरस्य	= चराचर	लोकत्रये	= तीनों लोकोंमें
लोकस्य	= जगत्के	त्वत्समः	= आपके समान
पिता	= पिता	अपि	= भी
च	= और	अन्यः	= दूसरा कोई
गरीयान्	= गुरुसे भी बड़े	न	= नहीं
गुरुः	= गुरु (एव)	अस्ति	= है (फिर)
पूज्यः	= अति पूजनीय	अभ्यधिकः	= अधिक
अग्नि	= है	कुतः	= कैसे (होवे)

प्रसन्न होनेके
लिये और
स्वपराय सहनेके
लिये अर्जुनको
शायना ।

तस्मात्प्रणम्य प्रणिधाय कायं

प्रसादये त्वामहमीशमीड्यम् ।

पितेव पुत्रस्य सखेव सख्युः

प्रियः प्रियायार्हसि देव सोढुम् ॥४४॥

तस्मात्, प्रणम्य, प्रणिधाय, कायम्, प्रसादये, त्वाम्,
अहम्, ईशम्, ईड्यम्, पिता, इव पुत्रस्य, सखा, इव,
सख्युः, प्रिय, प्रियाया, अर्हसि, देव, सोढुम् ॥४४॥

तस्मात्	= इममे (हे प्रभो)	प्रणिधाय	= { अच्छी प्रकार चरणोंमें रखके (और)
अहम्	= मैं		
वायम्	= शरीरको		

[„]

यच्चावहासार्थमसत्कृतोऽसि

विहारशय्यासनभोजनेषु ।

एकोऽथवाप्यच्युत

तत्समक्षं

तत्क्षामये

त्वामहमप्रमेयम् ॥४२॥

यत्, च, अवहासार्थम्, असत्कृत, असि,
विहारशय्यासनभोजनेषु, एक, अथवा, अपि, अच्युत,
तत्समक्षम्, तत्, क्षामये, त्वाम्, अहम्, अप्रमेयम् ॥४२॥

च	= और	अपि	= भी
अच्युत	= हे अच्युत		
यत्	= जो (आप)	असत्कृतः	= { अपमानित किये गये
अव-			
हासार्थम् }	= हमीके लिये	असि	= है
विहार		तत्	= वह (सब अपराध)
शय्या	= { विहार शय्या		
आसन	= { आसन और	अप्रमेयम्	= { अप्रमेयस्वरूप अर्थात् अचिन्त्य
भोजनेषु	= { भोजनादिकोमें		= { प्रभाववाले
एकः	= अकेले	त्वाम्	= आपसे
अथवा	= अथवा	अहम्	= मैं
तत्समक्षम्	= { उन सखाओ-	क्षामये	= क्षमा कराता हू
	= { के सामने		

भगवान् के
अतिशय प्रभाव-
का कथन ।

पितासि लोकस्य चराचरस्य
त्वमस्य पूज्यश्च गुरुर्गरीयान् ।

न त्वत्समोऽस्त्यभ्यधिकः कुतोऽन्यो

लोकत्रयेऽप्यप्रतिमप्रभाव

॥४३॥

पिता, असि, लोकस्य, चराचरस्य, त्वम्, अस्य, पूज्य., च, गुरु, गरीयान्, न, त्वत्सम, अस्ति, अभ्यधिक., कुत, अन्य, लोकत्रये, अपि, अप्रतिमप्रभाव ॥४३॥

हे विश्वेश्वर—

त्वम्	= आप	अप्रतिम-	= { हे अतिशय
अस्य	= इस	प्रभाव	= { प्रभाववाले
चराचरस्य	= चराचर	लोकत्रये	= तीनों लोकोंमें
लोकस्य	= जगत्के	त्वत्समः	= आपके समान
पिता	= पिता	अपि	= भी
च	= और	अन्यः	= दूसरा कोई
गरीयान्	= गुरुसे भी बड़े	न	= नहीं
गुरुः	= गुरु (एव)	अस्ति	= है (फिर)
पूज्यः	= अति पूजनीय	अभ्यधिकः	= अधिक
अग्नि	= हे	कुतः	= कैसे (होवे)

प्रसन्न होनेके
लिये और
अपराध सहनेके
लिये अर्जुनको
प्राप्तना ।

तस्मात्प्रणम्य प्रणिधाय कायं

प्रसादये त्वामहमीशमीड्यम् ।

पितेव पुत्रस्य मखेव मख्युः

प्रियः प्रियायार्हसि देव सोढुम् ॥४४॥

तस्मात्, प्रणम्य, प्रणिधाय. कायम्, प्रसादये, त्वाम्, अहम्, ईशम्, ईड्यम्, पिता, इव. पुत्रस्य. मखा, इव, मख्यु, प्रिय, प्रियाया, अर्हसि, देव, सोढुम् ॥४४॥

तस्मात्	= इन्मने (हे प्रभो)	प्रणिधाय = { अच्छी प्रकार चरणोंमें रखके (और)
अहम्	= मैं	
कायम्	= शरीरको	

प्रणम्य	= प्रणाम करके	सखा	= सखा
ईड्यम्	= स्तुति करने योग्य	इव	= जैसे
त्वाम्	= आप	सख्युः	= सखाके (और)
ईशम्	= ईश्वरको	प्रियः	= पति
		(इव)	= जैसे
प्रमादये	= { प्रसन्न होनेके लिये प्रार्थना करना हूँ	प्रियायाः	= प्रिय स्त्रीके (वैसे ही आप भी)
देव	= हे देव	(मम)	= मेरे
पिता	= पिता	(अपराधम्)	= अपराधको
इव	= जैसे	सोढुम्	= सहन करनेके लिये
पुत्रस्य	= पुत्रके (और)	अर्हसि	= योग्य हैं

चतुर्भुजरूप
दिखानेके लिये
भर्जुनकी प्रार्थना

अदृष्टपूर्वं हृषितोऽस्मि दृष्ट्वा

भयेन च प्रव्यथितं मनो मे ।

तदेव मे दर्शय देव रूपं

प्रसीद देवेश जगन्निवास ॥४५॥

अदृष्टपूर्वम्, हृषित, अस्मि, दृष्ट्वा, भयेन, च, प्रव्यथितम्,
मन, मे, तत्, एव, मे, दर्शय, देव, रूपम्, प्रसीद,
देवेश, जगन्निवास ॥४५॥

हे विश्वमूर्ते ! मैं-

अदृष्ट-	= { पहिले न देखे हुए आश्चर्यमय आपके इस रूपको	अस्मि	= हूँ (और)
पूर्वम्		मे	= मेरा
दृष्ट्वा	= देखकर	मन	= मन
हृषित	= हर्षित हो रहा	भयेन	= भयमे

प्रव्यथितम्	= { अति व्याकुल	एव	= ही
च	= { भी हो रहा है	मे	= मेरे लिये
(अतः)	= इसलिये	दर्शय	= दिखाइये
देव	= हे देव (आप)	देवेश	= हे देवेश
तत्	= उस	जगन्निवास	= हे जगन्निवास
	(अपने चतुर्भुज)	प्रसीद	= प्रसन्न होइये
रूपम्	= रूपको		

”]

किरीटिनं गदिनं चक्रहस्त-
मिच्छामि त्वां द्रष्टुमहं तथैव ।
तेनैव रूपेण चतुर्भुजेन

सहस्रबाहो भव विश्वमूर्ते ॥४६॥

किरीटिनम्, गदिनम्, चक्रहस्तम् इच्छामि, त्वाम्, द्रष्टुम्,
अहम् तथा, एव तेन एव, रूपेण चतुर्भुजेन, सहस्रबाहो,
भव, विश्वमूर्ते ॥४६॥

और हे विष्णो-

अहम्	= मैं	इच्छामि	= चाहता हूँ
तथा	= वैसे	(अतः)	= इसलिये
एव	= ही	विश्वमूर्ते	= हे विश्वस्वरूप
त्वाम्	= आपको	सहस्रबाहो	= हे सहस्रबाहो
			(आप)
किरीटिनम्	= { मुकुट धारण	तेन	= उस
	= { किये हुए (तथा)	एव	= ही
गदिनम्	= { गदा और चक्र	चतुर्भुजेन	= चतुर्भुज
चक्रहस्तम्	= { हाथों लिये हुए	रूपेण	= रूपमें (युक्त)
द्रष्टुम्	= देखना	भव	= होइये

श्रीभगवानुवाच

भगवान्के
द्वारा अपने विद्व
रूपकी प्रशंसा ।

मया प्रसन्नेन तवार्जुनेदं

रूपं परं दर्शितमात्मयोगात् ।

तेजोमयं विश्वमनन्तमाद्यं

यन्मे त्वदन्येन न दृष्टपूर्वम् ॥४७॥

मया, प्रसन्नेन, तव, अर्जुन, इदम्, रूपम्, परम्, दर्शितम्,
आत्मयोगात्, तेजोमयम्, विश्वम्, अनन्तम्, आद्यम्, यत्,
मे, त्वदन्येन, न, दृष्टपूर्वम् ॥४७॥

इस प्रकार अर्जुनकी प्रार्थनाको सुनकर श्रीकृष्ण भगवान् बोले—

अर्जुन	= हे अर्जुन	(और)
प्रसन्नेन	= अनुग्रहपूर्वक	अनन्तम् = सीमारहित
मया	= मैने	विश्वम् = विराट्
आत्मयोगात्	= { अपनी योगशक्तिके प्रभावसे	रूपम् = रूप तव = तेरेको दर्शितम् = दिखाया है
इदम्	= यह	यत् = जो (कि)
मे	= मेरा	त्वदन्येन = { तेरे सिवाय दूसरेसे
परम्	= परम	न = { पहिले नहीं देखा गया
तेजोमयम्	= तेजोमय	दृष्टपूर्वम् = {
आद्यम्	= मवक्ता आदि	

[„]

न वेदयज्ञाध्ययनैर्न दानै-

र्न च क्रियाभिर्न तपोभिरुग्रैः ।

एवरूपः शक्य अहं नृत्योके

द्रष्टुं त्वदन्येन कुरुप्रवीर ॥४८॥

न, वेदयज्ञाध्ययनैः, न, दानैः, न, च, क्रियाभिः, न, तपोभिः,
उग्रैः, एवरूप, शक्य, अहम्, नृलोके, द्रष्टुम्, त्वदन्येन,
कुरुप्रवीर ॥ ४८ ॥

कुरुप्रवीर	= हे अर्जुन	न	= न
नृलोके	= मनुष्यलोकमें	क्रियाभिः	= क्रियाओंसे
एवरूप	= { इस प्रकार विश्वरूपवाला	च	= और
अहम्	= मैं	न	= न
न	= न	उग्रैः	= उग्र
वेद-	= { वेद और यज्ञों-	तपोभिः	= तपोंसे (ही)
यज्ञाध्ययनैः	= { के अध्ययनसे (तथा)	त्वदन्येन	= { तेरे सिवाय दूसरेसे
न	= न	द्रष्टुम्	= देखा जानेको
दानैः	= दानमें (और)	शक्यः	= शक्य हूँ

अर्जुनको धीरज
द्वार अपना
चतुर्भुज रूप
दिखाना ।

मा ते व्यथा मा च विमूढभावो
दृष्ट्वा रूपं घोरमीदृजमेदम् ।

व्यपेतभीः प्रीतमना पुनस्त्व

तदेव मे रूपमिदं प्रपश्य ॥ ४९ ॥

मा, ते, व्यथा, मा, च विमूढभाव दृष्ट्वा, रूपम्, घोरम्,
ईदृक्, मम, इदम्, व्यपेतभी प्रीतमना पुन त्वम्, तत्,
एव, मे, रूपम्, इदम्, प्रपश्य ॥ ४९ ॥

ईदृक्	= इस प्रकारके	घोरम्	= विपत्तिल
मम	= मेरे	रूपम्	= रूपको
इदम्	= इस	दृष्ट्वा	= देखकर

ते	= नेरेको	तत्	= उम
व्यथा	= व्याकुलता	एव	= ही
मा	= न होवे	मे	= मेरे
च	= और	इदम्	= इस
विमूढभावः	= मूढभाव (भी)	रूपम्	{ (गङ्गा चक्र गदा पद्मसहित चतुर्भुज) रूपको
मा	= न होवे (और)		
व्यपेतभीः	= भयरहित		
प्रीतमनाः	= { प्रीतियुक्त मनवाला	पुनः	= फिर
त्वम्	= तू	प्रपश्य	= देख

सजय उवाच

चतुर्भुजरूप
दिवाने के
उपरान्त सौम्य-
रूप होकर
अर्जुनको पुन
प्रेम देता ।

इत्यर्जुनं वासुदेवस्तथोक्त्वा

स्वकं रूपं दर्शयामास भूयः ।

आश्वासयामास च भीतमेनं

भूत्वा पुनः सौम्यवपुर्महात्मा ॥ ५० ॥

इति, अर्जुनम्, वासुदेव, तथा, उक्त्वा, स्वकम्, रूपम्,
दर्शयामास, भूय, आश्वासयामास, च, भीतम्, एनम्,
भूत्वा, पुनः, सौम्यवपुः, महात्मा ॥ ५० ॥

उमके उपरान्त सजय बोला हे राजन—

वासुदेवः	= { वासुदेव भगवान्	भूय	= फिर
अर्जुनम्	= अर्जुनके प्रति	तथा	= वैसे ही
इति	= इस प्रकार	मयम्	= अपने
उक्त्वा	= बतकर	रूपम्	= चतुर्भुजरूपको
		दर्शयामास	= दिखाया

च	= ओर	एनम्	= इस
पुनः	= फिर		
महात्मा	= महात्मा कृष्णने	भीतम्	= { भयभीत हुए अर्जुनको
सौम्यवपुः	= सौम्यमूर्ति	आश्वास-	
भृत्वा	= होकर	यामास }	= वीरज दिया

अर्जुन उवाच

भगवान्के दृष्टेऽहं मानुष रूपं तव सौम्यं जनार्दन ।
मनुष्यरूप को इदानीमस्मि संवृत्तः सचेताः प्रकृतिं गतः ॥५१॥
देखकर अर्जुन-
या शातचित्त दृष्ट्वा, इदम्, मानुषम्, रूपम्, तव, सौम्यम्, जनार्दन,
तोना । इदानीम् अस्मि, संवृत्त, सचेता प्रकृतिम्, गत ॥५१॥

उमने उपरान्त अर्जुन बोला-

जनार्दन	= हे जनार्दन	इदानीम्	= अब (मैं)
तव	= आपके	सचेताः	= शान्तचित्त
इदम्	= इस	संवृत्तः	= हुआ
सौम्यम्	= अनिशान्त	प्रकृतिम्	= { अपने स्वभावको
मानुषम्	= मनुष्य	गतः	= प्राप्त हो गया
रूपम्	= रूपको	अस्मि	= हैं
दृष्ट्वा	= देखकर		

श्रीभगवानुवाच

सुदुर्दर्शमिदं रूपं दृष्टवानसि यन्मम ।
दर्शन व.। देवा अप्यस्य रूपस्य नित्य दर्शनकाङ्क्षिणः ॥५२॥
इहं गता ह.। सुदुर्दर्शम् इदम्, रूपम्, दृष्टवानसि, तव मम,
प्रभावका व.। यथा अपि, अन्य, रूपस्य, नित्यम्, दर्शनकाङ्क्षिण ॥५२॥

इस प्रकार अर्जुनके वचनको सुनकर श्रीकृष्ण भगवान् बोले हे अर्जुन-

मम	= मेरा	(यतः)	= क्योंकि
इदम्	= यह	देवाः	= देवता
रूपम्	= (चतुर्भुज) रूप	अपि	= भी
सुदुर्दर्गम्	= { देखनेको अनि दुर्लभ है (कि)	नित्यम्	= सदा
यत्	= जिसको	अस्य	= इस
	(तुमने)	रूपस्य	= रूपके
दृष्टवानसि	= देखा है	दशन-	= { दर्शन करनेकी
		काङ्क्षिणः	= { इच्छावाले है

["] नाहं वेदैर्न तपसा न दानेन न चेज्यया ।

शक्य एवंविधो द्रष्टुं दृष्टवानसि मां यथा ॥ ५३ ॥

न, अहम्, वेदै, न, तपसा, न, दानेन, न, च, इज्यया,
शक्य, एवंविध, द्रष्टुम्, दृष्टवानसि, माम्, यथा ॥ ५३ ॥

ओर हे अर्जुन-

न	= न	एवंविधः	= { इस प्रकार
वेदै	= वेदोंमें		{ चतुर्भुज
न	= न		{ तपस्याला
तपसा	= तपमें	अहम्	= मैं
न	= न	द्रष्टुम्	= दृष्टा जानेको
दानेन	= दानमें	शक्यः	= शक्य है (कि)
च	= और	यथा	= जैसे
न	= न	माम्	= मेरेको
इज्यया	= इज्ये	(न्यम्)	= तुमने
		दृष्टवानसि	= दृष्टा

अनन्यनक्तिते
भावप्रतिपत्ति
चुन्मना वा
कथन ।

भक्त्या त्वनन्यया शक्य अहमेवंविधोऽर्जुन ।

ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परंतप ॥

भक्त्या, तु, अनन्यया, शक्य, अहम्, एवंविध, अर्जुन,
ज्ञातुम्, द्रष्टुम्, च, तत्त्वेन, प्रवेष्टुम्, च, परतप ॥५४॥

परन्तु-

परंतप = हे श्रेष्ठ तपवाले

तत्त्वेन = तत्त्वसे

अर्जुन = अर्जुन

ज्ञातुम् = जाननेके लिये

अनन्यया = अनन्य

च = तथा

भक्त्या = भक्ति करके

तु = तो

एवंविध = { इस प्रकार
चतुर्थ्युज
रूपवाला

प्रवेश करनेके
लिये अर्थात्
एकीभावसे प्राप्त
होनेके लिये

अहम् = मैं

च = भी

द्रष्टुम् = { प्रत्यक्ष देखनेके
लिये (और)

शक्य = शक्य है

६ न भगवते
११ न
११ न भगवते
११ न
११ न

मत्कर्मकृन्मत्परमो मद्भक्तः सङ्गवर्जितः ।

निर्वैरः सर्वभूतेषु यः न मामेति पाण्डव ॥

मत्कर्मकृत्, मत्परम, मद्भक्त, सङ्गवर्जित,

निर्वैर, सर्वभूतेषु य, न, माम्, एति, पाण्डव ॥५५॥

पाण्डव = हे अर्जुन

यः = जो पुरुष

* ० न भगवते । भव अगले शोकम विस्तारपूर्वक कहा है ।

३० गी० २०—

सत्कर्मकृत्	= { केवल मेरे ही लिये (सब कुछ मेरा समझना हुआ) यज्ञ दान और तप आदि सपूर्ण कर्तव्यकर्मोंको करनेवाला है (और)
मत्परमः	= { मेरे परायण हैं अर्थात् मेरेको परम आश्रय और परम गति मानकर मेरी प्रामिके लिये तत्पर है (तथा)
मद्भक्तः	= { मेरा भक्त है अर्थात् मेरे नाम गुण प्रभाव और रहस्यके श्रवण कीर्तन मनन ध्यान और पठन- पाठनका प्रेमसहित निष्कामभावमे निरन्तर अभ्यास करनेवाला है (और)
सङ्गवर्जितः	= { आमक्तिरहित हैं अर्थात् स्त्री पुत्र और वनादि सपूर्ण सासारिक पदार्थोंमे मोहग्रहित है (और)
मर्वभूतेषु	= सपूर्ण भूतप्राणियोंमे
निर्वैरः	= वैरभावमे रहित हैं* (ऐसा)
मः	= वह (अनन्य भक्तिवाला पुरुष)
माम्	= मेरेको (ही)
गति	= प्राप्त होता है

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मसिद्धान्त-
योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे विश्वरूपवर्णन-
योगो नाम षादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

ॐ श्रीपरमात्मने नमः

अथ द्वादशोऽध्यायः

प्रधान विषय—१ से १० तक साकार और निराकारके उपासकोंकी उत्तमताका निर्णय और भगवन्-प्राप्तिके उपायका विषय । (१३-२०)
भगवन् प्राप्तिवाले पुरुषोंके लक्षण ।

अर्जुन उवाच

माकार और एवं सततयुक्ता ये भक्तास्त्वां पर्युपासते ।

निराकार के ये चाप्यक्षरमव्यक्त तेषां के योगवित्तमाः ॥ १ ॥

श्रेष्ठ हैं यह पदम्, सततयुक्ता, ये, भक्ता, त्वाम्, पर्युपासते,
माननेके लिये ये च अपि अक्षरम्, अव्यक्तम्, तेषाम्, के, योगवित्तमा ॥ १ ॥
माननवा ५२ ।

इस प्रकार भाषान्तरे प्रचनोंको सुनकर अर्जुन बोला हे मनमोहन—

ये	= जो	च	= और
भक्ता	= { अनन्यप्रमी भक्तजन	ये	= जो
एवम्	= { इयं पुरोक्त प्रकारमे	अक्षरम्	= { अविनाशी मच्चिदानन्दघन
सततयुक्ता	= { निरन्तर आप- के भजन ध्यान- में लगे हुए	अपि	= ही (उपासने ह)
त्वाम्	= { आप सगुण- रूप परमेश्वरको	तेषाम्	= { उन दोनों प्रकारके भक्तोंमें
पर्युपासते	= { अति श्रेष्ठभा- ने उपासने हैं	योग- वित्तमाः	= { अति उत्तम योगवेत्ता
		के	= दोनों हैं

श्रीभगवानुवाच

भगवान्केसगुण मय्यावेड्य मनो ये मां नित्ययुक्ता उपासते ।

रूपकी उपासना

करनेवालों को

श्रेष्ठताका कथन

श्रद्धया परयोपेतास्ते मे युक्ततमा मताः ॥ २ ॥

मयि, आवेड्य, मन, ये, माम्, नित्ययुक्ता, उपासते,

श्रद्धया, परया, उपेता, ते, मे, युक्ततमा, मता ॥ २ ॥

इस प्रकार अर्जुनके पूछनेपर श्रीकृष्ण भगवान् बोले हे अर्जुन-

मयि	= मेरेमे	उपेताः	= युक्त हुए
मनः	= मनको	माम्	= { मुझ मगुणरूप
आवेड्य	= एकाग्र करके		= { परमेश्वरको
	{ निरन्तर मेरे	उपासते	= भजते हैं
नित्ययुक्ताः	= { भजन व्यानमे	ते	= ते
	{ लगे हुए*	मे	= मेरेको
ये	= जो भक्तजन	युक्ततमाः	= { योगियोमे भी
परया	= अतिशय श्रेष्ठ		= { अति उत्तम योगी
श्रद्धया	= श्रद्धामे	मताः	= मान्य है-

अर्थात् उनको मे अति श्रेष्ठ मानता हूँ ।

ये त्वक्षग्मनिर्देश्यमव्यक्तं पर्युपासते ।

सर्वत्रगमचिन्त्य च कृत्स्नमचल ब्रुवम ॥ ३ ॥

मनियन्येन्द्रियग्रास सर्वत्र गमबुद्ध्यः ।

ते प्राप्नुवन्ति मामेव सर्वभूतहिते गता ॥ ४ ॥

ये, तु, अक्षरम्, अनिर्देश्यम्, अव्यक्तम्, पर्युपासते,
 सर्वत्रगम्, अचिन्त्यम्, च, कूटस्थम्, अचलम्, ध्रुवम् ॥३॥
 सनियम्य, इन्द्रियग्रामम्, सर्वत्र, समबुद्धय,
 ते प्राप्नुवन्ति, माम्, एव, सर्वभूतहिते, रता ॥४॥

तु	= ओर	अक्षरम्	= { अविनाशी सच्चिदानन्दघन ब्रह्मको
ये	= जो पुरुष		
इन्द्रिय- ग्रामम्	= { इन्द्रियोक्ते ममुदात्तको	पर्युपासते	= { निरन्तर एकी- भावमे ध्यान करते हुए उपासते हैं
सनियम्य	= { अच्छी प्रकार वशमे करके	ते	= वे
अचिन्त्यम्	= मन बुद्धिमे परे	सर्वभूत- हिते रता	= { सम्पूर्ण भूतोंके हितमे रत हुए (ओर)
सर्वत्रगम्	= सर्वव्यापी	सर्वत्र	= सर्वमे
अनिर्देश्यम्	= { अकथनीय स्वरूप	समबुद्धय	= { समानभाववाले योगी (भी)
च	= और	माम्	= मेरेको
कूटस्थम्	= { सदा एकरूप रहनेवाले	एव	= ही
ध्रुवम्	= नित्य	प्राप्नुवन्ति	= प्राप्त होते हैं
अचलम्	= अचल		
अव्यक्तम्	= निगवार		

। तत्त्व
पासता
रि-ता
पन ।

वे शोऽधिवत्तरन्तेपामव्यक्तामक्तचेतनाम ।

अव्यक्ता हि गतिर्दुःख देहवद्भिर्वाप्यते ॥ ५ ॥

क्लेश , अधिकतर , तेषाम् , अव्यक्तासक्तचेतसाम् ,
अव्यक्ता , हि , गति , दुःखम् , देहवद्भिः , अवाप्यते ॥५॥

किन्तु-

तेषाम्	= उन	क्लेशः	= { क्लेश अर्थात् परिश्रम
अव्यक्तासक्त- चेतसाम्	सच्चिदा- नन्दघन	अधिकतरः	= विशेष हैं
	निराकार	हि	= क्योंकि
	ब्रह्ममें	देहवद्भिः	= { देहाभि- मानियोंसे
	आसक्त हुए	अव्यक्ता	= अव्यक्तगुणिक
	चित्तवाले	गति	= गति
	पुरुषोंके	दुःखम्	= दुःखपूर्वक
	(माधनमे)	अवाप्यते	= प्राप्त की जाती हैं-

अर्थात् जवतक शरीरमें अभिमान रहता है तवतक शुद्ध
सच्चिदानन्दघन निराकार ब्रह्ममें स्थिति होनी कठिन है ।

ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि मन्यन्त्यस्य मतपराः ।

अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त उपासते ॥ ६ ॥

माम् = { मुञ्ज सगुणरूप
परमेष्ठ्वरको

एव = ही

अनन्येन = { (तैलधाराके
(सद्गुण) अनन्य

योगेन = ध्यानयोगसे

ध्यायन्तः = { निरन्तर चिन्तन
करते हुए

उपासते = भजते है*

तेषामहं समुद्धर्त्ता मृत्युसंसारसागरात् ।

भवामि नचिगत्पार्थ मय्यावेशितचेतसाम् ॥ ७ ॥

तेषाम्, अहम्, समुद्धर्त्ता, मृत्युसंसारसागरात्,
भवामि. नचिगत्, पार्थ, मयि, आवेशितचेतसाम् ॥७॥

पार्थ = न अर्जुन

नचिरात् = शीघ्र ही

तेषाम् = उन

मृत्युसंसार-
नागरात् = { मृत्युरूप
संसारसमुद्रसे

मयि = मेरेमे

चित्तको

आवेशित

चेतनाम् = { लगानेवाले
प्रमी भक्तोक्ता

समुद्धर्त्ता = { उद्धार
करनेवाला

अहम् = न

भवामि = होता हू

मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धि निवेशय ।

निवमिष्यमि मय्येव अत ऊर्ध्व न मंगायः ॥ ८ ॥

मयि एव. मन, आधत्स्व, मयि, बुद्धिम्, निवेशय,

निवमिष्यमि, मयि एव, अत, ऊर्ध्वम्, न, मंगाय ॥८॥

हमलिये है अर्जुन । तू-

मयि = मेरेमे

मनः = मनको

* ह २५५५, निवेश नाव जाननेके लिए ७ वा अध्याय ११ श्लोक

१५ दत्तना नादिते

आधत्स्य	= लगा (और)	मयि	= मेरेमें
मयि	= मेरेमें	एव	= ही
एव	= ही	निवसिष्यसि	= निवास करेगा अर्थात् मेरेको
बुद्धिम्	= बुद्धिको		ही प्राप्त होगा
निवेशय	= लगा	(अत्र)	= इसमें(कुछ भी)
अतः	= इसके	संशयः	= संशय
ऊर्ध्वम्	= उपरान्त (त)	न	= नहीं है

अथ चित्त समाधातुं न शक्नोषि मयि स्थिरम् ।
मत्वर प्रति ।

अभ्यासयोगेन ततो मामिच्छाप्तुं धनंजय ॥६॥

अथ, चित्तम्, समाधातुम्, न, शक्नोषि, मयि, स्थिरम्,

अभ्यासयोगेन, तत, माम्, इच्छ, आप्तुम्, धनजय ॥६॥

और—

अथ	= यदि (त)	ततः	= तो
चित्तम्	= मनको	धनंजय	= हे अर्जुन
मयि	= मेरेमें	अभ्यास-	(अभ्यासयोग)
स्थिरम्	= अचल	योगेन	(योगके द्वारा)
समाधातुम्	= { स्थापन करनेके लिये	माम्	= मेरेको
न शक्नोषि	= समर्थ नहीं हूँ	आप्तुम्	= प्राप्त होनेके लिये
		इच्छ	= इच्छा कर

मदर्थमपि कर्माणि कुर्वन्ति सद्धिमवाप्स्यसि ॥

और यदि तू—

अभ्यासे = { ऊपर कहे	भव	= हो (इस प्रकार)
= { हुए अभ्यासमे	मदर्थम्	= मेरे अर्थ
अपि = भी	कर्माणि	= कर्मोंको
असमर्थः = असमर्थ	कुर्वन्	= करता हुआ
अग्नि = है	अपि	= भी
(तर्हि) = तो	सिद्धिम्	= { मेरी प्राप्तिरूप
मत्कर्म-	किवल मेरे लिये कर्म	= { मिद्धिको (ही)
परमः =	कतनेकेहीपरायण*	अवाप्स्यसि = प्राप्त होगा

सर्वं व मोक्षे पल
योगते भगवत्
प्राप्ति ।

अथैतदप्यशक्तोऽसि कर्तु मद्योगमाश्रितः ।
सर्वकर्मफलत्यागं ततः कुरु यतात्मवान् ॥११॥

अथैतदप्यशक्तोऽसि कर्तु मद्योगमाश्रितः ।
सर्वकर्मफलत्यागं ततः कुरु यतात्मवान् ॥११॥

भार—

अथ = यदि अपि = भी
एतत् = इसको वर्तुम् = करनेके लिये

[illegible]

अशक्तः = असमर्थ	आश्रितः = शरण हुआ
असि = है	
ततः = तो	सर्वकर्म- = { सत्र कर्मोंके
यतात्म- = { जीते हुए	फलत्यागम् = { फलका मेरे
वान् = { मनवाला (और)	{ लिये त्याग *
सद्योगम् = मेरी प्राप्तिरूप योगके, कुरु	= कर

॥३१॥ श्रेयो हि ज्ञानमभ्यासाज्ज्ञानाद्ध्यानं विशिष्यते ।

ज्ञानमभ्यासः

ध्यानात्कर्मफलत्यागस्त्यागाच्छ्रान्तिरनन्तरम् ॥

श्रेय , हि, ज्ञानम्, अभ्यासात्, ज्ञानात्, ध्यानम्, विशिष्यते,
ध्यानात्, कर्मफलत्याग, त्यागात्, शान्ति, अनन्तरम् ॥१२॥

हि	= क्योंकि	ध्यानात्	= ध्यानमे भी
	(मर्मको न जान- कर किये हुए)	कर्मफल- त्यागः	= { मन कर्मोंके फलका मेरे लिये त्याग करना }
अभ्यामात्	= अभ्यासमे		
ज्ञानम्	= परमज्ञान		
श्रेयः	= श्रेष्ठ है (और)	(विशिष्यते)	= श्रेष्ठ है (और)
ज्ञानात्	= परमज्ञानमे	त्यागात्	त्यागमे
ध्यानम्	{ मुझ परमात्मा के सम्पर्क में ध्यान	अनन्तरम्	= तत्काल ही
विशिष्यते	= श्रेष्ठ है (तथा)	शान्तिः	= { परम शान्ति होती है }

मव भूतोमें द्वे-
भावमे - द्वि
भार मंत्री - द्वि
पुणोने युक्त द्वि
भक्तने नम्रण ।

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च ।

निर्ममो निरहंकारः समदुःखसुखः क्षमी ॥१३॥

अद्वेष्टा, सर्वभूतानाम्, मैत्र, करुण, एव, च,
निर्मम, निरहंकार, समदुःखसुख, क्षमी ॥१३॥

इस प्रकार शान्तिको प्राप्त हुआ जो पुरुष-

सर्वभूतानाम्	= मव भूतोमें	एव	= *
अद्वेष्टा	= { द्वेषभावसे रहित (एव)	निर्ममः	= ममतासे रहित (एव)
मैत्रः	= { स्वार्थरहित सबका प्रेमी	समदुःख- सुखः	= { सुख दुःखोंकी प्राप्तिमें सम (और)
च	= और		
करुणः	= { हेतुरहित दयालु है (तथा)	क्षमी	= { क्षमावान् है अर्थात् अपराध करने- वालेको भी अमय देनेवाला है

[,] संतुष्टः सतत योगी यतात्मा दृढनिश्चयः ।

मय्यर्पितमनोबुद्धिर्यो मद्भक्तः स मे प्रियः ॥१४॥

संतुष्ट सततम् योगी, यतात्मा, दृढनिश्चय,
मयि अर्पितमनोबुद्धि, य, मद्भक्त, स, मे, प्रिय ॥१४॥
तथा-

यः	= जो	संतुष्टः	= { लाभ हानिमें संतुष्ट है (तम)
योगी	= { यानयोगमें युक्त हुआ	यतात्मा	= { मन और इन्द्रियो- रहित योगीको दोगे किये हुए
सततम्	निरन्तर		

* 'एव' शब्द क्षमी में 'क्षमावान्' करने के लिये लगाया गया है ।

दृढनिश्चयः =	{ मेरेमे दृढ निश्चयवाला है	अर्पित- मनोबुद्धिः =	{ अर्पण किये हुए मन बुद्धिवाला
सः =	वह	मद्भक्तः =	मेरा भक्त
मयि =	मेरेमे	मे =	मेरेको
		प्रियः =	प्रिय है

दृढनिश्चयः यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः ।
 से रहित और
 सको अभय हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः स च मे प्रियः ॥१५॥
 उद्वेग है प्रिय यस्मात्, न, उद्विजते, लोक, लोकात्, न, उद्विजते, च, य,
 भक्त है लोको । हर्षामर्षभयोद्वेगैः, मुक्त, य, स, च, मे, प्रिय ॥१५॥

तथा—

यस्मात् -	जिममे	च =	तथा
लोकः -	कोई भी जी	य =	जो
न { उद्वेगको प्राप्त		हर्ष =	हर्ष
उद्विजते { नहीं होता है		अमर्ष =	अमर्ष
च -	और	भय =	भय (आर)
यः	जा (स्वयम भी)	उद्वेगैः	उद्वेगादिकोंसे
लोकात्	हिली नीचे	मुक्त -	रहित है
न { उद्वेग को प्राप्त		स -	तब भक्त
उद्विजते { नहीं होता है		मे	मेरेको
		प्रिय	प्रिय है

अनपेक्ष , शुचि , दक्ष , उदासीन , गतव्यथ ,
सर्वारम्भपरित्यागी , य , मद्भक्त , स , मे , प्रिय ॥१६॥

और—

यः	= जो पुरुष	उदा-	= { पक्षपातसे रहित
अनपेक्षः	= { आकाङ्क्षासे रहित (तथा)	सीनः	= { (और)
शुचिः	= { बाहर भीतरसे शुद्ध* (और)	गतव्यथः	= { दु खोसे छुटा हुआ है
दक्षः	= { चतुर है अर्थात् जिस कामके लिये आया था उसको पूरा कर चुका है (एव)	सः	= वह
		सर्वारम्भ-	= { सर्व आरम्भो-
		परित्यागी	= { का त्यागी†
		मद्भक्तः	= मेरा भक्त
		मे	= मेरेको
		प्रियः	= प्रिय है

पर्ययोकादि यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न काङ्क्षति ।

शुभाशुभपरित्यागी भक्तिमान्यः म मे प्रियः ॥१७॥

य , न , हृष्यति , न , द्वेष्टि , न , शोचति , न , काङ्क्षति ,

शुभाशुभपरित्यागी . भक्तिमान् , य , म , मे , प्रिय ॥१७॥

और—

यः	= जो	न	= न
न	= न (कभी)	द्वेष्टि	= द्वेष करना है
हृष्यति	= हर्षित होता है	न	= न

* गीता ५०.१६ श्लोक ७ का टिप्पणी हमारा विस्तार समझना चाहिये ।

† शुभाशुभ मन , बाणी और शरा हात प्राग्भवे होनेवाले मनुष्य

स्वभावानुसार योंही बनापनसे कश्चित् नका त्याग ।

शोचति = शोच करता है

न = न

काङ्क्षति = { कामना करता है (तथा)

यः = जो

शुभाशुभ-परित्यागी = { शुभ और अशुभ संपूर्ण कर्मों के फल का त्यागी है

स = वह
भक्तिमान् = भक्तियुक्त पुरुष
मे = मेरे को
प्रियः = प्रिय है

समः शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः ।

शीतोष्णमुखदुःखेषु समः सङ्गविवर्जितः ॥ १८ ॥

समः शत्रो, च, मित्रे, च, तथा, मानापमानयो

शीतोष्णमुखदुःखेषु, समः, सङ्गविवर्जितः ॥ १८ ॥

और जो पुरुष—

शत्रो

शत्रु

शीतोष्ण-

{ गर्मी और

मित्रे

मित्रम

गुण-

{ सुखादुःखादि

च

और

दुःखेषु

{ दुःखों में

मानापमानयोः

{ मान

समः

- सम है

{ अपमानम

च

{ और (मानापमानम)

समः

समः

सङ्ग-

{ आशक्ति

तथा

तथा

विवर्जितः

{ रहित है

तथा जो-

तुल्य-	निन्दा स्तुति-	संतुष्टः	= सदा ही संतुष्ट है
निन्दास्तुतिः =	{ को समान ममझनेवाला (और)	अनिकेतः	= { रहनेके स्थानमे ममतासे रहित है
मौनी	= { मननशील है* (एव)	(सः)	= वह
येन	{ जिस किम प्रकारमे भी	स्थिरमतिः	= स्थिर बुद्धिवाला
केनचित्	= { शरीरका निर्वाह होनेमें	भक्तिमान्	= भक्तिमान्
		नरः	= पुरुष
		मे	= मेरेको
		प्रियः	= प्रिय है

एतेनैव पुण्यं वा
सेव्यं वरनेनाते
नैव वा गहिमा

ये तु धर्म्यामृतमिदं यथोक्तं पर्युपासते ।

श्रद्धधाना मत्परमा भक्तास्तेऽतीव मे प्रियाः॥२०॥

५. तु, वर्ण्यमितम् इदम्, यथा उक्तम्, परंप्राग्वते,

श्रद्धागना म'परमा , भक्ता , ते अर्ताव, मे, प्रिय ॥२०॥

तु	= ओर	श्रद्धधाना	= { श्रद्धा युक्तः
ये	= जो		{ पुरुष
मत्परमा	= { मेरे परायण	इदम्	= इन
	= { हृत्	यथा उक्तम्	= उपर कहे हुए

४ अथातः पदवये गोरूपका निरन्तर गन्तव्य वरनेदाला ई ।

१. ललाट मेरेवी परम आभय और परम गति हव स्वदा ७-मस्तक
 और मयमे परे परम पृथ ममपवर विशुद्ध प्रम। मे। प्र तिदे जिने
 मपद १५।

१ ज्ञान-मार्ग महात्मा और पुत्रवर्तके मध्य परस्पर-हृदय के बन्धन
प्रश्न : सत्य पित्रवाच्यता नाम क्या है ।

भर्म्यमृतम्	= { धर्ममय अमृतको	भक्ता मे	= भक्त = भेरेको
पर्युपासते	= { निष्कामभावसे मेवन करते है	अतीव	= अतिगय
ते	= वे	प्रिया	= प्रिय है

ॐ तन्मदिति श्रीमद्भगवद्गीतामूपनिषत्सु ब्रह्मविद्याया
योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे भक्तियोगो नाम
द्वादशोऽध्यायः ॥१२॥

अथ ऋषोदशोऽध्यायः

प्रधान विषय—१ मे १८ तक नामगदित होतहोतहा विषय ।
२ - १४ तक का पद्य पद्य का विषय ।

श्रीभगवानुवाच

ॐ शरीर कान्तेय क्षेत्रमित्यभिधीयते ।

एतयो वेति न प्राहुः क्षेत्रज्ञ इति तद्विदः ॥ १ ॥

११ शरीर, कान्तेय, नाम, इति, अभिधीयो,

१२ एतयो, वेति, न, प्राहुः, क्षेत्रज्ञ, इति, तद्विदः ॥१॥

इति	= ऐसे	क्षेत्रज्ञः	= क्षेत्रज्ञ
अभिधीयते	= कहा जाता है (और)	इति	= ऐसा
एतत्	= इसको	तद्विदः	= { उनके तत्त्वको जाननेवाले ज्ञानीजन
यः	= जो	प्राहुः	= कहते हैं
वेत्ति	= जानता है		
तम्	= उसको		

जीवात्मा और क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषु भारत ।
परमात्मा को क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोर्ज्ञानं यत्तज्ज्ञान मतं मम ॥ २ ॥
एकता का निरूपण ।

क्षेत्रज्ञम्, च, अपि, माम्, विद्धि, सर्वक्षेत्रेषु, भारत,
क्षेत्रक्षेत्रज्ञयो, ज्ञानम्, यत्, तत्, ज्ञानम्, मतम्, मम ॥२॥

च	= और	क्षेत्र-	{ क्षेत्र क्षेत्रज्ञका
भारत	= हे अर्जुन (त)	क्षेत्रज्ञयो	= { अर्थात् विकार- महित प्रयुक्तिका और पुष्पका
सर्वक्षेत्रेषु	= सब क्षेत्रोंमें	यत्	= जो
क्षेत्रज्ञस्य	= { क्षेत्रज्ञ अर्थात् जीवात्मा	ज्ञानम्	= तत्त्वमें जानना है
अपि	= भी	तत्	= वह
माम्	= मेरेको ही	ज्ञानम्	= ज्ञान
विद्धि	= जान	(इति)	= ऐसा
	(और)	मम	= मेरा
		मतम्	= मत है

* गीता अध्याय १३ श्लोक ७ और ८ में तत्त्व, क्षेत्रज्ञ, विकार, प्रयुक्तिका, पुष्पका, ज्ञान, मत, मम, च, इति, आदि शब्दों का अर्थ है ।

† गीता अध्याय १३ श्लोक ८ और ९ में तत्त्व, क्षेत्रज्ञ, विकार, प्रयुक्तिका, पुष्पका, ज्ञान, मत, मम, च, इति, आदि शब्दों का अर्थ है ।

विकारमहित क्षेत्र और प्रभाव-
महित क्षेत्रोंका स्वरूप सुननेके लिये भगवान्की आज्ञा ।

तत्क्षेत्रं यच्च यादृक्च यद्विकारि यतश्च यत् ।
स च यो यत्प्रभावश्च तत्समासेन मे शृणु ॥ ३ ॥

तत्, क्षेत्रम्, यत् च, यादृक्, च, यद्विकारि, यत, च यत्,
स, च, य यत्प्रभाव च तत्, समासेन, मे, शृणु ॥३॥

इसलिये—

तत्	= वह	च	= तथा
क्षेत्रम्	= क्षेत्र	सः	= वह (क्षेत्रज्ञ)
यत	= जो है	च	= भी
च	= और	यः	= जो है (और)
यादृक्	= जैसा है	यत्प्रभावः	= { जिस प्रभाव-
न	= तथा		= { वाला है
यद्विकारि	{ निन निस्तारे- { वाला है	तत्	= वह मत
न	और	समासेन	= ग नेपमे
यः	जिस कारणसे	मे	= मेरेमे
यत्	तत् प्राप्त है	शृणु	= सुन

(गीतम्) = कहा गया है हेतुमद्भिः = युक्तियुक्त
 च = तथा ब्रह्मसूत्रपदैः = { ब्रह्मसूत्रके
 विनिश्चितैः = { अच्छी प्रकार पड़ोंद्वारा
 { निश्चय किये एव = भी
 { हुए (वैसे ही कहा गया है)

ऐक्ये स्वरूपमा
 यदन ।

महाभूतान्यहकारो बुद्धिरव्यक्तमेव च ।

इन्द्रियाणि दशैकं च पञ्च चेन्द्रियगोचराः ॥ ५ ॥

महाभूतानि, अहकार, बुद्धि, अव्यक्तम्, एव, च,
 इन्द्रियाणि, दश, एकम् च, पञ्च, च, इन्द्रियगोचरा ॥ ५ ॥
 और हे अर्जुन ! वही में तेरे लिये कहता हू कि—

महाभूतानि	= { पाच	च	= तथा
	{ महाभूत*	दश	= दस
अहंकारः	= अहंकार	इन्द्रियाणि	= इन्द्रियाँ
बुद्धिः	= बुद्धि	एकम्	= एक मन
च	= और	च	= और
	{ मूल प्रवृत्ति	पञ्च	= पाच
अव्यक्तम्	= { अर्थात्	इन्द्रिय-	{ इन्द्रियोंके
	{ त्रिगुणमयी	गोचराः	{ विषय अर्थात्
	{ माया		{ शब्द रस रीति, रूप,
एव	= भी		{ रस आर गन्ध

ऐक्ये विकारों
 का कथन ।

इच्छा द्वेषः सुख दुःख सघातश्चेतना धृतिः ।

एतत्क्षेत्रं समासेन सविकारमुदाहृतम् ॥ ६ ॥

* अर्थात् आशय, दास, ग, नर और इष्टि का स्वरूप ।

† अर्थात् शरीर, त्वचा, जल, रक्त और प्राण पद हृत्, रस, दास,

पदम और गन्ध ।

च	= और	तानि	= वे
उदासीनवत्	= { उदासीनके मदृश*	कर्माणि	= कर्म
आसीनम्	= स्थित हुए	न	= नहीं
माम्	= मुझ परमात्माको	निवध्नन्ति	= बाधते हैं

भगवान्‌के
सकाशमें प्रकृति-
ज्ञान चराचर
जगत्‌की उपति

मयाध्यक्षेण प्रकृतिः सूयते सचराचरम् ।

हेतुनानेन कौन्तेय जगद्विपरिवर्तते ॥१०॥

मया, अध्यक्षेण प्रकृति, सूयते, सचराचरम्,
हेतुना, अनेन, कौन्तेय, जगत्, विपरिवर्तते ॥१०॥

और—

कौन्तेय	= हे अर्जुन	सूयते	= रचनी हैं (और)
मया	= मुझ	अनेन	= इस
अध्यक्षेण	= { अधिष्ठाताके सकाशसे (यह मेरी)	हेतुना	= हेतुसे (ही)
		जगत्	= यह ससार
प्रकृतिः	= माया		{ आवागमन-
सचराचरम्	= { चराचरसहित सर्व जगत्‌को	विपरिवर्तते	= { रूप चक्रमें ग्रमता है

भगवान्‌का
तिरस्कार करने-
वालोंकी निन्दा।

अवजानन्ति मां मूढा मानुषीं तनुमाश्रितम् ।

परं भावमजानन्तो मम भूतमहेश्वरम् ॥११॥

अवजानन्ति, माम्, मूढा, मानुषीम्, तनुम्, आश्रितम्,

परम्, भावम्, अजानन्त, मम, भूतमहेश्वरम् ॥११॥

* जिसके मपूर्ण कार्य कर्तृत्वभावके बिना अपने आप सत्तामात्रसे ही होते हैं उसका नाम उदासीनके सदृश है ।

ऐसा होनेपर भी—

भूत-	= { सपूर्ण भूतोंके	मानुषीम्	= मनुष्यका
महेश्वरम्	= { महान् ईश्वररूप	तनुम्	= शरीर
मम	= मेरे	आश्रितम्	= { धारण
परम्	= परम		= { करनेवाले
भावम्	= भावको*	माम्	= { मुझ
अजानन्तः	= न जाननेवाले		= { परमात्माको
मूढाः	= मूढ़लोग	अवजानन्ति	= तुच्छ समझते हैं

अर्थात् अपनी योगमायासे मंसारके उद्धारके लिये मनुष्यरूपमे विचरते हुएको साधारण मनुष्य मानते हैं ।

गम्भी और

शाश्वती प्रकृति-
वादीके लक्षण ।

मोघाशा मोघकर्माणो मोघज्ञाना विचेतसः ।

राक्षसीमासुरीं चैव प्रकृतिं मोहिनीं श्रिताः ॥१२॥

मोघाशा , मोघकर्माण , मोघज्ञाना , विचेतस ,

राक्षसीम्, आसुरीम्, च, एव, प्रकृतिम्, मोहिनीम्, श्रिताः ॥१२॥

जो कि—

मोघाशाः	= वृथा आशा	आसुरीम्	= असुरोंके (जैमे)
मोघ-	= { वृथा कर्म	मोहिनीम्	= { मोहित करने-
कर्माण	= { (और)		= { वाले (तामसी)
मोघज्ञानाः	= वृथा ज्ञानवाले	प्रकृतिम्	= स्वभावको†
विचेतसः	= अज्ञानीजन	एव	= ही
राक्षसीम्	= राक्षसोंके	श्रिताः	= { धारण किये
च	= और		= { हुए हैं

* गीता अध्याय ७ श्लोक २४ में दखना चाहिये ।

† जिसको आसुरी मपदाके नामसे विन्दारपूर्वक भावान्तर में

अध्याय १६ श्लोक ४ तथा श्लोक ७ से ११ तक दखा है ।

देवी प्रकृतिवादे
महारमात्रों की
प्रशंसा ।

महात्मानस्तु मां पार्थ दैवी प्रकृतिमाश्रिताः ।

भजन्त्यनन्यमनसो ज्ञात्वा भूतादिमव्ययम् ॥ १३ ॥

महात्मान , तु, माम्, पार्थ, देवीम्, प्रकृतिम्, आश्रिता ,

भजन्ति, अनन्यमनस , ज्ञात्वा, भूतादिम्, अव्ययम् ॥ १३ ॥

तु	= परन्तु	(और)
पार्थ	= हे कुन्तीपुत्र	
दैवीम्	= देवी	अव्ययम् = { नागरहित अक्षरस्वरूप
प्रकृतिम्	= प्रकृतिके *	
आश्रिताः	= आश्रित हुए	ज्ञात्वा = जानकर
महात्मानः	= { जो महात्माजन है (वे तो)	अनन्य- मनसः = { अनन्य मनमे युक्त
माम्	= मेरेको	(सन्तः) = हुए
भूतादिम्	= { सब भूतोंका सनातन कारण	भजन्ति = निरन्तर भजते हैं

उपासनाकी
विधि ।

सततं कीर्तयन्तो मां यतन्तश्च दृढव्रताः ।

नमस्यन्तश्च मां भक्त्या नित्ययुक्ता उपासते ॥ १४ ॥

सततम्, कीर्तयन्त , माम्, यतन्त , च, दृढव्रता ,

नमस्यन्त , च, माम्, भक्त्या, नित्ययुक्ता , उपासते ॥ १४ ॥

और वे—

दृढव्रताः = { दृढ़ निश्चयवाले भक्तजन	कीर्तयन्तः = { मेरे नाम और गुणोंका कीर्तन
सततम् = निरन्तर	करते हुए

* इसका विस्तारपूर्वक वर्णन गीता अध्याय १६ श्लोक १ २-३ में
देखना चाहिये ।

च	= तथा (मेरी प्राप्तिके लिये)	नित्ययुक्ताः	= { मदा मेरे ध्यानमे युक्त हुए
यतन्तः	= यत्न करने हुए		
च	= और	भक्त्या	= अनन्य भक्तिसे
माम्	= मेरेको	माम्	= मुझे
नमस्यन्तः	= { बारम्बार प्रणाम करने हुए	उपासते	= उपासते हैं

उपासनाके ज्ञानयजेन चाप्यन्ये यजन्तो मामुपासते ।

पृथक् पृथक् भेद

एकत्वेन पृथक्त्वेन बहुधा विश्वतोमुखम् ॥१५॥

ज्ञानयजेन, च, अपि, अन्ये यजन्तः, माम्, उपासते,

एकत्वेन, पृथक्त्वेन, बहुधा, विश्वतोमुखम् ॥१५॥

उनमें कोई नां—

माम्	= मुझ	(उपासते) = उपासते हैं (और)
विश्वतो-	= (विगट स्वल्प अन्ये = तमसे	
मुखम्	= परमाभावात्	पृथक्त्वभावे
ज्ञानयजेन	= ज्ञानयत्नके द्वारा	पृथक्त्वेन = अर्थात् स्वार्थ-
यजन्तः	= यत्न करने वाले	प्रेमभावसे
	एक प्रभावसे	च = और (कौन को ?)
पृथक्त्वेन	= अर्थात् जो कार्य	बहुधा = बहुत प्रकारसे
	हम सब प्राप्ति-य	अपि = भी
	हीन प्रभावसे	उपासते = उपासते हैं

एकस्मात् अतः वतुर्गत् यजः स्वधाहमहमौपधम ।

भाषान्तर

स्वरूपका यजन्तः

मन्त्रोऽहमहमवाज्यमहमभिर्गत्

हुतम् ॥१६॥

अहम्, क्रतु अहम्, यज्ञ स्वधा, अहम्, अहम्, औपधम्,
मन्त्र, अहम्, अहम् एव, आज्यम्, अहम्, अग्नि, अहम्, हुतम् ॥

क्याकि—

क्रतुः	= क्रतु अर्थात् श्रोत कर्म	अहम्	= मे ह (एव)
अहम्	= मैं ह	मन्त्रः	= मन्त्र
यज्ञः	= { यज्ञ अर्थात् पञ्चमहा- यज्ञादिक स्मार्तकर्म	अहम्	= मे ह
अहम्	= मैं ह	आज्यम्	= वृत्त
स्वधा	= { स्वया अर्थात् पितरोंके निमित्त दिया जानेवाला अन्न	अहम्	= मैं ह (और)
अहम्	= मैं ह	हुतम्	= हवनरूप क्रिया (भी)
औपधम्	= { ओपधि अर्थात् सब वनस्पतिया	अहम्	= मैं
		एव	= ही ह

पिता मातादि- पिताहमस्य जगतो माता धाता पितामहः ।

रूपसे भगवान् के वेद्यं पवित्रमोकार ऋक्साम यजुरेव च ॥१७॥

स्वरूपका कथन

पिता, अहम्, अम्य, जगत, माता, धाता, पितामह,

वेद्यम्, पवित्रम्, ओंकार, ऋक्, साम, यजु, एव, च ॥१७॥

और हे अर्जुन ! मैं ही—

अस्य	= इस	पिता	= पिता
जगतः	= सपूर्ण जगत्का	माता	= माता (और)
धाता	= { धाता अर्थात् धारण- पोषण करनेवाला एव कर्मोंके फलको देनेवाला (तथा)	पितामहः	= पितामह (हू)
		च	= और
		वेद्यम्	= जाननेयोग्य*
		पवित्रम्	= पवित्र

* गीता अध्याय १३ श्लोक १२ से लेकर १७ तकमें देखना चाहिये ।

ओंकारः=ओंकार (तथा) यजुः = यजुर्वेद (भी)
 ऋक् = ऋग्वेद अहम् = मैं
 साम = सामवेद (और) एव = ही हू

प्रभादमदित
 भगवान्के सर्व-
 व्यापी स्वरूपका
 कथन ।

गतिर्भर्ता प्रभुः साक्षी निवासः शरणं सुहृत् ।

प्रभवः प्रलयः स्थानं निधान वीजमव्ययम् ॥ १८ ॥

गति , भर्ता , प्रभु , साक्षी . निवास , शरणम् , सुहृत् ,
 प्रभव , प्रलय , स्थानम् . निधानम् वीजम् . अव्ययम् ॥ १८ ॥
 और हे अजुन-

गतिः	= प्राप्त होने योग्य (तथा)	{ प्रति उपकार = } न चाहकर
भर्ता	= { भरणपोषण करने- वाला	{ सुहृत् = } हित करने- वाला (और)
प्रभुः	= सबका स्वामी	प्रभवः = उत्पत्ति
साक्षी	= { शुभाशुभका देव- नेवाला	प्रलयः = प्रलयन्त्र (तम)
निवासः	= सबका वासस्थान (और)	स्थानम् = सबका आश्रय
शरणम्	= शरण लेने योग्य (तथा)	निधानम् = निधान* (और)
		अव्ययम् = अविनाशी
		वीजम् = कारण (भी)
		(अहम् एव) = मैं ही हू

[॥] तपाम्यहमह वर्ष निगृह्णाम्युत्तरजामि च ।

अमृत चैव मृत्युश्च सदमद्याहमर्जुन ॥ १९ ॥

तपामि , अहम् , अहम् , वर्षम् , निगृह्णामि उत्तरजामि , च ,
 अमृतम् , च , एव , मृत्युः , च , सत् , अमृत , च , अहम् , अर्जुन ॥

* प्रलयवाहक रूप • त स्वरूपे जिस्में एव होने र वन-
 नाम निधान है ।

और—

अहम्	= मे (ही)	अहम्	= मैं (ही)
तपामि	= { सूर्यरूप हुआ तपता है (तथा) च	अमृतम्	= अमृत = और
वर्षम्	= वर्षाको	मृत्युः	= मृत्यु (एव)
निगृह्णामि	= { आकर्षण करना है	सत्	= सत् च = और
च	= और	अमत्	= अमत् (भी) (सब कुछ)
उत्सृजामि	= वर्षाता है	अहम्	= मैं
च	= और	एव	= ही है
अर्जुन	= हे अर्जुन		

सकाम उपासना-
का फल ।

त्रैविद्या मां सोमपाः पूतपापा
यज्ञैरिष्टा स्वर्गतिं प्रार्थयन्ते ।

ते पुण्यमासाद्य सुरेन्द्रलोक-

मश्नन्ति दिव्यान्दिवि देवभोगान् ॥२०॥

त्रैविद्या , माम् , सोमपा , पूतपापा , यज्ञै , इष्टा , स्वर्गतिम् ,
प्रार्थयन्ते , ते , पुण्यम् , आसाद्य , सुरेन्द्रलोकम् , अश्नन्ति ,
दिव्यान् , दिवि , देवभोगान् ॥२०॥

परन्तु जो—

त्रैविद्याः =	{ तीनों वेदोंमें विधान किये हुए सकाम कर्मोंको करनेवाले (ओर)	सोमपाः = { सोमरसको पीनेवाले (एव)
		पूतपापाः = { पापोंसे पवित्र हुए पुरुष*

* यज्ञ स्वर्गप्राप्तिके प्रतिष्ठक देव-रूप पापसे पवित्र होना
समझना चाहिये ।

माम्	= मेरेको	सुरेन्द्र-	} = इन्द्रलोकको
यज्ञैः	= यज्ञोंके द्वारा	लोकम्	
इष्ट्वा	= पूजकर	आसाद्य	= प्राप्त होकर
स्वर्गतिम्	= स्वर्गकी प्राप्तिको	दिवि	= स्वर्गमें
प्रार्थयन्ते	= चाने	दिव्यान्	= दिव्य
ते	= वे पुण्य	देवभोगान्	= { देवताओंके
पुण्यम्	= { अपने पुण्योंके	अश्नन्ति	= { भोगोंको
	= फलरूप		
			= भोगते हैं

[,]

ते त भुक्त्वा स्वर्गलोकं विजालं
धीणे पुण्य मर्त्यलोक विशन्ति ।
एवं त्रयीधर्ममनुप्रपन्ना

गतागतं कामकामा लभन्ते ॥२१॥

ते, तम, भुक्त्वा स्वर्गलोकम् विजालम्, धीणे, पुण्य,
मर्त्यलोकम् विशन्ति एवम्, त्रयीधर्मम्, अनुप्रपन्ना
गतागतं कामकामा लभन्ते ॥२१॥

और-

ते	- य	विशन्ति	= प्राप्त होते हैं
तम्	= उस	एवम्	= वन प्रकार (स्वर्ग- के वा अस्वर्ग)
विजालम्	= विजाल		
स्वर्गलोकम्	= स्वर्गलोक		
भुक्त्वा	= भुक्त्वा	त्रयीधर्मम्	= { त्रयी धर्मोंके
पुण्ये	= पुण्य		= { लभते हैं
धीणे	= धीणे	अनुप्रपन्ना	= अनुप्रपन्ना
मर्त्यलोकम्	= मर्त्यलोक		

कामकामाः = { भोगेकी
कामनावाले
पुरुष } गतागतम् = { वारम्बार
जाने आनेको
लभन्ते = प्राप्त होते हैं

अर्थात् पुण्यके प्रभावमे स्वर्गमें जाते हैं और पुण्य क्षीण होनेसे मृत्युलोकमें आते हैं ।

निष्काम अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते ।

उपासनाका फल

तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥२२॥

अनन्या , चिन्तयन्त , माम् , ये , जना , पर्युपासते .

तेषाम् , नित्याभियुक्तानाम् , योगक्षेमम् , वहामि , अहम् ॥२२॥

आर-

ये = जो
अनन्याः = { अनन्यभावसे
मेरेमें स्थित हुए } पर्युपासते = { निष्कामभावसे
भजते हैं
तेषाम् = उन
जनाः = भक्तजन
माम् = { मुझ
परमेश्वरको } नित्याभि-
युक्तानाम् = { नित्य एकीभाव-
से मेरेमे स्थिति-
वाले पुरुषोक्ता
चिन्तयन्तः = { निरन्तर
चिन्तन करते } योगक्षेमम् = योगक्षेम*
अहम् = मैं स्वयम्
वहामि = प्राप्त कर देता हू

अन्य देवताओं-
की पूजासे भी
अविधि पूर्वक
भगवत् पूजन
होनेका निरूपण

येऽप्यन्यदेवता भक्ता यजन्ते श्रद्धयान्विताः।

तेऽपि मामेव कौन्तेय यजन्त्यविधिपूर्वकम् ॥२३॥

ये , अपि , अन्यदेवता , भक्ता , यजन्ते , श्रद्धया , अन्विता ,

ते , अपि , माम् , एव , कौन्तेय , यजन्ति , अविधिपूर्वकम् ॥२३॥

* भगवत्के स्वरूपकी प्राप्तिका नाम योग है और भगवत्प्राप्तिके निमित्त किये हुए साधनकी रक्षाका नाम क्षेम है ।

और-

कौन्तेय	= हे अर्जुन	अपि	= भी
अपि	= यद्यपि	माम्	= मेरेको
श्रद्धया	= श्रद्धाये	एव	= ही
अन्विताः	= युक्त हुए	यजन्ति	= पूजते है
ये	= जो		
भक्ताः	= सकामी भक्त		(किन्तु उनका
अन्यदेवता	= { दम्भे देवताओंको		वह पूजना)
यजन्ते	= पूजते हैं	अविधि-	{ अविधिपूर्वक है
ते	= वे	पूर्वकम्	{ अर्थात् अज्ञान- पूर्वक है

भगवान्बो नन्द-
से न जाने-
बालीवा पत्न । अह हि सर्वयजानां भोक्ता च प्रभुरेव च ।
न तु मामभिजानन्ति तत्त्वेनातश्च्यवन्ति ते ॥

अहम्, हि, सर्वयजानाम्, भोक्ता, च प्रभु एव, च
न, तु, माम्, अभिजानन्ति, तत्त्वेन, अत, च्यवन्ति, ते ॥२४॥

हि	= क्योंकि	माम्	= { मुझ अधिपति-
सर्वयज्ञानाम्	= सम्पूर्ण यज्ञोंवा		{ स्वस्व परमेश्वर को
भोक्ता	= भोक्ता	तत्त्वेन	= तत्त्वमे
च	= और	न	= नहीं
प्रश्न.	= स्वामी	अभि-	} जानते हैं
च	= गी	जानन्ति	
आम्	= मैं	अत.	= इसीसे
एव	= ही (ह)		गिज्ञे हैं अर्थात्
तु	= पर तु	च्यवन्ति	= { पुनर्जन्मको
ते	= व		{ प्राप्त होते हैं

उपासनाके अनु-
सार फलप्राप्ति-
का कथन ।

यान्ति देवव्रता देवान् पितृन्यान्ति पितृव्रताः ।

भूतानि यान्ति भूतेज्या यान्ति मद्याजिनोऽपि माम्

यान्ति, देवव्रता, देवान्, पितृन्, यान्ति, पितृव्रता,

भूतानि, यान्ति, भूतेज्या, यान्ति, मद्याजिन, अपि, माम् ॥२५॥

कारण यह नियम है कि—

देवव्रताः	= { देवताओंको पूजनेवाले	भूतेज्याः	= { भूतोंको पूजने- वाले
देवान्	= देवताओंको	भूतानि	= भूतोंको
यान्ति	= प्राप्त होते हैं	यान्ति	= प्राप्त होते हैं (और)
पितृव्रताः	= { पितरोंको पूजनेवाले	मद्याजिन	= मेरे भक्त
पितृन्	= पितरोंको	माम्	= मेरेको
यान्ति	= प्राप्त होते हैं	अपि	= ही
		यान्ति	= प्राप्त होते हैं—

इसीलिये मेरे भक्तोंका पुनर्जन्म नहीं होता* ।

भक्तिपूर्वक पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति ।

अर्पण किये हुए
पत्र-पुष्पादि को

तदहं भक्त्युपहतमश्नामि प्रयतात्मनः ॥२६॥

खानेके लिये पत्रम्, पुष्पम्, फलम्, तोयम्, य, मे, भक्त्या, प्रयच्छति,
भगवान् की तत्, अहम्, भक्त्युपहतम्, अश्नामि, प्रयतात्मन ॥२६॥
प्रतिष्ठा ।

तथा हे अर्जुन ! मेरे पूजनमें यह सुगमता भी है कि—

पत्रम्	= पत्र	तोयम्	= जल (इत्यादि)
पुष्पम्	= पुष्प	य	= जो (कोई भक्त)
फलम्	= फल	मे	= मेरे लिये

* गीता अध्याय ८ श्लोक १६ में दखना चाहिये ।

भक्त्या	= प्रेमसे	तत्	= वह
प्रयच्छति	= अर्पण करता है		(पत्र पुष्पादिक)
प्रयतात्मनः	= { उत्स शुद्ध बुद्धि निष्काम	अहम्	= मैं
	{ प्रेमी भक्तका		(सगुणरूपसे
भक्त्युप-	{ प्रेमपूर्वक अर्पण		प्रकट होकर
हृतम्	= { किया हुआ	अश्नामि	= खाता हूँ

सर्वं भगवान् यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत् ।

ये, अपेण कान्ते- यत्तपस्यसि कान्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम् ॥२७॥

यत्, करोषि. यत्, अश्नामि. यत्, जुहोषि, ददामि, यत्,
यत्, तपस्यसि, कान्तेय. तत्, कुरुष्व. मदर्पणम् ॥२७॥

हृत्पत्त्रि-

कान्तेय	= इ अर्जुन (त)	ददामि	= दान देता हूँ
यत्	= जा (कुरु)	यत्	= जो (कुरु)
करोषि	= कर्म करता है		
यत्	= जा (कुरु)	तपस्यसि	= { तपश्चर्मचरणरूप तप करता है
अश्नामि	= खाता हूँ		
यत्	= जा (कुरु)	तत्	= वह (तप)
जुहोषि	= हवन करता है	मदर्पणम्	= मेरे अर्पण
यत्	= जो (कुरु)	कुरुष्व	= कर

१००० गी. १००० शुभाशुभफलंतेव मोक्षयमे वर्मबन्धनैः ।

१००० गी. १००० मन्यामयोगयुत्तमत्सा विमुक्तो मानुषेप्यनि ॥२८॥

१००० गी. १०००

गोपते, वर्मबन्धनैः

१००० गी. १००० वि. त. ग. १००० ॥२८॥

एवम्	= इस प्रकार	कर्मबन्धनैः	= कर्मबन्धनसे
संन्यासयोग-	{ कर्मोंको मेरे अर्पण करने-	मोक्ष्यसे	= { मुक्त हो जायगा
युक्तात्मा	= { रूप संन्यास- योगसे युक्त		(और उनसे)
	{ हुए मन-	विमुक्तः	= मुक्त हुआ
	{ वाला (त्)	माम्	= मेरेको (ही)
शुभाशुभ-	= { शुभाशुभ	उपैष्यसि	= प्राप्त होवेगा
फलैः	= { फलरूप		

भगवान्के समोऽहं सर्वभूतेषु न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः ।

समत्वभाव का ये भजन्ति तु मां भक्त्या मयि ते तेषु चाप्यहम् ॥
कथन और

भजनेवालों की सम , अहम् , सर्वभूतेषु , न , मे , द्वेष्य , अस्ति , न , प्रिय ,
महिमा । ये , भजन्ति , तु , माम् , भक्त्या , मयि , ते , तेषु , च , अपि , अहम् ॥ २९ ॥

यद्यपि—

अहम्	= मैं	प्रियः	= प्रिय है
सर्वभूतेषु	= सब भूतोंमें	तु	= परन्तु
समः	= { समभावसे व्यापक हू	ये	= जो (भक्त)
न	= न (कोई)	माम्	= मेरेको
मे	= मेरा	भक्त्या	= प्रेमसे
द्वेष्यः	= अप्रिय	भजन्ति	= भजते हैं
अस्ति	= है (और)	ते	= वे
न	= न	मयि	= मेरेमे
		च	= और

अहम् = मैं
अपि = भी

तेषु = उनमें
(प्रत्यक्ष प्रकट हू*)

निरन्तर भगवद्-अपि चेत्सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक् ।
भजनसे मदा-साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग्व्यवसितो हि सः ॥ ३० ॥
पापीका भी
द्वार होनेका
कदन ।
अपि, चेत्, सुदुराचार, भजते, माम्, अनन्यभाक्,
साधु, एव, स, मन्तव्य, सम्यक्, व्यवसित, हि, स ॥ ३० ॥

नथा और भी मेरी भक्तिका प्रभाव सुन-

चेत्	= यदि (कोई)	स.	= वह
सुदुराचार	= { अनिष्टय दुराचारी	साधुः	= साधु
अपि	= भी	एव	= ही
अनन्य-	= { अनन्यभावसे	मन्तव्यः	= मानने योग्य है
भाक्	= { मेरा भक्त हुआ	हि	= क्योंकि
माम्	= मेरेको (निरन्तर)	स.	= वह
भजते	= भजता है	सम्यक्	= यथार्थ निश्चय-
		व्यवसितः	= { वाला है

अर्थात् उमने भली प्रकार निश्चय कर लिया है कि परमेश्वरके भजनके समान अन्य कुछ भी नहीं है ।

[क्षिप्र भवति धर्मात्मा शश्वच्छान्तिं निगच्छति ।
वागन्तेय प्रति जानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति ॥
क्षिप्रम्, भवति धर्मात्मा, शश्वत्, शान्तिम् निगच्छति,
वागन्तेय प्रति, जानीहि, न, मे, भक्त, प्रणश्यति ॥ ३१ ॥

* जहाँ धर्मरूपसे सब जगह स्थापक हुआ भी ० निःसन्देहद्वारा प्रकट कर गये हैं। प्रत्यक्ष होनेवाले हैं। न मेरे भक्त हैं। सब जगह स्थित हुआ मैं परमेश्वर शान्तिसे भजनवाले हैं। वह तत्करण प्रत्यक्षरूपसे प्रकट होता है ।

इत्यल्लिये वह-

क्षिप्रम्	=शीघ्र ही	प्रति	= { निश्चयपूर्वक
धर्मात्मा	= धर्मात्मा		= { सत्य
भवति	= हो जाना है (और)	जानीहि	= जान (कि)
शश्वत्	= सदा रहनेवाली	मे	= मेरा
शान्तिम्	= परमशान्तिको	भक्तः	= भक्त
निगच्छति	= प्राप्त होता है	न	} = नष्ट नहीं होता
कौन्तेय	= हे अर्जुन (त)	प्रणश्यति	

भगवान्के शरण मां हि पार्थ व्यपाश्रित्य येऽपि स्युः पापयोनयः ।

होनेसे स्त्री, स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्रास्तेऽपि यान्ति परां गतिम्
वैश्य, शूद्र और माम्, हि, पार्थ, व्यपाश्रित्य, ये, अपि, स्यु, पापयोनय,
नीच योनिवालों- स्त्रिय, वैश्या, तथा, शूद्रा, ते, अपि, यान्ति, पराम् गतिम्॥३२॥
का भी कल्याण ।

हि	= क्योंकि	स्युः	= होवें
पार्थ	= हे अर्जुन	ते	= वे
स्त्रियः	= स्त्री	अपि	= भी
वैश्या	= वैश्य (और)	माम्	= मेरे
शूद्रा	= शूद्रादिक	व्यपाश्रित्य	= शरण होकर
तथा	= तथा		(तो)
पापयोनयः	= पापयोनिवाले	पराम्	= परम
अपि	= भी	गतिम्	= गतिको (ही)
ये	= जो कोई	यान्ति	= प्राप्त होते हैं

ब्राह्मण और राज किं पुनर्ब्राह्मणाः पुण्या भक्ता राजर्षयस्तथा ।

ऋषि भक्तोंकी, अनित्यमसुखं लोकमिम प्राप्य भजस्व माम् ॥

प्रशस्ता और किम्, पुन, ब्राह्मणा, पुण्या, भक्ता, राजर्षय, तथा,
भगवत्-भजनके अनित्यम्, असुखम्, लोकम्, इमम्, प्राप्य, भजस्व, माम्॥३३॥
लिये आज्ञा ।

पुनः	= फिर	(यान्ति) = प्राप्त होने हैं
किम्	= क्या	(अतः) = इसलिये (तू)
(वक्तव्यम्)	= कहना है (कि)	असुखम् = सुखरहित (और)
पुण्याः	= पुण्यशील	अनित्यम् = क्षणभंगुर
ब्राह्मणाः	= ब्राह्मणजन	इमम् = इस
तथा	= तथा	लोकम् = मनुष्यशरीरको
राजर्षयः	= राजर्षि	प्राप्य = प्राप्त होकर
भक्ता	= भक्तजन	माम् = { (निरन्तर) मेरा
	(परमगतिको)	भजस्व = { ही भजन कर

अर्थात् मनुष्यशरीर बड़ा दुर्लभ है, परन्तु है नाशवान्
आर सुखरहित इसलिये कालका भरोसा न करके तथा अज्ञान-
में सुखरूप भगवन्वाले विषयभोगोंमें न फसकर निरन्तर मेरा
ही भजन कर ।

भगवान्वा। मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु ।

वचनयोः मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः ॥३४॥

मन्मना , भव , मद्भक्त , मद्याजी , माम् नमस्कुरु ,
माम् , एव , एष्यसि , युक्त्वा , एवम् , आत्मानम् , मत्परायण ॥३४॥

मन्मनाः = { केवल मुझ मन्त्रिदानन्दधन वासुदेव परमात्मासे
ही अनन्यप्रेमसे निरन्तर अचल मनवाला
भव = हो (और)

मद्भक्तः = { मुझ परमेश्वरको ही श्रद्धाप्रेममनहित निष्कामभावसे
(भव) = नाम गुण और प्रभावके प्रयण कीर्तन मनन और
पठनपाठनद्वारा निरन्तर भजनेवाला हो (तथा)

मद्याजी (भव)	= { मेरा (गङ्गा चक्र गदा पद्म आर किरीट कुण्डल आदि भूषणोंसे युक्त पीताम्बर वनमाला और कौस्तुभ-मणिधारी विष्णुका) मन वाणी और शरीरके द्वारा सर्वस्व अर्पण करके अनिग्रह श्रद्धा भक्ति और प्रेम-मे विह्वलता पूर्वक पूजन करनेवाला हो (और)
माम्	= { मुझ सर्वशक्तिमान् विभूति बल ऐश्वर्य माधुर्य गभीरता उदारता वात्मन्य और सुहृदता आदि गुणोंसे सपन्न भगवत्के आश्रयरूप वासुदेवको
नमस्कुरु	= { विनयभावपूर्वक भक्तिसहित साष्टाङ्ग दण्डवत् प्रणाम कर
एवम्	= इस प्रकार
मत्परायणः	= मेरे शरण हुआ (त)
आत्मानम्	= आत्माको
युक्त्वा	= मेरेमें एकीभाव करके
माम्	= मेरेको
एव	= ही
एष्यसि	= प्राप्त होवेगा

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्याया योगशास्त्रे

श्रीकृष्णार्जुनसंवादे राजविद्याराजगुह्ययोगो नाम

नवमोऽध्याय ॥ ९ ॥

हरि ॐ तत्सत् हरि ॐ तत्सत् हरि ॐ तत्सत्

ॐ श्रीपरमात्मने नमः

अथ दशमोऽध्यायः

प्रधान विषय—? = ७ तक भगवान्‌की विभूति और योगशक्तिका
 ध्यान तथा उनके माननेका फल । (८—११) फल और प्रभावमहित
 भक्तश्रेण्या का जन । (१२—१८) अर्जुनद्वारा भगवान्‌की स्तुति एवं
 विभूति और योगशक्ति का धनके लिये प्रार्थना । (१९—४०)
 दशमोऽध्याय अपना विस्तृतश्लोक और योगशक्तिका ध्यान ।

श्रीभगवानुवाच

भूय एव महाबाहो शृणु मे परमं वचः ।

यत्तेऽहं प्रीयमाणाय वक्ष्यामि हितकाम्यया ॥१॥

भूय, एव महाबाहो, शृणु, मे, परमम्, वचः,

यत्, ते, अहम्, प्रीयमाणाय, वक्ष्यामि, हितकाम्यया ॥१॥

भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रजी बाले—

महाबाहो = महाबाहो

यत् = जो (कि)

भूयः = फिर

अहम् = मैं

एव = भी

ते = तुम्हें

मे = मेरे

अभिप्रेत

परमम् = परम

प्रीयमाणाय = प्रिये

(कृष्ण)

(विदेह)

(कृष्ण)

हितकाम्यया = (हित)

वचः = वचन

(वचन)

शृणु = श्रवण

वक्ष्यामि = बतलाऊँ

सतका यदि न मे विदुः सुरगणाः प्रभव न महर्षयः ।
 छेनेमे मेरी अहमादिहि देवाना महर्षीणां च सर्वशः ॥२॥
 उत्पत्ति जो देवादि भी नहीं न, मे, विदुः, सुरगणा, प्रभवम्, न, महर्षय, जानते म अहम्, आदि, हि, देवानाम्, महर्षाणाम्, च सर्वशः ॥२॥
 विषयम भगवाउ- हे अर्जुन-

या कथन । मे	= मेरी	महर्षयः	= महर्षिजन (ही)
प्रभवम्	= उत्पत्तिको अर्थात् विभूति- सहित लीलासे प्रकट होनेको	विदुः	= जानते हैं
न	= न	हि	= क्योंकि
सुरगणा	= देवतालोक	अहम्	= मैं
(विदुः)	= जानते हैं (और ,	सर्वशः	= सब प्रकारसे
न	= न	देवानाम्	= देवताओंका
		च	= और
		महर्षीणाम्	= महर्षियोंका (भी)
		आदि	= आदि कारण ह

प्रभावसहित यो मामजमनादिं च वेत्ति लोकमहेश्वरम् ।
 परमेश्वर को असंमूढः स मर्त्येषु सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥३॥
 जाननेका फल । य, माम्, अजम्, अनादिम्, च, वेत्ति, लोकमहेश्वरम्,
 असंमूढ, स, मर्त्येषु, सर्वपापैः, प्रमुच्यते ॥ ३ ॥

और-

यः	= जो	अनादिम्	= अनादि*
माम्	= मेरेको	च	= तथा
अजम्	= अजन्मा अर्थात् वास्तवमें जन्म- रहित (और)	लोक-	= { लोकोका महान् महेश्वर
		महेश्वरम्	

* अनादि उसको कहते हैं कि जो आदिरहित होवे और सबका कारण होवे ।

वेत्ति = तत्त्वमे जानता है

नः = वह

मर्त्येषु = मनुष्योंमें

असंमृढः = ज्ञानवान् (पुरुष)

सर्वपापैः = सपूर्ण पापोंसे

प्रमुच्यते = मुक्त हो जाता है

बुद्धिर्ज्ञानमसमोहः क्षमा सत्य दमः जमः ।

मुखं दुःख भवोऽभावो भय चाभयमेव च ॥४॥

बुद्धिः, ज्ञानम्, अममोहः, क्षमा, नृत्यम्, दमः, जमः,

मुखम्, दुःखम्, भयः, अभावः, भयम्, च, अभयम्, एव, च ॥४॥

आर ह अर्जुन-

बुद्धिः = (निश्चय करनेकी शक्ति (एव)

(तथा)

ज्ञानम् = नृत्यज्ञान (आर)

मुखम् = मुख

अममोहः = अममता

दुःखम् = दुःख

क्षमा = क्षमा

भवः = उत्पत्ति

नृत्यम् = नृत्य (तथा)

च = आर

दमः = (निश्चयोक्ता

अभावः = प्रत्यय (एव)

= (जम वर्तना

भयम् = भय

जमः = मनसा निरत

च = आर

अभयम् = अभय

एव = भी

अहिंसा ममता तुष्टिर्गन्तव्यो दान यज्ञोऽयजः ।

ममन्ति भावा भूताना मत्त एव पृथग्विधाः ॥५॥

अहिंसा, ममता, तुष्टिः, गन्तव्यः, दानः, यज्ञः, अयजः,

ममन्ति, भावाः, भूतानाः, मत्तः, एव, पृथग्विधाः ॥५॥

अहिंसा - अहिंसा

ममता = ममता

आर्जवम्	= { (तथा) मन वाणीकी सरलता	शौचम्	= { बाहर भीतर- की शुद्धि*
		स्थैर्यम्	= { अन्तःकरण- की स्थिरता
आचार्यो- पासनम्	= { श्रद्धा भक्ति- सहित गुरुकी मेवा	आत्म- विनिग्रहः	= { मन और इन्द्रि- योगमहित शरीरका निग्रह

इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनहंकार एव च ।

जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम् ॥ ८ ॥

इन्द्रियार्थेषु, वैराग्यम्, अनहंकार, एव, च,
जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम् ॥ ८ ॥

तथा-

इन्द्रियार्थेषु	= { इस लोक और परलोकके संपूर्ण भोगोंमें	जन्म	= जन्म
		मृत्यु	= मृत्यु
वैराग्यम्	= { आभक्तिका अभाव	जरा	= जरा (आर)
		व्याधि	= रोग आदिमें
च	= आर	दुःख	= दुःख
		दोष	= दोषोंका
अनहंकारः	= { आत्मकारका भी अभाव	अनु-	= । तत्त्वज्ञान
		दर्शनम्	= । निवारकान्

* आत्मतापूर्वक शुरुआत परमेश्वर के साथ सम्बन्धित करने के लिए
तथा आत्मता के लिए । आत्मता के लिए । आत्मता के लिए ।
इन्द्रियों का दर्शन । इन्द्रियों का दर्शन । इन्द्रियों का दर्शन ।
तथा आत्मता के लिए । आत्मता के लिए । आत्मता के लिए ।

असक्तिर्न भिष्वङ्गः पुत्रदाग्गृहादिषु ।
 नित्यं च ममचित्तत्वमिष्टानिष्टोपपत्तिषु ॥ ६ ॥
 अस्मिन् अनभिष्वङ्गः पुत्रदाग्गृहादिषु
 नित्यं च ममचित्तत्वमिष्टानिष्टोपपत्तिषु ॥ ९ ॥

तथा—

पुत्रदाग्- गृहादिषु	=	{ पुत्र जी पर न	- त ग
		{ औ- र्नामि मे इष्टानिष्टोप-	{ पितृ अपिप
		{ या- क्तिता पत्तिषु	- { की प्राप्तिमे
असक्ति		{ अभा- त ओर नित्यम्	- मत्ता ही
		{ मत्ताता न	{ निवृत्ता
ममचित्तत्वः		{ मत्ता	{ मम मत्ता-

विविक्त-	{ एकान्त और		{ विप्रयासक्त
देश-	= { शुद्धदेशमें	जनसंसदि =	{ मनुष्योके
सेवित्वम्	{ रहनेका स्वभाव		{ समुदायमे
	(और)	अरतिः =	{ प्रेमका न होना

ज्ञानके साधनोंमें
निदिध्यासनका
कथन और ज्ञान-
के साधनों में
विपरीत गुणोंको
बखाना इत्यादि ।

अध्यात्मज्ञाननित्यत्वं तत्त्वज्ञानार्थदर्शनम् ।

एतज्ज्ञानमिति प्रोक्तमज्ञानं यदतोऽन्यथा ॥ ११ ॥

अध्यात्मज्ञाननित्यत्वम्, तत्त्वज्ञानार्थदर्शनम्,
एतत्, ज्ञानम् इति, प्रोक्तम्, अज्ञानम् यत् अतः अन्यथा ११

नथा—

अध्यात्म-	{ अध्यात्म-	ज्ञानम् =	ज्ञान है† (और)
ज्ञान-	= { ज्ञानमे* नित्य	यत् =	जो
नित्यत्वम्	{ स्थिति (और)	अतः =	इसमें
तत्त्व-	{ तत्त्वज्ञानके	अन्यथा =	विपरीत है
ज्ञानार्थ-	= { अर्थरूप	(तत्) =	वह
दर्शनम्	{ परमात्माको	अज्ञानम् =	अज्ञान है†
	{ सर्वत्र देखना	इति =	एसे
एतत् =	यह सब (तो)	प्रोक्तम् =	कहा है

* जिस ज्ञानको द्वारा आत्मवस्तु का ज्ञान प्राप्त होता है ।

ज्ञानका नाम अध्यात्मज्ञान है ।

† इस अध्यायके ११ व ७ वे श्लोकों में ज्ञान के अज्ञान के अंतर का उल्लेख है ।

कहा जाता है कि ज्ञान ही है जो ज्ञान को ज्ञान बना देता है ।

‡ उपर बतलाने वाले ज्ञान के अज्ञान के अंतर का उल्लेख है ।

गीता १३ अध्यायके ११ व ७ वे श्लोकों में ज्ञान के अज्ञान के अंतर का उल्लेख है ।

जानने के जे
प्रमाण के
सकल ज्ञान
अज्ञान के
अनादिमत्पं
अनादिमत् परम वस्तु न मत् नत्, न अमत् उच्यते ॥१२॥
अगर हे भगव-

यत्	= जो	तत्	= वह
ज्ञेयम्	= जानने के योग्य	अनादिमत्	= आदिमत्
(न)	= न	परम्	= परम
यत्	= जिसको	ब्रह्म	= ब्रह्म
ज्ञात्वा	= जानकर		(अज्ञानीय होनेसे)
	(मत्)	न	= न
अमत्	परमानन्दको	मत्	= मत्
अमृतम्	प्राप्त होता है		(रुखा जाता है और)
न	प्राप्तो	न	= न
अमृतम्	(अमृत पदार्थ)	अमृत	अमृत ही

सर्वतः- (सब ओरसे)

$$\text{श्रुतिमत} = \left\{ \begin{array}{l} \text{श्रोत्रवाला} \end{array} \right.$$

(अग्नि) = है

(यतः) = क्योंकि (वह)

लोके = ससारमें

सर्वम् = सबको

आवृत्य = व्याप्त करके

तिष्ठति = स्थित है*

परमेश्वरके

सर्वेन्द्रियगुणाभास सर्वेन्द्रियविवर्जितम् ।

सगुण श्री-

निर्गुण स्वरूपकी

एकनाथा कथन ।

असक्त सर्वभूच्चैव निर्गुण गुणभोक्तृ च ॥१४॥

सर्वेन्द्रियगुणा भानम्, सर्वेन्द्रियविवर्जितम्,

असक्तम्, सर्वभृत्, च, एव, निर्गुणम्, गुणभोक्तृ, च ॥१४॥

और—

सर्वेन्द्रिया-सिद्धिर्ब्रह्मसिद्धिः

सर्वान्द्रिय- = के विषयोंको

गुणाभासम् । जाननेवाला हूँ
(परन्तु वास्तवमे)

निर्गुणम् = गुणोसे अतीत
(हुआ)

एव = { मी (अपनी
योगमायासे)

सर्वेन्द्रिय- (सर्व इन्द्रियोसे)

विवर्जितम् = { रहित है

च = तथा

अगत्ताम् = आगतिरहित

(और)

सर्वभृत् = { मन्त्रको धारण
पोषण करनेवाला

च = और

गुणभोक्ता = { गुणोक्तो
भोगनेवाला है

मर्दात्मरूपये

बहिर्गन्तश्च भूतानामचर चरमेव च ।

परमात्मा च।

५२।एवमेव।

• 373 •

सकृन्मत्वात्तद्विज्ञेयं दृग्स्थं चान्तिवेद्यं च तत् ॥१५॥

वर्ति अन्त, च, भूतानाम्, अचरम्, चरम्, एव, च

मृगं यात, ततः अप्रियं, दृग्मया च अन्तिरे, च, तत् ॥

* मीमांसा विषयक विवरण, पृष्ठ २७ वर दिसते आहे.

६। : जोर में ज़रूर कि यह पत्र लिखनेवाला न था वह - कुरु

१०१ पु. ५०१ र-ग-व. ०. ॥ १, ५ ॥ १-१॥

स्थितम्	= { स्थित* (प्रतीत होना है तथा)	च	= और
तत्	= वह	ग्रसिष्णु	= { रुद्ररूपसे सहार करनेवाला
ज्ञेयम्	= { जानने योग्य परमात्मा	च	= तथा
भृतभर्तृ	= { विष्णुरूपसे भृतोंको धारण पोषण करने- वाला	प्रभविष्णु	= { ब्रह्मारूपसे मनुष्यका उत्पन्न करनेवाला है

ज्ञानद्वारा प्राप्त ज्योतिषामपि तज्ज्योतिस्तमसः परमुच्यते ।
 देने योग्य ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानगम्यं हृदि सर्वस्य विष्ठितम् ॥
 प्रकाश भव ज्योतिषाम्, अपि, तत्, ज्योति, तमस, परम्, उच्यते,
 प्रपञ्चका कथन। ज्ञानम्, ज्ञेयम्, ज्ञानगम्यम्, हृदि सर्वस्य, विष्ठितम् ॥१७॥

और-

तत्	= वह वस्तु	(तथा वह	
ज्योतिषाम्	= ज्योतियोंका	परमात्मा)	
अपि	= भी	ज्ञानम्	= योग्यगम्य(और)
ज्योतिः	= ज्योतिः (एव)	ज्ञेयम्	= { जाननेके योग्य (एव)
तमसः	= मायासे	ज्ञानगम्यम्	= { तत्त्वज्ञानसे प्राप्त होनेवाला
परम्	= अति परे		
उच्यते	= बताया जाता है		

* ये महावाग्विभागवति स्थित हुए हैं कि वे, पक्ष दृष्टान्ते
 पर प्रकाश तत्त्व हैं कि वे ही परमात्मा सब भूतों पर स्वस्वसे प्रकाश हुए,
 जो पक्ष परस्पर प्रकाश प्रकाश होता है ।

१ भाषा स्वप्न १५ श्लो, १२, दृष्टान्त चित्रे ।

(और) हृदि = हृदयमें
 सर्वस्य = सबके विष्टितम् = स्थित है
 क्षेत्र, ज्ञान और इति क्षेत्रं तथा ज्ञानं ज्ञेयं चोक्तं समासतः ।
 क्षेत्रका तत्त्व मद्भक्त एतद्विज्ञाय मद्भावायोपपद्यते ॥१८॥
 जानने से
 भगवत् प्राप्ति इति, क्षेत्रम्, तथा, ज्ञानम्, ज्ञेयम्, च उक्तम्, समासतः,
 होनेका कथन । मद्भक्त, एतत्, विज्ञाय, मद्भावाय, उपपद्यते ॥१८॥
 हे अर्जुन-

इति	= इस प्रकार	ममासतः	= सक्षेपसे
क्षेत्रम्	= क्षेत्र*	उक्तम्	= कहा गया
तथा	= तथा	एतत्	= इसको
ज्ञानम्	= ज्ञान†	विज्ञाय	= तत्त्वसे जानकर
च	= और	मद्भक्तः	= मेरा भक्त
ज्ञेयम्	= { जानने योग्य परमात्माका स्वरूप‡	मद्भावाय	= मेरे स्वरूपको
		उपपद्यते	= प्राप्त होता है

प्रकृति पुरुषकी प्रकृतिं पुरुषं चैव विद्वन्नादी उभावपि ।
 अनादिता तथा विकारांश्च गुणांश्चैव विद्धि प्रकृतिसंभवान् ॥१९॥
 प्रकृतिसे विकार प्रकृतिम्, पुरुषम्, च, एव, विद्धि, अनादी, उभौ, अपि,
 और गुणोंकी विकारान्, च, गुणान्, च, एव, विद्धि, प्रकृतिमभवान् ॥१९॥
 उत्पत्तिका कथन

और हे अर्जुन-

प्रकृतिम् = { प्रकृति अर्थात् त्रि- च = और
 गुणमयी मेरी माया पुरुषम् = जीवात्मा अर्थात् क्षेत्रज्ञ

* श्लोक ५-८ में विकारसहित क्षेत्र का स्वरूप कहा है ।

† श्लोक ७ ने ११ तक ज्ञान अर्थात् ज्ञानका माधन कहा है ।

‡ श्लोक १० में १७ तक क्षेत्रया स्वरूप कहा है ।

प्रकृतिके सङ्गसे पुरुषः प्रकृतिस्थो हि भुङ्क्ते प्रकृतिजान्गुणान् ।
 पुरुषको भोग कारणं गुणसङ्गोऽस्य सदसद्योनिजन्मसु ॥२१॥
 और नाना की पुरुष , प्रकृतिस्थ , हि, भुङ्क्ते, प्रकृतिजान्, गुणान्,
 योनियों को पुरुष , प्रकृतिस्थ , हि, भुङ्क्ते, प्रकृतिजान्, गुणान्,
 प्राप्ति । कारणम्, गुणसङ्ग , अन्य, सदसद्योनिजन्मसु ॥२१॥

परन्तु-

प्रकृतिस्थः	= { प्रकृतिमे* स्थित हुआ	(और इन)	
हि	= ही	गुणसङ्गः	= गुणोंका सङ्ग
पुरुषः	= पुरुष	(एव)	= ही
प्रकृति-	= { प्रकृतिसे	अस्य	= इस जीवात्माके
जान्	= { उत्पन्न हुए	सदसद्योनि-	= { अच्छी बुरी
गुणान्	= { त्रिगुणात्मक	जन्मसु	= { योनियोंमें
	= { सब पदार्थोंको		= { जन्म लेनेमें
भुङ्क्ते	= भोगता है	कारणम्	= कारण है†

पुरुषके स्वरूप- उपद्रष्टानुमन्ता च भर्ता भोक्ता महेश्वरः ।

का निरूप

परमात्मेति चाप्युक्तो देहेऽस्मिन्पुरुषः परः ॥२२॥

उपद्रष्टा, अनुमन्ता, च, भर्ता, भोक्ता, महेश्वर ,

परमात्मा, इति, च, अपि, उक्तः, देहे, अस्मिन्, पुरुष, पर ॥२२॥

वास्तवमें तो यह-

पुरुषः = पुरुष , अस्मिन् = इस

* प्रकृति शब्दका अर्थ गीता अध्याय ७ श्लोक १४ में कही हुई
 भावान्की त्रिगुणमयी माया समझना चाहिये ।

† मत्त्वगुणके सङ्गमें द्रव्योनिम एव रजोगुणके सङ्गमें मनुष्ययोनियों
 और तमोगुणके सङ्गसे पशु-पक्षा आदि नीच योनियोंमें जन्म होता है ।

सः	= वह	अभिजायते =	{	जन्मता है अर्थात् पुनर्जन्मको नहीं प्राप्त होता है
सर्वथा	= सब प्रकारसे			
वर्तमानः	= वर्तता हुआ			
अपि	= भी			
भूयः	= फिर			
न	= नहीं			

ध्यानयोग, ज्ञान- ध्यानेनात्मनि पश्यन्ति केचिदात्मानमात्मना ।
योग और कर्म- अन्ये सांख्येन योगेन कर्मयोगेन चापरे ॥२४॥
योगसे भगवत्- प्राप्तिका कथन । ध्यानेन, आत्मनि, पश्यन्ति, केचित्, आत्मानम्, आत्मना,

अन्ये, सांख्येन, योगेन, कर्मयोगेन, च, अपरे ॥२४॥

हे अर्जुन ! उम परमपुरुष-

आत्मानम्	= परमात्माको	ध्यानेन	= ध्यानके द्वारा *
केचित्	= { कितने ही मनुष्य तो	आत्मनि	= हृदयमें
आत्मना	= { शुद्ध हुई सूक्ष्म बुद्धिसे	पश्यन्ति	= देखते हैं (तथा)
		अन्ये	= अन्य (कितने ही)
		सांख्येन	= ज्ञान†

अनित्य है तथा जीवात्मा नित्य, चेतन, निर्विकार और अविनाशी ण्व शुद्ध बोधस्वरूप सच्चिदानन्दघन परमात्माका हा सनातन अक्ष है इस प्रकार समझकर संपूर्ण मायिक पदार्थोंके मङ्गला सर्वथा त्याग करके परमपुरुष परमात्मामें ही एकीभावेसे नित्य स्थित रहनेका नाम उनको तत्त्वमे जानना है ।

* त्रिमका वर्णन गाता अध्याय ६ म श्लोक ११ से ३० तक विस्तारपूर्वक किया है ।

† त्रिमका वर्णन गाता अध्याय २ म श्लोक २१ से ३० तक विस्तारपूर्वक किया है ।

योगेन=योगके द्वारा (देखते हैं)	कर्मयोगेन = { निष्काम कर्म-
च = और	{ योगके द्वारा*
अपरे = अपर (कितने ही)	(पश्यन्ति) = देखते हैं

अन्ये त्वेवमजानन्तः श्रुत्वान्येभ्य उपासते ।
तेऽपि चातितरन्त्येव मृत्युं श्रुतिपरायणाः ॥२५॥
अन्ये, तु, एवम्, अजानन्त, श्रुत्वा, अन्येभ्य, उपासते,
ते, अपि, च, अनितरन्ति, एव, मृत्युम्, श्रुतिपरायणा ॥२५॥

तु	= परन्तु	उपासते	= { उपासना करते हैं }
अन्ये	= { इनमें दूसरे अर्थात् जो मन्द बुद्धिवाले पुरुष हैं वे (स्वयम्) }	च ते श्रुति-परायणाः	= { और वे = वे = { सुननेके परायण = { हुए पुरुष = भी
एवम्	= इस प्रकार	अपि	= भी
अजानन्तः	= न जानने हुए	अतितरन्ति	= { मृत्युन्मत्त मग्न- = { नागरको = { निःसन्ने = { न जाने
अन्येभ्यः	= { दूसरोंमें अर्थात् = { तत्त्वके जानने- = { वाले पुरुषोंमें	एव	= { मृत्युन्मत्त मग्न- = { नागरको = { निःसन्ने = { न जाने

क्षेत्रक्षेत्रहवे यावत्सजायते विंचित्तत्त्व स्थावरजङ्गमम् ।
 क्षेत्रक्षेत्रजसयोगात्तद्विज्झि भरतर्षभ ॥२६॥

[illegible]

3. 11. 1941

यावत्, सजायते, किञ्चित्, सत्त्वम्, स्थावरजङ्गमम्,
क्षेत्रक्षेत्रज्ञसंयोगात्, तत्, विद्धि, भरतर्षभ ॥२६॥

भरतर्षभ	= हे अर्जुन	तत्	= उस सपूर्णको
यावत्	= यावन्मात्र		(त)
किञ्चित्	= जो कुछ भी	क्षेत्रक्षेत्रज्ञ-	= { क्षेत्र और
स्थावरजङ्गमम्	= { स्थावर जङ्गम	संयोगात्	= { क्षेत्रज्ञके संयोगसे ही
सत्त्वम्	= वस्तु		(उत्पन्न हुई)
संजायते	= उत्पन्न होती है	विद्धि	= जान—

अर्थात् प्रकृति और पुरुषके परस्परके सम्बन्धसे ही सपूर्ण जगत्की स्थिति है, वास्तवमें तो सपूर्ण जगत् नाशवान् और क्षणभङ्गुर होनेसे अनित्य है ।

अविनाशी समं सर्वेषु भूतेषु तिष्ठन्तं परमेश्वरम् ।
परमेश्वर को विनश्यत्सर्वविनश्यन्तं यः पश्यति स पश्यति ॥२७॥
सर्वत्र समभावसे स्थित देखने- समम्, सर्वेषु, भूतेषु, तिष्ठन्तम्, परमेश्वरम्,
वालेको प्रशंसा । विनश्यत्सु, अविनश्यन्तम्, य, पश्यति, स, पश्यति ॥ २७ ॥

इस प्रकार जानकर—

यः	= जो पुरुष	परमेश्वरम्	= परमेश्वरको
विनश्यत्सु	= नष्ट होते हुए	समम्	= समभावसे
सर्वेषु	= सब	तिष्ठन्तम्	= स्थित
भूतेषु	= { चराचर भूतोंमें	पश्यति	= देखता है
अविनश्यन्तम्	= नाशरहित	सः	= वही
		पश्यति	= देखता है

परमेश्वरको समं पश्यन्हि सर्वत्र समवस्थितमीश्वरम् ।
 सर्वत्र समभाव- न हिनस्त्यात्मनात्मानं ततो याति परां गतिम् ॥२८॥
 ने स्थित दृष्टने- समम्, पश्यन्, हि, सर्वत्र, समवस्थितम्, ईश्वरम्, न,
 का फल । हिनन्ति, आत्मना, आत्मानम्, ततो, याति, पराम्, गतिम् ॥२८॥

हि	= क्योंकि (वह पुरुष)	आत्मना	= अपनेद्वारा
सर्वत्र	= सर्वत्र	आत्मानम्	= आपको
समवस्थितम्	= { समभावमे स्थित हुए	न	= { नष्ट नहीं
ईश्वरम्	= परमेश्वरको	हिनन्ति	= { करता है*
समम्	= समान	ततः	= इससे (वह)
पश्यन्	= देखना हुआ	पराम्	= परम
		गतिम्	= गतिको
		याति	= प्राप्त होता है

आत्मा - प्रकृत्यैव च कर्माणि क्रियमाणानि सर्वशः ।
 शब्दात् दृष्टन- यः पश्यति तथात्मानमकर्तारं स पश्यति ॥२९॥
 वाहेव प्रज्ञात्वा । प्रकृत्या, एव च कर्माणि, क्रियमाणानि, सर्वशः,
 यः, पश्यति, तथा आत्मानम्, अकर्तारम्, स, पश्यति ॥२९॥

च	= और	क्रियमाणानि	= किये हुए
यः	= जो पुरुष	(पश्यति)	= देखता है †
कर्माणि	= सपूर्ण कर्मोंको	तथा	= तथा
सर्वशः	= सब प्रकारसे	आत्मानम्	= आत्माको
प्रकृत्या	= प्रकृतिसे	अकर्तारम्	= अकर्ता
एव	= ही	पश्यति	= देखता है

* न गीत २३ वा २४ वा शब्द हो। मेरे पक्ष में आत्मावा नष्ट नहीं मानता है।

† अर्थात् इस वाक्य में समान होता है कि प्रकृति देखकर हुए

२९ वा ३० वा शब्द होते हैं।

सः = वही | पश्यति = देखना है

ससारको यदा भूतपृथग्भावमेकस्थमनुपश्यति ।

परमात्मा में तत एव च विस्तारं ब्रह्म संपद्यते तदा ॥३०॥
स्थित और

परमात्मासे ही यदा, भूतपृथग्भावम्, एकस्थम्, अनुपश्यति,
उपपन्न हुआ तत, एव, च, विस्तारम्, ब्रह्म, संपद्यते, तदा ॥३०॥
देखनेका फल । और यह पुरुष—

यदा	= जिस कालमें	ततः	= { उस परमात्माके
भूत-	= { भूतोंके न्यारे न्यारे भावको	एव	= ही
पृथग्भावम्		विस्तारम्	= { सपूर्ण भूतोंका विस्तार
एकस्थम्	= { एक परमात्माके सकल्पके आधार स्थित	(पश्यति)	= देखता है
अनुपश्यति	= देखता है	तदा	= उस कालमें
च	= तथा	ब्रह्म	= { सच्चिदानन्द- घन ब्रह्मको
		संपद्यते	= प्राप्त होता है

अविनाशी अनादित्वाभिर्गुणत्वात्परमात्मायमव्ययः ।

परमात्मा गुणा- शरीरस्थोऽपि कौन्तेय न करोति न लिप्यते ॥३१॥
तीत होनेसे न

कर्ता है और अनादित्वात्, निर्गुणत्वात्, परमात्मा, अयम्, अव्यय,
न लिप्यमान शरीरस्थ, अपि, कौन्तेय, न, करोति, न, लिप्यते ॥३१॥
होना है इस

विषयका कथन । कौन्तेय = हे अर्जुन

अनादित्वात् = { अनादि
होनेसे
(और)

निर्गुणत्वात् = { गुणातीत
होनेसे

अयम् = यह
अव्ययः = अविनाशी

परमात्मा	= परमात्मा	न	= न
शरीरस्थः	= { शरीरमें स्थित हुआ	करोति	= करता है (और)
अपि	= भी (वास्तवमें)	न	= न
		लिप्यते	= { लिपायमान होता है

आकाश के यथा सर्वगतं सौक्ष्म्यादाकाशं नोपलिप्यते ।

दृष्टान्तमें आत्मा-
का निरूपणावा
कथन ।

सर्वत्रावस्थितो देहे तथात्मा नोपलिप्यते ॥३२॥

यथा, सर्वगतम्, सौक्ष्म्यात्, आकाशम्, न, उपलिप्यते,
सर्वत्र, अवस्थित, देहे, तथा, आत्मा, न, उपलिप्यते ॥३२॥

यथा	= जिस प्रकार	सर्वत्र	= सर्वत्र
सर्वगतम्	= { सर्वत्र व्याप्त हुआ (भी)	देहे	= देहमें
आकाशम्	= आकाश	अवस्थितः	= स्थित हुआ (भी)
सौक्ष्म्यात्	= { सूक्ष्म होनेके कारण	आत्मा	= आत्मा
न	= { लिपायमान नहीं होता है		(गुणातीत होनेके कारण देहके गुणोंमें)
उपलिप्यते	= { लिपायमान नहीं होता है	न	= न
तथा	= ऐसे ही	उपलिप्यते	= { लिपायमान नहीं होता है

यथा प्रवक्तायत्येकः कृत्स्नं लोकमिह रविः ।

प्रवक्ता एक-
भाषा ॥ ३५ ॥
एक, वक्ता ।

अत्र अत्रैव तथा कृत्स्नं प्रवक्तायति भारत ॥३३॥

यथा प्रवक्तायति, एक, कृत्स्नम्, लोकम्, इमम् रविः,
अत्रम् अत्रैव, तथा, वक्ताम्, प्रवक्तायति, भारत ॥३३॥

भारत	- है अर्थात्	एकः	= एक ही
यथा	- जिस प्रकार	रविः	= सूर्य

इमम्	= इस	क्षेत्री	= एक ही आत्मा
कृत्स्नम्	= सपूर्ण	कृत्स्नम्	= सपूर्ण
लोकम्	= ब्रह्माण्डको	क्षेत्रम्	= क्षेत्रको
प्रकाशयति	= प्रकाशित करता है	प्रकाशयति	= { प्रकाशित करता है-
तथा	= उसी प्रकार		

अर्थात् नित्य बोधस्वरूप एक आत्माकी ही सत्तामे सपूर्ण

जड़वर्ग प्रकाशित होता है ।

क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ- क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोरेवमन्तरं ज्ञानचक्षुषा ।
 के भेदको तथा भूतप्रकृतिमोक्षं च ये विदुर्यान्ति ते परम् ॥३४॥
 प्रकृतिसे छूटनेके क्षेत्रक्षेत्रज्ञयो, एवम्, अन्तरम्, ज्ञानचक्षुषा,
 उपायको जानने- भूतप्रकृतिमोक्षम्, च, ये, विदुः, यान्ति, ते, परम् ॥३४॥
 का फल ।

एवम्	= इस प्रकार	ये	= जो पुरुष
क्षेत्र-	= { क्षेत्र और	ज्ञानचक्षुषा	= ज्ञाननेत्रोंद्वारा
क्षेत्रज्ञयोः	= { क्षेत्रज्ञके	विदुः	= तत्त्वसे जानते हैं
अन्तरम्	= भेदको*	ते	= वे महात्माजन
च	= तथा		
भूतप्रकृति-	= { विकारसहित	परम्	= { परब्रह्म
मोक्षम्	= { प्रकृतिसे छूटने- के उपायको	यान्ति	= { परमात्माको प्राप्त होते हैं

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्याया योग-
 शास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे क्षेत्रक्षेत्रज्ञविभागयोगो

नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

* क्षेत्रको चद्र, विहारी, क्षणिक और नाशवान् तथा क्षेत्रज्ञको निर्णय,
 चेतन, अविवारी और अविनाशी जानना ही उनके भेदको जानना है ।

ॐ श्रीपरमात्मने नमः

अथ चतुर्दशोऽध्यायः

प्रधानविषय-१ मे वक्तव्य की महिमा और प्रकृति-पुरुष मे जगत्की उत्पत्ति । (७-१८) मन्, रज, तम तीनों गुणोंका विषय । (१९-२७) भगवन्-प्राप्तिका उपाय और पुणानान पुण्यके लक्षण ।

श्रीभगवानुवाच

अति उत्तम परं भूयः प्रवक्ष्यामि ज्ञानानां ज्ञानमुत्तमम् ।

परम ज्ञानको

यथन करनेको

प्रतिष्ठा और परम

जगत्की महिमा ।

यज्ज्ञात्वा मुनयः सर्वे परां सिद्धिमितो गताः ॥१॥

प्रवक्ष्यामि, ज्ञानानाम्, ज्ञानम्, उत्तमम्, यत्, ज्ञात्वा, मुनयः, सर्वे पराम्, सिद्धिम्, इतः, गताः ॥१॥

उपमं उपरान्त श्रीकृष्ण भगवान् बोले हैं अर्जुन-

ज्ञानानाम्	= ज्ञानोंमें भी	ज्ञात्वा	= जानकर
उत्तमम्	= अति उत्तम	सर्वे	= सब
परम्	= परम	मुनयः	= मुनिजन
ज्ञानम्	= ज्ञानको (में)	इतः	= इस संसारसे
भूयः	= फिर (भी)		(मुक्त होकर)
	(तेरे लिये)	पराम्	= परम
प्रवक्ष्यामि	= बतलाऊँ (कि)	सिद्धिम्	= सिद्धिमें
यतः	= जिससे	गताः	= प्राप्त हो गये हैं

[११] इदं ज्ञानमुपाश्रित्य मम नाधर्म्यमागताः ।

सर्वेऽपि नोपजायन्ते प्रलये न व्यथन्ति च ॥२॥

इ.ग., ज्ञानसे उपाश्रित्य मम, नाधर्म्य, आगताः,

सर्वे अपि, न उपजायन्ते प्रलये, न व्यथन्ति, च ॥ २ ॥

हे अर्जुन-

इदम्	= इस	सर्गे	= { सृष्टिके
ज्ञानम्	= ज्ञानको		= { आदिमें (पुन.)
उपाश्रित्य	= { आश्रय करके अर्थात् धारण करके	न उपजायन्ते	= { उत्पन्न नहीं होते हैं
मम	= मेरे	च	= और
साधर्म्यम्	= स्वरूपको	प्रलये	= प्रलयकालमें
आगताः	= प्राप्त हुए पुरुष	अपि	= भी
		न	= { व्याकुल
		व्यथन्ति	= { नहीं होते हैं-

क्योंकि उनकी दृष्टिमें मुझ वासुदेवसे भिन्न कोई वस्तु है ही नहीं ।

प्रकृति-पुरुषके सयोगसे सर्व-भूतोंकी उत्पत्ति-का कथन । मम योनिर्महद्ब्रह्म तस्मिन्गर्भं दधाम्यहम् ।
संभवः सर्वभूतानां ततो भवति भारत ॥३॥
मम, योनिः, महत्, ब्रह्म, तस्मिन्, गर्भम्, दधामि, अहम्,
संभवः, सर्वभूतानाम्, ततः, भवति, भारत ॥३॥

भारत	= हे अर्जुन	अहम्	= मैं
मम	= मेरी	तस्मिन्	= उस योनिमें
महत्	= { महत् ब्रह्मरूप प्रकृति अर्थात्	गर्भम्	= { चेतनरूप बीजको
ब्रह्म	= { त्रिगुणमयी माया (संपूर्ण भूतोंकी)	दधामि	= स्थापन करता हूँ
योनिः	= { योनि है अर्थात् गर्भाधानका	ततः	= { उस जड़चेतन- के सयोगसे
	= स्थान है (और)	सर्वभूता- नाम्	= सब भूतोंकी

संभवः = उत्पत्ति । भवति = होती है

[„] सर्वयोनिषु कौन्तेय मूर्तयः संभवन्ति याः ।

तासां ब्रह्म महद्योनिरहं बीजप्रदः पिता ॥ ४ ॥

सर्वयोनिषु, कौन्तेय, मूर्तय, संभवन्ति, या

तासाम्, ब्रह्म, महत्, योनि, अहम्, बीजप्रद, पिता ॥४॥

तथा-

कौन्तेय = हे अर्जुन महत् ब्रह्म = त्रिगुणमयीमाया(तो)

सर्वयोनिषु = { (नानाप्रकारकी) योनिः = { गर्भको धारण
सर्व योनियोमें करनेवाली
याः = जिनकी माना है (और)

मूर्तयः = { मूर्तिया अर्थात् अहम् = मैं
जरी बीजप्रदः = { बीजको रूपायन
संभवन्ति = उत्पन्न होते हैं करनेवाला
तासाम् = उन भवकी पिता = पिता हूँ

प्रकृतिने उत्पन्न सत्त्वं रजस्तम इति गुणाः प्रकृतिसंभवाः ।

४५ तीनों गुणों-

द्वारा जीवात्माद

नंद ज्ञानवा सत्त्वम्, रज, तम, इति, गुणा, प्रकृतिर्मभवा,

हन्त । निवर्धन्ति, महाबाहो, देहे, देहिनम्, अव्ययम् ॥ ५ ॥

तथा-

महाबाहो = हे अर्जुन प्रवर्ति- = { प्रवर्तिने
सत्त्वम् = सत्त्वगुण नभवा = { सत्त्वगुण
रजः = रजोगुण (और) गुणाः = तीनों गु
तमः = तमोगुण अव्ययम् = अविनाश
इति = ऐसे (या) देहिनम् = देह-धर

देहे = शरीरमें | निवध्नन्ति = बाधते हैं

सत्त्वगुणद्वारा जीवात्माके बांधे जानेका प्रकार। तत्र सत्त्वं निर्मलत्वात्प्रकाशकमनामयम् ।
सुखसङ्गेन बध्नाति ज्ञानसङ्गेन चानघ ॥ ६ ॥

तत्र, सत्त्वम्, निर्मलत्वात्, प्रकाशकम्, अनामयम्,
सुखसङ्गेन, बध्नाति, ज्ञानसङ्गेन, च, अनघ ॥ ६ ॥

अनघ	= हे निष्पाप	सुख-	= { सुखकी
तत्र	= उन तीनो गुणोंमें	सङ्गेन	= { आसक्तिसे
प्रकाशकम्	= प्रकाश करनेवाला	च	= और
अनामयम्	= निर्विकार	ज्ञान-	= { ज्ञानकी आसक्ति
सत्त्वम्	= सत्त्वगुण (तो)	सङ्गेन	= { से अर्थात् ज्ञानके
निर्मल-	= { निर्मल होनेके	बध्नाति	= बाधता है
त्वात्	= { कारण		

रजोगुणद्वारा जीवात्माके बांधे जानेका प्रकार। रजो रागात्मकं विद्धि तृष्णासङ्गसमुद्भवम् ।
तन्निवध्नाति कौन्तेय कर्मसङ्गेन देहिनम् ॥ ७ ॥

रज, रागात्मकम्, विद्धि, तृष्णासङ्गसमुद्भवम्,
तत्, निवध्नाति, कौन्तेय, कर्मसङ्गेन, देहिनम् ॥ ७ ॥

तथा-

कौन्तेय	= हे अर्जुन	तत्	= वह
रागात्मकम्	= रागरूप	देहिनम्	= { इस)
रजः	= रजोगुणको		= { जीवात्माको
तृष्णामङ्ग-	= { कामना और	कर्मसङ्गेन	= { कर्मोंकी और
समुद्भवम्	= { आसक्तिमे		= { उनके फलकी
	= { उत्पन्न हुआ		= { आसक्तिमे
विद्धि	= जान	निवध्नाति	= बाधता है

तमोगुणद्वारा तमस्त्वज्ञानजं विद्धि मोहनं सर्वदेहिनाम् ।
 जीवात्मके दाधे प्रमादालस्यनिद्राभिस्तन्निबध्नाति भारत ॥ ८ ॥
 तमः, तु, अज्ञानजम् विद्धि, मोहनम्, सर्वदेहिनाम्,
 प्रमादालस्यनिद्राभिः, तत्, निबध्नाति, भारत ॥ ८ ॥

तु	= ओर	विद्धि	= जान
भारत	= हे अर्जुन	तत्	= वह
सर्वदेहिनाम्	= { सर्व देहाभि- मानियोंके	(देहिनाम्)	= इन्में जीवात्माको
मोहनम्	= मोहनेवाले	प्रमादाल-	= { प्रमाद* आलस्य* आर निद्रा- के द्वारा
तमः	= तमोगुणको	स्यनिद्राभिः	
अज्ञानजम्	= { अज्ञानमे उत्पन्न हुआ	निबध्नाति	= बध्नाती है

सर्वं सुखं सुखे संजयति रजः कर्मणि भारत ।
 प्रमादालस्यनिद्राभिस्तन्निबध्नाति भारत ॥ ९ ॥
 सर्वम्, सुखं, सुखे, संजयति, रजः, कर्मणि, भारत
 - तमः, आलस्य, निद्रा, तमः, प्रमाद, संजयति, उत ॥ ९ ॥

भारत = हे अर्जुन
 सत्त्वम् = सत्त्वगुण
 सुखे = सुखमे
 संजयति = स्थापना है, और
 रजः = रजोगुण
 कर्मणि = कर्मके लक्षण
 तमः = तमोगुण
 तु = हे
 ज्ञानम् = ज्ञानमे

आवृत्य	= { आच्छादन करके अर्थात् ढक्के	उत	= भी
प्रमादे	= प्रमादमें	संजयति	= लगाता है

दो गुणोंको रजस्तमश्चाभिभूय सत्त्वं भवति भारत ।
 दबाकर एक रजः सत्त्वं तमश्चैव तमः सत्त्वं रजस्तथा ॥१०॥
 गुणके बढ़नेका कथन । रज , तम., च, अभिभूय, सत्त्वम्, भवति, भारत,
 रज., सत्त्वम्, तम , च, एव, तम , सत्त्वम्, रज , तथा ॥१०॥

च	= और	सत्त्वम्	= सत्त्वगुणको
भारत	= हे अर्जुन	(अभिभूय)	= दबाकर
रजः	= रजोगुण (और)	तमः	= तमोगुण
तमः	= तमोगुणको		(बढ़ता है)
अभिभूय	= दबाकर	तथा	= वैसे
सत्त्वम्	= सत्त्वगुण	एव	= ही
भवति	= { होता है अर्थात् बढ़ता है	तमः	= तमोगुण (और)
च	= तथा	सत्त्वम्	= सत्त्वगुणको
रजः	= रजोगुण (और)	(अभिभूय)	= दबाकर
		रजः	= रजोगुण(बढ़ता है)

सत्त्वगुणकी सर्वद्वारेषु देहेऽस्मिन्प्रकाश उपजायते ।
 बुद्धिके लक्षण ।

ज्ञानं यदा तदा विद्याद्विवृद्ध सत्त्वमित्युत ॥११॥

सर्वद्वारेषु, देहे, अस्मिन्, प्रकाश , उपजायते, ज्ञानम्,
 यदा, तदा, विद्यात्, विवृद्धम्, सत्त्वम्, इति, उत ॥११॥

इत्यल्लिखे—

यदा = त्रिम कालमें | अस्मिन् = उम

देहे	= देहमें (तथा)	तदा	= उस कालमें
सर्वद्वारेषु	= { अन्तःकरण और इन्द्रियोंमें	इति	= ऐसा
प्रकाशः	= चेतनता	विद्यात्	= जानना चाहिये
(च)	= और	उत	= कि
ज्ञानम्	= बोधशक्ति	सत्त्वम्	= सत्त्वगुण
उपजायते	= उत्पन्न होती है	विवृद्धम्	= बढ़ा है

रजोगुणकी

शक्तिके लक्षण ।

लोभः प्रवृत्तिरारम्भः कर्मणामशमः स्पृहा ।

रजस्येतानि जायन्ते विवृद्धे भरतर्षभ ॥१२॥

लोभ , प्रवृत्ति , आरम्भ , कर्मणाम् , अशम , स्पृहा ,

रजसि , एतानि , जायन्ते , विवृद्धे , भरतर्षभ ॥१२॥

और—

भरतर्षभ	= हे अर्जुन	(स्मार्थबुद्धिसे)
रजसि	= रजोगुणके	आरम्भः = आरम्भ (एव)
विवृद्धे	= बढ़नेपर	अशमः = { अशान्ति अर्थात् मनकी चञ्चलता
लोभ	= लोभ (और)	(और)
प्रवृत्तिः	= { प्रवृत्ति अर्थात् सांसारिक चेष्टा (तथा)	स्पृहा = { प्रिय-भागे की पतना
कर्मणाम्	= { सब प्रवृत्तियों वर्णोंका	एतानि = यह सब जायन्ते = उत्पन्न होते हैं

रजोगुणकी

शक्तिके लक्षण ।

अप्रवृत्तिश्च प्रमादो मोह एव च ।

तमस्येतानि जायन्ते विवृद्धे कुरन्तन्दन ॥१३॥

अप्रवृत्ति , अप्रवृत्ति , च , प्रमाद , मोह , एव च

तमसि एतानि जायन्ते , विवृद्धे कुरन्तन्दन । = ।

तथा-

कुरुत्तन्दन = हे अर्जुन
 तमसि = तमोगुणके
 विवृद्धे = बढ़नेपर
 (अन्त करण
 और इन्द्रियोंमें)
 अप्रकाशः = अप्रकाश (एव)
 अप्रवृत्तिः = { कर्तव्यकर्मोंमें
 = { अप्रवृत्ति
 = और
 च

प्रमादः = { प्रमाद अर्थात्
 = { व्यर्थ चेष्टा
 च = और
 मोहः = { निद्रादि अन्त -
 = { करणकी मोहिनी
 वृत्तिया
 एतानि = यह सब
 एव = ही
 जायन्ते = उत्पन्न होते हैं

सत्त्वगुणकी
 वृद्धिमें मरनेका
 फल ।

यदा सत्त्वे प्रवृद्धे तु प्रलय याति देहभृत् ।
 तदोत्तमविदां लोकानमलान्प्रतिपद्यते ॥१४॥
 यदा, सत्त्वे, प्रवृद्धे, तु, प्रलयम्, याति, देहभृत्,
 तदा, उत्तमविदाम्, लोकान्, अमलान्, प्रतिपद्यते ॥१४॥
 और हे अर्जुन-

यदा = जब
 देहभृत् = यह जीवात्मा
 सत्त्वे = सत्त्वगुणकी
 प्रवृद्धे = वृद्धिमें
 प्रलयम् = मृत्युको
 याति = प्राप्त होता है
 तदा = तब

तु = तो
 उत्तम-विदाम् = { उत्तम कर्म
 = { करनेवालोंके
 अमलान् = { मलरहित अर्थात्
 = { दिव्य स्वर्गादि
 लोकान् = लोकोंको
 प्रतिपद्यते = प्राप्त होता है

गजमि प्रलय गत्वा कर्ममङ्गिषु जायते ।
 तथा प्रलीनस्तममि मूढयोनिषु जायते ॥१५॥

रजसि, प्रलयम्, गत्वा, कर्मसङ्गिषु, जायते,
तथा, प्रलीन, तमसि मूढयोनिषु, जायते ॥१५॥

और-

रजसि	= { रजोगुणके वदनेपर*	तथा	= तथा
प्रलयम्	= मृत्युको	तमसि	= { तमोगुणके वदनेपर
गत्वा	= प्राप्त होकर	प्रलीन	= मग हुआ पुरुष
कर्म-	{ कर्मोंकी आगति-		(कीट पशु आदि)
सङ्गिषु	= { वाले मनुष्योंमें	मूढयोनिषु	= मूढजनियोमें
जायते	= उत्पन्न होता है	जायते	= उत्पन्न होता है

मात्स्विक, रजस्य कर्मणः सुकृतस्याहुः मात्स्विकं निर्मलं फलम् ।

और तमस्य रजस्यस्तु फलं दुःस्वप्नज्ञानं तमसः फलम् ॥१६॥
वर्माण, सुकृतस्य आह मात्स्विकं निर्मलं फलम्

कर्मण, सुकृतस्य आह मात्स्विकं निर्मलं फलम्
रजस्य तु फलम् दुःस्वप्न, अज्ञानम् तमस्य फलम् ॥१६॥

वर्णोक्ति -

सुकृतस्य	= मात्स्विक	आहुः	कहा है
कर्मणः	= कर्मसा	रजसः	- रजस रजस
तु	= तो	फलम्	फल
मात्स्विकम्	{ मात्स्विक अर्थात् स्वप्न, अज्ञान आदि	दुःस्वप्न	दुःस्वप्न
	{ तमसा	तमसः	तमस रजस
निर्मलम्	निर्मल	फलम्	- फल
फलम्	फल	अज्ञानम्	- अज्ञान रजस

सत्त्वगुणसे ज्ञान सत्त्वात्संजायते ज्ञानं रजसो लोभ एव च ।
और रजोगुणसे प्रमादमोहौ तमसो भवतोऽज्ञानमेव च ॥१७॥

लोक तथा तमो- गुणसे प्रमाद, सत्त्वात्, संजायते, ज्ञानम्, रजस, लोभ, एव, च,
मोह और अज्ञान- प्रमादमोहौ, तमस, भवतः, अज्ञानम्, एव, च ॥१७॥
की उत्पत्ति ।

सत्त्वात् = सत्त्वगुणसे
ज्ञानम् = ज्ञान
संजायते = उत्पन्न होता है
च = और
रजसः = रजोगुणसे
एव = नि मन्देह
लोभः = लोभ
(उत्पन्न होता है)

तथा-
च = तथा
तमसः = तमोगुणसे
प्रमादमोहौ = { प्रमाद*और
मोह +
भवतः = उत्पन्न होते हैं
(और)
अज्ञानम् = अज्ञान
एव = भी (होता है)

सात्विक, ऊर्ध्व गच्छन्ति सत्त्वस्था मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः ।
राजस और तामस पुरुषोंकी मन्त्रिका कथन ।
ऊर्ध्वम्, गच्छन्ति, सत्त्वस्था, मध्ये, तिष्ठन्ति, राजसा,
ऊर्ध्वम्, गच्छन्ति, मत्त्वस्था, मध्ये, तिष्ठन्ति, तामसा ॥१८॥
ऊर्ध्वम्, गच्छन्ति, मत्त्वस्था, मध्ये, तिष्ठन्ति, तामसा ॥१८॥
इमल्लिगे-

मत्त्वस्था = { मत्त्वगुणमे स्थित दृष्ट पुरुष
ऊर्ध्वम् = { स्वर्गादि उच्च
गच्छन्ति = जाने हैं / आगे
राजसा = { रजोगुणमे स्थित
मध्ये = { मध्यमे अर्थात्
तिष्ठन्ति = रहते हैं (मध्य)

जघन्य-
गुण-
वृत्तिस्थाः = { तमोगुणके कार्य-
रूप निद्रा प्रमाद
और आलस्यादिमे
स्थित हुए

अधः = { अत्रोगतिको
अर्थात् कीट
पशु आदि नीच
योनियोको

तामसाः = तामस पुरुष

गच्छन्ति = प्राप्त होने के

आत्माको
अकारि और
गुणानां जानने-
से भगवत्-प्राप्ति।

नान्यं गुणेभ्यः कर्तारं यदा द्रष्टानुपश्यति ।

गुणेभ्यश्च परं वेत्ति मद्भावं सोऽधिगच्छति ॥१६॥

न, अन्यम्, गुणेभ्यः, कर्तारम्, यदा, द्रष्टा अनुपश्यति,
गुणेभ्य, च, परम्, वेत्ति, मद्भावं, स, अधिगच्छति ॥१६॥

और हैं अर्जुन-

यदा	= जिस कालमें	च	= और
द्रष्टा	= द्रष्टा*	गुणेभ्यः	= तीनों गुणोंसे
गुणेभ्यः	= { तीनों गुणोंके मिथ्याय	परम्	= अति परे नञ्दिना-
अन्यम्	= अन्य किर्तीको	वेत्ति	= तत्त्वसे जानने
कर्तारम्	= कर्ता	(तदा)	= उस प्रसंगमें
न	= नहीं	सः	= सः परम्
अनुपश्यति	= दृश्यता है	मद्भावं	= मेरे भावोंमें
	अर्थात् गुण ही	अधि-	= अधि-
	गुणोंमें वर्तते हैं ।		

[„] गुणानेतानतीत्य त्रीन्देही देहसमुद्भवान् ।

जन्ममृत्युजरादुःखैर्विमुक्तोऽमृतमश्नुते ॥२०॥

गुणान्, एतान्, अतीत्य, त्रीन्, देही, देहसमुद्भवान्,
जन्ममृत्युजरादुःखैः, विमुक्त, अमृतम्, अश्नुते ॥२०॥

तथा यह—

देही	= पुरुष	जन्ममृत्यु-जरादुःखैः =	जन्म मृत्यु वृद्धावस्था और सब प्रकारके दुःखोंमें
एतान्	= इन		
देह-	= स्थूल* शरीरकी उत्पत्तिके कारणरूप	विमुक्तः	= मुक्त हुआ
समुद्भवान्			
त्रीन्	= तीनों	अमृतम्	= परमानन्दको
गुणान्	= गुणोंको	अश्नुते	= प्राप्त होता है
अतीत्य	= उल्लवण करके		

अर्जुन उवाच

शुनामीन पुरुषके विषयमें अर्जुन-के तीन प्रश्न । कैर्लिङ्गैस्त्रीन्गुणानेतानतीतो भवति प्रभो ।

किमाचारः कथं चैतांस्त्रीन्गुणानतिवर्तते ॥२१॥

कै, लिङ्गै, त्रीन्, गुणान्, एतान्, अतीत, भवति, प्रभो,
किमाचार, कथम्, च, एतान्, त्रीन्, गुणान्, अतिवर्तते ॥२१॥

इस प्रकार भगवान् कहस्युक्त प्रश्नोंको सुनकर अर्जुनने पूछा कि हे पुरुषोत्तम—

एतान् = इन

। त्रीन् = तीनों

गुणान्	= गुणोमे	(भवति)	= होता है (तया)
अतीतः	= अतीत हुआ पुरुष	प्रभो	= हे प्रभो (मनुष्य)
कैः	= { किन किन	कथम्	= किम् उपायसे
लिङ्गैः	= { लक्षणोमे (युक्त)	एतान्	= इन
भवति	= होता है	त्रीन्	= तीनों
च	= और	गुणान्	= गुणोमे
किमा-	= { किन प्रकारके	अतिवर्तते	= अतीत होता है
चारः	= { आचरणोवाल्या		

श्रीभगवानुवाच

प्रकटां च प्रवृत्तिं च मोहमेव च पाण्डव ।
 न द्वेष्टि संप्रवृत्तानि न निवृत्तानि काङ्क्षति ॥२२॥
 प्रकाशम् च प्रवृत्तिम् च. मोहम्, एव, च. पाण्डव,
 न द्वेष्टि संप्रवृत्तानि न, निवृत्तानि, काङ्क्षति ॥२२॥

एव प्रकार अनुनय पृथनेपर श्रीगुण भाषण करते-
 पाण्डव = ३ अर्जुन
 (तो पुरुष)
 मोहम् = (तमोगुणके कर्ष-
 (तो पुरुष)
 प्रकाशम् = { कर्मगुणके कार्य एव = ही
 { कर्म प्रकाशप्रकाश न = न ।
 च = और संप्रवृत्तानि - प्रकाश एव
 प्रवृत्तिम् = (कर्मगुणके कार्य द्वेष्टि तमोगुणके कार्य
 { कर्म प्रवृत्तिम् च = च ।
 च = और न = न

निवृत्तानि=निवृत्त होनेपर
(उनकी)

काङ्क्षति = { आकाङ्क्षा
करता है*

[॥] उदासीनवदासीनो गुणैर्यो न विचाल्यते ।

गुणा वर्तन्त इत्येव योऽवतिष्ठति नेङ्गते ॥२३॥

उदासीनवत्, आसीन, गुणै, य, न, विचाल्यते,

गुणा, वर्तन्ते, इति, एव, य, अवतिष्ठति, न, इङ्गते ॥२३॥

तथा—

यः = जो

इति = ऐसा (समझता हुआ)

उदासीनवत् = साक्षीके सदृश

यः = जो

आसीनः = स्थित हुआ

(सच्चिदानन्दधन पर-

गुणैः = गुणोंके द्वारा

मात्मा मे एकीभावसे)

विचलित

न = नहीं किया

अव-
तिष्ठति} = स्थित रहता है (एव)

विचाल्यते = जा सकता

है (और)

गुणाः एव = गुण ही गुणोंमें

न = उस स्थितिसे

वर्तन्ते = वर्तते हैं†

इङ्गते = चलायमान
नहीं होता है

[॥] समदुःखसुखः स्वस्थः समलोष्टाश्मकाञ्चनः ।

तुल्यप्रियाप्रियो धीरस्तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः ॥२४॥

* जो पुरुष एक सच्चिदानन्दधन परमात्मा में ही नित्य एकीभाव में स्थित हुआ इस त्रिगुणमया मायाके प्रपञ्चरूप संसार में सर्वथा अतीत हो गया है उस गुणातीत पुरुषके अभिमानरहित अन्न करणम तीनों गुणोंके कार्यरूप प्रकाश प्रवृत्ति और मोहादि वृत्तियोंके प्रफट होने और न होनेपर किसी कालमें भी इच्छा द्वेष आदि विकार नहीं होते हैं यही उसके गुणोंसे अतीत होनेके प्रधान लक्षण हैं।

† ३मी अध्यायके श्लोक १९ की टिप्पणीमें देयना चादिये ।

समदुःखसुख , स्वस्थ , ममलोष्टात्मकाञ्चन ,
तुल्यप्रियाप्रिय . धीर , तुल्यनिन्दात्ममस्तुति ॥२४॥

और जो-

स्वस्थः	=	{ निरन्तर आत्म- भावमें स्थित हुआ	धीरः	=	{ वैयवान् है (तया) जो प्रिय और
समदुःख- सुखः	=	{ दुःखसुखको समान समझने- वाला है (तया)	तुल्य- प्रियाप्रियः	=	{ अप्रियको बराबर समझता है (और)
मम- लोष्टात्म- काञ्चन	=	{ मिट्टी पथर और सुवर्णमें समान भाव- वाला (और)	तुल्य- निन्दात्म- मस्तुतिः	=	{ अपनी निन्दा स्तुतिमें भी स- मानभाववाला है

१] मानापमानयोस्तुल्यस्तुल्यो मित्रारिपक्षयोः ।

सर्वारम्भपरित्यागी गुणातीतः स उच्यते ॥२५॥

मानापमानयोः तुल्य तुल्य , मित्रारिपक्षयोः .

सर्वारम्भपरित्यागी , गुणातीत . स उच्यते ॥२५॥

तथा जो-

मानापमानयोः	=	{ मान और अपमानमें	सः	=	सर्व
तुल्य	=	सम	सर्वारम्भ- परित्यागी	=	सर्वारम्भ- परित्यागी
मित्रारिपक्षयोः	=	{ मित्र और वैरि	गुणातीतः	=	गुणातीत
तुल्यः	=	सम	उच्यते	=	उच्यते है

तीसरे प्रश्नके मां च योऽव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते ।
 उत्तरमें भगवान्-
 की धनन्यभक्ति-
 से गुणातीत माम्, च, य, अव्यभिचारेण, भक्तियोगेन, सेवते,
 होनेका वर्णन । स, गुणान्, समतीत्य, एतान्, ब्रह्मभूयाय, कल्पते ॥२६॥

च	= और	एतान्	= इन तीनों
यः	= जो पुरुष	गुणान्	= गुणोंको
अव्यभि- चारेण	} = अव्यभिचारी	समतीत्य	= { अच्छी प्रकार उल्लेखन करके
भक्ति- योगेन		ब्रह्मभूयाय	= { सच्चिदानन्द- धन ब्रह्ममें एकी- भाव होनेके लिये
माम्	= मेरेको	कल्पते	= योग्य होता है
सेवते	= निरन्तर भजता है		
सः	= वह		

भगवत्स्वरूप- ब्रह्मणो हि प्रतिष्ठाहममृतस्याव्ययस्य च ।
 की महिमा । शाश्वतस्य च धर्मस्य सुखस्यैकान्तिकस्य च ॥२७॥

ब्रह्मण, हि, प्रतिष्ठा, अहम्, अमृतस्य, अव्ययस्य, च,
 शाश्वतस्य, च, धर्मस्य, सुखस्य, ऐकान्तिकस्य, च ॥२७॥
 तथा हे अर्जुन ! उस-

अव्ययस्य	= अविनाशी	च	= तथा
ब्रह्मणः	= परब्रह्मका	शाश्वतस्य	= नित्य
च	= और	धर्मस्य	= धर्मका
अमृतस्य	= अमृतका	च	= और

* केवल एक सर्वशक्तिमान् परमेश्वर वासुदेव भगवान्को ही अपना स्वामी मानता हुआ स्वार्थ और अभिमानको त्याग कर श्रद्धा और भावके सहित परम प्रेममें निरन्तर चिन्तन करनेको अव्यभिचारी भक्तियोग कहते हैं।

ऐकान्तिकस्य = { अखण्ड | अहम् = मैं
 { एकरम | हि = ही
 मुखस्य = आनन्दका , प्रतिष्ठा = आश्रय हू—

अर्थात् उपरोक्त ब्रह्म, अमृत, अक्षय और शाश्वतधर्म तथा ऐका-
 न्तिक मुख, यह सब मेरे ही नाम हैं इसलिये इनका मैं परम आश्रय हू।
 ॐ तत्सद्गति श्रीमद्भगवद्गीतामूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे
 श्रीकृष्णार्जुनसंवादे गुणत्रयविभागयोगो नाम चतुर्दशोऽध्याय ॥

अथ पञ्चदशोऽध्यायः

प्रधान विषय—१ वे ६ तक समाख्यानका कथन और भावत-प्रसिका
 रणाय । (७-१४) जीवामात्मा विषय । (१५-१८) प्रभावमहित
 परमेश्वरके स्वरूपका विषय । (१९-२०) पर, अक्षय, पुण्योत्तमका विषय ।
 श्रीभगवानुवाच

परमेश्वर
 १ शरीर और
 मुख का
 विषय मर्त्यमा ।

अर्धमूलमधःशाखमश्वत्थं प्राहुर्व्ययम् ।
 छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित् ॥ १ ॥
 अर्धमूलम् अथ शाखम् अश्वत्थम् प्राहुः व्ययम्
 छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित् ॥ १ ॥

उत्तर उपरान्त श्रीकृष्ण भगवान् फिर ध्या वि १-२०-
 उत्तर- { आदिपुरुष अथः- { उत्तर-
 मूलम् - { परमेश्वरस्य अश्वत्थम् { उत्तर-
 { मूलमात्र (११) { उत्तर-

अश्वत्थम् = { ससाररूप पीपलके वृक्षको	तम् = { उस ससाररूप वृक्षको
अव्ययम् = अविनाशी*	यः = जो पुरुष (मूलसहित)
प्राहुः = कहते हैं (तथा)	वेद = तत्त्वसे जानता है
यस्य = जिसके	सः = वह
छन्दांसि = वेद†	वेदवित् = { वेदके तात्पर्यको जाननेवाला है‡
पर्णानि = पत्ते (कहे गये हैं)	

संसारवृक्षका
विस्तार और
उसकी असङ्ग
शक्ति से छेदन
करनेके लिये
कथन ।

अधश्चोर्ध्वं प्रसृतास्तस्य शाखा
गुणप्रवृद्धा विषयप्रवालाः ।
अधश्च मूलान्यनुसंततानि
कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके ॥ २ ॥

अध, च, ऊर्ध्वम्, प्रसृता, तस्य, शाखा, गुणप्रवृद्धा,
विषयप्रवाला, अध, च, मूलानि, अनुसंततानि,
कर्मानुबन्धीनि, मनुष्यलोके ॥ २ ॥

धामसे नीचे ब्रह्मलोकमें वास करनेके कारण हिरण्यगर्भरूप ब्रह्माको परमेश्वर-
की अपेक्षा अध कक्षा है और वही इस संसारका विस्तार करनेवाला होनेसे
इसकी मुख्य शाखा है इसलिये इस संसारवृक्षको अध शाखावाला कहते हैं ।

* इस वृक्षका मूल कारण परमात्मा अविनाशी है तथा अनादिकालसे
इसकी परम्परा चली आती है इसलिये इस संसारवृक्षको अविनाशी कहते हैं ।

† इस वृक्षकी शाखारूप ब्रह्मासे प्रकट होनेवाले और यज्ञादिक कर्मोंके
द्वारा इस संसारवृक्षकी रक्षा और वृद्धिके करनेवाले पव शोभाको बढ़ानेवाले
होनेसे वेद पत्ते कहे गये हैं ।

‡ भगवान्की योगमायामे उत्पन्न हुआ संसार क्षणमनुर, नाशवान्
और दुःखरूप है, इसके निवृत्तनरो त्याग कर केवल परमेश्वरका ही निर्य
निर्वन्तर अनन्य प्रेमसे चिन्तन करना वेदके तात्पर्यको जानना है ।

और हे अर्जुन-

तस्य	= उम ममाग्वृक्षकी	मनुष्य-	= मनुष्ययोनिमे।
गुण-	{ तीनो गुणरूप	लोके	
प्रवृद्धाः	= { जलके द्वारा बड़ी हुई (एव)	कर्मानु-	= { कर्मके अनुसार
विषय-	= { विषय* भोगरूप	बन्धीनि	= { बाधनेवाली
प्रवालाः	= { कोपलंगवाली	मृलानि	= { अहंता ममता और वाग्वानरूप जडें
जाग्राः	= { जब मनुष्य और निर्वक् आदि योनि-	(अपि) = भी	
	= { रूप जाग्रावें†	अधः = नीचे	
अधः	= नीचे	च = और	
च	= और	(ऊर्ध्वम्) = ऊपर	
ऊर्ध्वम्	= ऊपर सर्वत्र	अनु-	= { नभी लेके मे
प्रसूता	= पोती गई है (नया)	गन्तानि	= { गम हो रही है

अश्वत्थम् = { समारूप पीपल्के वृक्षको	तम् = { उम ससारूप वृक्षको
अव्ययम् = अविनाशी*	यः = जो पुरुष (मूलसहित)
प्राहुः = कहते हैं (तथा)	वेद = तत्त्वसे जानता है
यस्य = जिसके	मः = वह
छन्दांसि = वेद†	वेदवित् = { वेदके तात्पर्यको जाननेवाला है‡
पर्णानि = पत्ते (कहे गये हैं)	

संसारवृक्षका
विस्तार और
उसको असङ्ग
शक्तिसे छेदन
करनेके लिये
कथन ।

अधश्चोर्ध्व प्रसृतास्तस्य शाखा

गुणप्रवृद्धा विषयप्रवालाः ।

अधश्च मूलान्यनुसंततानि

कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके ॥ २ ॥

अध , च, ऊर्ध्वम्, प्रसृता , तस्य, शाखा , गुणप्रवृद्धा ,
विषयप्रवाला , अध , च, मूलानि, अनुसंततानि,
कर्मानुबन्धीनि, मनुष्यलोके ॥ २ ॥

धामसे नीचे ब्रह्मलोकमें वास करनेके कारण हिरण्यगर्भरूप ब्रह्माकी परमेश्वर-
की अपेक्षा अध कहा है और वही इस संसारका विस्तार करनेवाला होनेसे
इसकी मुख्य शाखा है इसलिये इस समारवृक्षको अध शाखावाला कहते हैं ।

* इस वृक्षका मूल कारण परमात्मा अविनाशी है तथा अनादिकालसे
इसकी परम्परा चली आती है इसलिये इस संसारवृक्षको अविनाशी कहते हैं ।

† इस वृक्षकी शाखारूप ब्रह्मासे प्रकट होनेवाले और यज्ञादिक कर्मोंके
द्वारा इस संसारवृक्षकी रक्षा और वृद्धिके करनेवाले एव शोभाको बढ़ानेवाले
होनेसे वेद पत्ते कहे गये हैं ।

‡ भगवान्की योगमायासे उत्पन्न हुआ संसार क्षणमजुर, नाशवान्
और दु खरूप है, इसके चिन्तनको त्याग कर केवल परमेश्वरका ही निरन्तर
निरन्तर अनन्य प्रेमसे चिन्तन करना वेदके तात्पर्यको जानना है ।

और हे अर्जुन-

तस्य	= उम समारवृक्षकी	मनुष्य-	= मनुष्ययोनिमें†
गुण-	{ ताँनो गुणरूप	लोके }	
प्रवृद्धा	= { जलके द्वारा बढी	कर्मानु-	= { कर्मोके अनुमार
	{ हुई (एव)	बन्धीनि	= { बाधनेवाली
विषय-	= { विषय* भोगरूप	मूलानि	= { अहता ममता ओर
प्रवालाः	= { कोपलेवाली		{ वामनारूप जडे
शाखाः	= { द्व मनुष्य ओर	(अपि) = भी	
	{ निर्गन् आदि योनि-	अधः = नीचे	
	{ रूप शाखायें†	च = ओर	
अधः	= नीचे	(ऊर्ध्वम्) = ऊपर	
च	= ओर	अनु-	= { गभी लोकोमे
ऊर्ध्वम्	= ऊपर सर्वत्र	गंततानि	= { व्याप्त हो गयी हैं
प्रसृताः	= फैली हुई हैं (तथा)		

{ , , }

न रूपमस्येह तथोपलभ्यते

नान्तो न चादिर्न च संप्रतिष्ठा ।

अश्वत्थमेनं सुविरूढमूल-

मसङ्गशस्त्रेण दृढेन छित्त्वा ॥ ३ ॥

न, रूपम्, अस्य, इह, तथा, उपलभ्यते, न, अन्त, न,
च, आदि, न, च, संप्रतिष्ठा, अश्वत्थम्, एनम्,
सुविरूढमूलम्, असङ्गशस्त्रेण, दृढेन, छित्त्वा ॥ ३ ॥

परन्तु-

अस्य	= इम ससारवृक्षका	आदिः	= आदि है†
रूपम्	= स्वरूप (जैसा कहा है)	च	= और
तथा	= वैसा	न	= न
इह	= यहा (विचारकालमे)	अन्तः	= अन्त है‡
न	= नहीं	च	= तथा
उप-	= { पाया जाता है*	न	= न
लभ्यते			
(यतः)	= क्योंकि	संप्रतिष्ठा=	{ अच्छी प्रकारसे
न	= न (तो इसका)		{ स्थिति ही है§

* इस ससारका जैसा स्वरूप शास्त्रोंमें वर्णन किया गया है और जैसा देखा सुना जाता है वैसा तत्त्वज्ञान होनेके उपरान्त नहीं पाया जाता, जिस प्रकार आख खुलनेके उपरान्त खम्बका ससार नहीं पाया जाता ।

† इसका आदि नहीं है यह कहनेका प्रयोजन यह है कि इसकी परम्परा कबसे चली आती है इसका कोई पता नहीं है ।

‡ इसका अन्त नहीं है यह कहनेका प्रयोजन यह है कि इसकी परम्परा कबतक चलती रहेगी इसका कोई पता नहीं है ।

§ इसकी अच्छी प्रकार स्थिति भी नहीं है यह कहनेका यह प्रयोजन है कि वास्तवमें यह क्षणभंगुर और नाशवान् है ।

(अतः) = इसलिये

एनम् = इस

मुविरूढ-
मूलम् = { अहता ममता
और वासनारूप
अनि दृढ मूलो-
वाले

अश्वत्थम् = { ममारूप
पीपलके वृक्षको

दृढेन = दृढ

असङ्ग- = { वैराग्यरूप*

अस्त्रेण = { अस्त्रद्वारा

छित्त्वा = काटकरा

ततः पदं तत्परिमार्गितव्यं

यस्मिन्गता न निवर्तन्ति भूयः ।

तमेव चाद्यं पुरुष प्रपद्ये

यतः प्रवृत्तिः प्रसृता पुराणी ॥ ४ ॥

तत , पदम् , तत् , परिमार्गितव्यम् , यस्मिन् , गता , न ,
निवर्तन्ति , भूय , तम् , एव च , आद्यम् , पुरुषम् , प्रपद्ये .

यत , प्रवृत्तिः प्रसृता , पुराणी ॥ ४ ॥

ततः = उमके उपरान्त

(कि)

तत् = उम

यस्मिन्

= जिसमें

पदम् = { परमपदरूप
परमेश्वरको

गताः

= गये हुए पद

भूय

= फिर

परिमार्गि- = अर्च्य प्रवृत्ति

न

= (निवर्तन्ति)

तव्यम् = (ग्याजना चाहिये)

निवर्तन्ति

= (लौटते हैं)

परमपदकी
प्राप्तिके निमित्त
ग्याजानुके शरण
पानेके लिये
श्रवण ।

च	= और	तम्	= उस
यतः	= जिम परमेश्वरसे (यह)	एव	= ही
पुराणी	= पुरातन	आद्यम्	= आदि
प्रवृत्तिः	= { समारवृक्षकी प्रवृत्ति	पुरुषम्	= पुरुष नारायणके (में)
प्रसृता	= { विस्तारको प्राप्त हुई है	प्रपद्ये	= शरण हूँ (इस प्रकार दृढ़ निश्चय करके)

भगवत्प्राप्तिवाले
पुरुषोंके लक्षण ।

निर्मानमोहा जितसङ्गदोषा
अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः ।
द्वन्द्वैर्विमुक्ताः सुखदुःखसंज्ञै-
र्गच्छन्त्यमूढाः पदमव्ययं तत् ॥ ५ ॥

निर्मानमोहा, जितसङ्गदोषा, अध्यात्मनित्या,
विनिवृत्तकामा, द्वन्द्वै, विमुक्ता, सुखदुःखसंज्ञै,
गच्छन्ति, अमूढा, पदम्, अव्ययम्, तत् ॥ ५ ॥

निर्मान- मोहाः	= { नष्ट हो गया है मान और मोह जिनका (तथा)	विनिवृत्त- कामाः	= { अच्छी प्रकारसे नष्ट हो गयी है कामना जिनकी (ऐसे त्रे)
जितसङ्ग- दोषाः	= { जीत लिया है आसक्तिरूप दोष जिनने (और)	सुखदुःख- संज्ञै	= { सुखदुःख नामक
अध्यात्म- नित्याः	= { परमात्माके स्व- रूपमें है निरन्तर स्थिति जिनकी (तथा)	द्वन्द्वैः विमुक्ताः अमूढाः तत्	= { द्वन्द्वोंसे विमुक्त हुए = शानीजन = उस

अव्ययम् = अविनाशी

पदम् = परमपदको

गच्छन्ति = प्राप्त होते हैं

परमपदके लक्षण
न तद्भासयते सूर्यो न जशाङ्को न पावकः ।

यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम ॥६॥

न, तत्, भासयते, सूर्य, न, जशाङ्क, न, पावक,
नत्, गत्वा, न, निवर्तन्ते, तत्, धाम, परमम्, मम ॥ ६ ॥

और-

तत् = { उम(स्वयम् प्रकाश-
मय परमपदको) (भासयते) = { प्रकाशित कर
मकता है (तथा)

न = न

यत् = जिन परमपदको

सूर्य = सूर्य

गत्वा = प्राप्त होकर (मनुष्य)

भासयते = { प्रकाशित कर
मकता है

न निवर्तन्ते = { पीछे नमारे
नहीं आते हैं

न = न

तत् = वही

जशाङ्क = चन्द्रमा (और)

मम = मेरा

न = न

परमम् = परम

पावक = अग्नि ती

धाम = धाम *

ममेवांशो जीवलोके जीवभूतः मनातनः ।

मम एव अंशः

मनःपश्यान्न्द्रियाणि प्रवृत्तिस्थानि कर्षति ॥ ७ ॥

मम एव अंशः, जीवलोके जीवभूतः मनातनः

मनःपश्यान्न्द्रियाणि प्रवृत्तिस्थानि कर्षति ॥ ७ ॥

और है -

जीवलोके = मन मेरे

मम = मेरा

जीवभूत = या जीवात्मा

एव = ही

सनातनः	= सनातन	मनः	= { मनसहित
अंशः	= अंश है*	पणानि	= { पाचो
	(और वही इन)	इन्द्रियाणि	= इन्द्रियोक्तो
प्रकृति-	= { त्रिगुणमयी	कर्षति	= { आकर्षण
स्थानि	= { मायामे स्थित हुई		= { करता है

वायुके दृष्टान्तसे शरीरं यदवाप्नोति यच्चाप्युत्क्रामतीश्वरः ।

जीवात्मा के गमनका विषय। गृहीत्वैतानि संयाति वायुर्गन्धानिवाशयात् ॥ ८ ॥

शरीरम्, यत्, अवाप्नोति, यत्, च, अपि, उत्क्रामति, ईश्वर ,
गृहीत्वा, एतानि, संयाति, वायु , गन्धान्, इव, आशयात् ॥ ८ ॥

कैसे कि—

वायुः	= वायु	उत्क्रामति	= त्यागना है
आशयात्	= गन्धके स्थानमे	(तस्मात्)	= उससे
गन्धान्	= गन्धको	एतानि	= { इन मनसहित
इव	= जैसे		= { इन्द्रियोक्तो
	(ग्रहण करके ठे	गृहीत्वा	= ग्रहण करके
	जाता है वैसे ही)	च	= फिर
ईश्वरः	= { देहादिकोंका	यत्	= जिस
	= { स्वामी जीवात्मा	शरीरम्	= शरीरको
अपि	= भी	अवाप्नोति	= प्राप्त होता है
यत्	= { जिस पहिले	(तस्मिन्)	= उसमे
(शरीरम्)	= { शरीरको	संयाति	= जाता है

* जैसे विभागरहित स्थित हुआ भी महाकाश घटोंमें पृथक् पृथक्की भाति प्रतीत होता है वैसे ही सब भूतोंमें एकीरूपसे स्थित हुआ भी परमात्मा पृथक् पृथक्की भाति प्रतीत होता है इसीसे देहमें स्थित जीवात्माको मगवान्ने अपना सनातन अंश कहा है ।

मनश्चन्द्रिणो- श्रोत्रं चक्षुः स्पर्शनं च रसनं घ्राणमेव च ।

मन जीवात्माके
चन्द्रियमेव नरा
वर्तते ।

अधिष्ठाय मनश्चायं विषयानुपसेवते ॥६॥

श्रोत्रम्. चक्षुः, स्पर्शनम्, च, रसनम्. घ्राणम्, एव, च,
अधिष्ठाय मन, च, अयम्, विषयान्, उपसेवते ॥९॥

और उम शरीरमे स्थित हुआ-

अयम्	= यह जीवात्मा	च	= और
श्रोत्रम्	= श्रोत्र	मन	= मनको
चक्षुः	= चक्षु	अधिष्ठाय	= { आश्रय करके अर्गत इन मन्त्रके मन्त्रारेमे
स्पर्शनम्	= स्पर्शवाका		
च	= तथा	एव	= ही
रसनम्	= रसना	विषयान्	= विषयोंको
घ्राणम्	= घ्राण	उपसेवते	= सेवन करता है

उत्क्रामन्त स्थित वापि भुञ्जान वा गुणान्वितम् ।

विमृष्टा नानुपश्यन्ति पश्यन्ति ज्ञानचक्षुषः ॥१०॥

उत्क्रामन्तम् स्थितम् वा अपि भुञ्जानम्, वा गुणान्वितम्
विमृष्टा, न अनुपश्यन्ति पश्यन्ति, ज्ञानचक्षुषः ॥१०॥

पर-तु-

उत्त-	{ शरीर सम्पन्न	वा	
प्रगमन्तम्	= { जाते सम्पन्न	गुणा-	
वा	अयम्	न्वितम्	
स्थितम्	{ शरीरमे स्थित	अपि	
	{ विमृष्टा जाते	विमृष्टा	
भुञ्जानम्	{ भुञ्जान	न	
	{ ज्ञान चक्षुषः	अनुपश्यन्ति	

ज्ञान-चक्षुषः = { ज्ञानरूप | (ज्ञानीजन ही)
नेत्रोंवाले } पश्यन्ति = तत्त्वसे जानते हैं

[„] यतन्तो योगिनश्चैनं पश्यन्त्यात्मन्यवस्थितम् ।

यतन्तोऽप्यकृतात्मानो नैनं पश्यन्त्यचेतसः ॥

यतन्त , योगिन , च , एनम् , पश्यन्ति , आत्मनि , अवस्थितम् ,

यतन्त , अपि , अकृतात्मान , न , एनम् , पश्यन्ति , अचेतसः । ११ ।

क्योंकि—

योगिनः = योगीजन (भी) ।
आत्मनि = अपने हृदयमें
अवस्थितम् = स्थित हुए
एनम् = इस आत्माको
यतन्तः = यत्र करते हुए ही
पश्यन्ति = तत्त्वसे जानते हैं
च = और

अकृता-
त्मानः = जिन्होंने अपने
अन्त करणको
शुद्ध नहीं किया
है (ऐसे)
अचेतसः = अज्ञानीजन (तो)
यतन्तः = यत्र करते हुए
अपि = भी
एनम् = इस आत्माको
न = नहीं
पश्यन्ति = जानते हैं

परमेश्वरके तेज- यदादित्यगतं तेजो जगद्भासयतेऽखिलम् ।
की महिमा ।

यच्चन्द्रमसि यच्चाग्नौ तत्तेजो विद्धि मामकम् ॥ १२ ॥

यत् , आदित्यगतम् , तेज , जगत् , भासयते , अखिलम् ,

यत् , चन्द्रमसि , यत् , च , अग्नौ , तत् , तेज , विद्धि , मामकम् । १२ ।

और हे अर्जुन—

यत् = जो
तेजः = तेज

आदित्य-
गतम् = { सूर्यमें स्थित
हुआ

अखिलम् = सपूर्ण	यत् = जो (तेज)
जगत् = जगत्को	अग्नौ = अग्निमे (स्थित है)
भामयते = प्रकाशित करना है	तत् = उसको (त)
च = तथा	मामकम् = मेरा ही
यत् = जो (तेज)	तेज = तेज
चन्द्रमसि = चन्द्रमामे स्थित है	विद्धि = जान
(और)	

पूर्ण गगनो
गामाविश्य च भूतानि धारयाम्यहमोजसा ।

पुष्णामि चौषधीः सर्वाः सोमो भूत्वा रसात्मकः ॥

गाम्, आविश्य, च, भूतानि, धारयामि अहम्, ओजसा,
पुष्णामि, च, ओषधी, सर्वा, सोम, भूत्वा, रसात्मक ॥ १३ ॥

च = और	रसात्मकः = { रसस्वरूप अर्गट अमृतमय
अहम् = मैं (ही)	सोम = चन्द्रमा
गाम् = पृथिवीमें	भूत्वा = होकर
आविश्य = प्रवेश करके	सर्वा = नदृश
ओजसा = अपनी शक्तिसे	ओषधी = औषधियाँ
भूतानि = सब भूतोंको	पुष्णामि = पचाना
धारयामि = धारण कराना	
च = और	

अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिना देतमाश्रितः ।

प्राणापानममापुतः पचायन्नं चतुर्विधम् ॥ १४ ॥

तथा—

अहम्	= मैं (ही)	प्राणापान-	{ प्राण और
प्राणिनाम्	= सब प्राणियोंके	समायुक्तः	{ अपानसे
देहम्	= शरीरमे		{ युक्त हुआ
आश्रितः	= स्थित हुआ	चतुर्विधम्	= चार * प्रकारके
वैश्वानरः	= वैश्वानर अग्निरूप	अन्नम्	= अन्नको
भूत्वा	= होकर	पचामि	= पचाता हूँ

प्रभावमहिम्न
भगवान् के
स्वरूपका कथन।

सर्वस्य चाह हृदि संनिविष्टो
मत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनं च ।
वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यो
वेदान्तकृद्वेदविदेव चाहम् ॥ १५ ॥

सर्वस्य, च, अहम्, हृदि, संनिविष्ट, मत्त, स्मृति,
ज्ञानम्, अपोहनम्, च, वेदै, च, सर्वै, अहम्, एव,
वेद्य, वेदान्तकृत्, वेदवित्, एव, च, अहम् ॥ १५ ॥

च	= और	(तथा)
अहम्	= मैं (ही)	मत्तः = मेरेसे ही
सर्वस्य	= सब प्राणियोंके	स्मृतिः = स्मृति
हृदि	= हृदयमें	ज्ञानम् = ज्ञान
संनिविष्टः	= { अन्तर्यामी- रूपसे स्थित हूँ	च = और

* मक्ष्य, भोज्य, लेह्य और चाप्य ऐसे चार प्रकारके अन्न होते हैं, उनमें जो चबाकर खाया जाता है वह मक्ष्य है जैसे रोटी आदि और जो निगला जाता है वह भोज्य है जैसे दूध आदि तथा जो चाटा जाता है वह लेह्य है जैसे चटनी आदि और जो चूसा जाता है वह चोप्य है जैसे उख आदि।

अपोहनम् = अपोहन*	वेद्य = { जाननेके
(भवति) = होता है	योग्य + इ (तथा)
च = और	वेदान्तकृत् = वेदान्तका कर्ता
मयै = सब	च = और
वेदः = वेदोद्धार	वेदविन् = { वेदोको
अहम् = मैं	जाननेवाला भी)
एव = ही	अहम् = मे
	एव = ही (इ)

मैर = - द्वाविमौ पुरुषौ लोके अक्षश्चाक्ष एव च ।
 क्षरः सर्वाणि भूतानि कृत्स्न्याऽक्ष उच्यते ॥ १६ ॥
 न। मा पुरुषा लोके क्षर च अक्ष एव च
 क्षर सर्वाणि भूतानि कृत्स्न्या अक्ष उच्यते ॥ १६ ॥

तथा हि अजन-

लोके	- सम समारम्भ	एव	= ही
क्षरः	- नाशवात्	सर्वा	
च	आर	द्रो	
अक्षरः	- अविनाशी	पुरुषो	

सर्वाणि = सपूर्ण

भूतानि = { भूतप्राणियोंके
शरीर तो

क्षरः = नाशवान्

च

= और

ऋद्यः = जीवान्मा

अक्षरः = अविनाशी

उच्यते = कहा जाता है

पुरुषोत्तमके

स्वरूपका कथन।

उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः ।

यो लोकत्रयमाविश्य विभर्त्यव्यय ईश्वरः ॥१७॥

उत्तम, पुरुष, तु, अन्य, परमात्मा, इति, उदाहृतः,

य, लोकत्रयम्, आविश्य, विभर्ति, अव्यय, ईश्वर ॥१७॥

तथा उन दोनोंमें-

उत्तमः = उत्तम

पुरुषः = पुरुष

तु = तो

अन्यः = अन्य ही है

यः = जो

लोकत्रयम् = तीनों लोकोंमें

आविश्य = प्रवेश करके

विभर्ति = { सवका धारण
पोषण करता है
(एव)

अव्ययः = अविनाशी

ईश्वरः = परमेश्वर (और)

परमात्मा = परमात्मा

इति = ऐसे

उदाहृतः = कहा गया है

चोत्तमः ।

पुरुषोत्तमकी
महिमा ।

यस्मात्क्षरमतीतोऽहमक्षरादपि चोत्तमः ।

अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः ॥१८॥

यस्मात्, क्षरम्, अतीत, अहम्, अक्षरात्, अपि, च, उत्तम,
अत, अस्मि, लोके, वेदे, च, प्रथित, पुरुषोत्तम ॥१८॥

यस्मात् = क्योंकि
अहम् = मैं

क्षरम् = { नाशवान् जडवर्ग
क्षेत्रसे तो

अतीतः	= सर्वथा अतीतः ह	लोके	= लोकमे
च	= और (मायामें स्थित)	च	= और
अक्षरात्	= { अविनाशी जीवान्मासे	वेदे	= वेदमे (भी)
अपि	= भी	पुरुषोत्तमः	= पुरुषोत्तम (नाममे)
उत्तमः	= उत्तमः ह	प्रथितः	= प्रसिद्ध
अतः	= इसलिये	अस्मि	= ह

यो मामेवमगमृष्टो जानाति पुरुषोत्तमम् ।
स सर्वविद्वज्जति मां सर्वभावेन भाग्न ॥१६॥

य. माम् एवम्. अगमृष्ट जानाति पुरुषोत्तमम्
न सर्वविद्वं भजति, माम्, सर्वभावेन, भाग्न ॥१६॥

भाग्न	= २ भाग्न	म.	वद
एवम्	= इस प्रकार तत्त्वमे	सर्वविद्वं	सर्वविद्वं
यः	= जो	सर्वभावेन	(सर्व प्रकाशने)
अगमृष्टः	= जानाती पुरुष	भाग्न	(भाग्न)
माम्	= मेरे को	माम्	(माम्)
पुरुषोत्तमम्	पुरुषोत्तम	भजति	(भजति)
जानाति	= जानता ह		

इति शुद्धतमं शास्त्रमिदमुक्तं सदानन्द ।

एतदबुद्धं वा बुद्धिसान्द्रात्कृतं कृतं न भवति ॥१६॥

इति = ऐसे
इदम् = यह

गुह्यतमम् = { अति रहस्ययुक्त
गोपनीय

शास्त्रम् = शास्त्र
मया = मेरे द्वारा

उक्तम् = कहा गया

एतत्

बुद्ध्या

बुद्धिमान्

च

कृतकृत्यः

स्यात्

= इसको

= { तत्त्वमे जान-
कर (मनुष्य)

= ज्ञानवान्

= और

= कृतार्थ

= हो जाना है-

अर्थात् उसको और कुछ भी करना शेष नहीं रहता ।

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतामूपनिषत्सु ब्रह्मविद्याया

योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे पुरुषोत्तम-

योगो नाम पञ्चदशोऽध्यायः ॥१५॥

इस अध्यायमें भगवान् ने अपना परम गोपनीय प्रभाव भली प्रकारसे कहा है । जो मनुष्य उक्त प्रकारसे भगवान् को सर्वोत्तम समझ लेता है फिर उसका मन एक क्षण भी भगवान् के चिन्तनका त्याग नहीं कर सकता । क्योंकि जिस वस्तुको मनुष्य उत्तम समझता है उसीमें उसका प्रेम होता है और जिसमें प्रेम होता है उसीका चिन्तन होता है । अतएव सबका मुख्य कर्तव्य है कि भगवान् के परम गोपनीय प्रभावको भली प्रकार समझनेके लिये नाशवान् क्षणभङ्गुर ससारकी आसक्तिका सर्वथा त्याग करके एव परमात्माके शरण होकर भजन और संसृष्टकी ही विशेष चेष्टा करें ।

हरि ॐ तत्सत् हरि ॐ तत्सत् हरि ॐ तत्सत्

ॐ श्रीपरमात्मने नमः

अथ षोडशोऽध्यायः

प्रधान विषय— मे ५ तक फलमहित ऋषी और आसुरी मपदावा कथन । (६-२०) आसुरी मपदावालोंके लक्षण और उनकी अधोगतिका कथन । (२१-२४) शाम्बत्रिपरीत आचरणोंको त्यागने और शाम्बके अनुकूल आचरण करनेके लिये प्रेरणा ।

श्रीभगवानुवाच

अभय सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः ।

दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम् ॥ १ ॥

अभयम्, सत्त्वसंशुद्धिः, ज्ञानयोगव्यवस्थितिः,

दानम्, दमः, च, यज्ञः, च, स्वाध्यायः, तपः, आर्जवम् ॥ १ ॥

उत्तरे उपरान्त श्रीकृष्ण भगवान् फिर द्वापरे, १-२० 'इति मपदा तिन पुरुषोंको प्राप्त हैं तथा जिनको आसुरी मपदा प्राप्त है उनके लक्षण पृथक् पृथक् कहता है उनमेंसे—

अभयम् = नर्वथा भयका अभाव

सत्त्वसंशुद्धिः = अन्तःकरणकी अच्छी प्रवृत्ति

ज्ञानयोगः = तत्त्वज्ञानकी विषय-प्राप्त्यादि विधि

व्यवस्थितिः = व्यवस्थितिः

च = और

दानम् = दानद्वारा (२१)

दमः	= इन्द्रियोंका दमन
यज्ञः	= { भगवत्पूजा और अग्निहोत्रादि उत्तम कर्मोंका आचरण (एव)
स्वाध्यायः	= { वेद शास्त्रोंके पठनपाठनपूर्वक भगवत्के नाम और गुणोंका कीर्तन
च	= तथा
तपः	= स्वधर्मपालनके लिये कष्ट महन करना (एव)
आर्जवम्	= { शरीर और इन्द्रियोंके महित अन्न करणकी सरलता

दैवी सप्तशके
अहिंसा आदि
११ गुणोंका
कथन ।

अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम् ।

दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलम् ॥ २ ॥

अहिंसा, सत्यम्, अक्रोध, त्याग, शान्ति, अपैशुनम्,

दया, भूतेषु, अलोलुप्त्वं, मार्दवं, ह्री, अचापलम् ॥ २ ॥

तथा—

अहिंसा	= { मन वाणी और शरीरसे किसी प्रकार भी किसीको कष्ट न देना (तथा)
सत्यम्	= यथार्थ और प्रिय भाषण *
अक्रोधः	= अपना अपकार करनेवालेपर भी क्रोधका न होना
त्यागः	= कर्ममें कर्तापनके अभिमानका त्याग (एव)
शान्तिः	= { अन्न करणकी उपरामता अर्थात् चित्तकी चञ्चलताका अभाव (और)
अपैशुनम्	= किसीकी भी निन्दादि न करना (तथा)
भूतेषु	= सब भूतप्राणियोंमें

* अन्न करण और इन्द्रियोंके द्वारा जैसा निश्चय किया हो वैसेका
वैसा ही प्रिय शब्दोंमें कहनेका नाम सत्यभाषण है ।

दया = हेतुरहित दया

अलोलुप्त्वं = { इन्द्रियोक्ता विपरीते माय नयोग होनेपर भी
आसक्तिका न होना (और)

मार्दवं = कोमलता (तथा)

हीः = लोक और शास्त्रमे विरुद्ध आचरणमे लज्जा (और)

अचापलम् = व्यर्थ चेष्टाओंका अभाव

तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहं नातिमानिता ।

भवन्ति मपदं दैवीमभिजातस्य भारत ॥ ३ ॥

तेज . क्षमा . धृति , शौचम् अद्रोह नातिमानिता

भवन्ति . मपदम् , दैवीम् , अभिजातस्य भारत ॥ ३ ॥

तथा-

तेजः = तेजः*

क्षमा = क्षमा

धृतिः = धैर्य

(और)

शौचम् = { वातर भीतरकी
शुद्धि (एव)

अद्रोहः - { विस्मीमे भी शत्रु
मात्रका न होना
(और)

नाति-
मानिता = { अग्रमे पू-जनके
अभिमानका अभाव
(यह नष्ट ते)

भारत = अर्जुन

दैवीम् = दैवी

मपदम् = मपदम्

अभि-
जातस्य = { अग्रमे पू-जनके
अभिमानका अभाव

भवन्ति

सक्षेपमे आसुरी दम्भो दर्पोऽभिमानश्च क्रोधः पारुष्यमेव च ।

सपदाका मयन ।

अज्ञानं चाभिजातस्य पार्थ संपदमासुरीम् ॥४॥

दम्भ , दर्प , अभिमान , च, क्रोध , पारुष्यम्, ण्व, च,

अज्ञानम्, च, अभिजातस्य, पार्थ, सपदम्, आसुरीम् ॥४॥

और-

पार्थ	= हे पार्थ	पारुष्यम् = कठोर वाणी
दम्भः	= पाखण्ड	(एव)
दर्पः	= घमण्ड	अज्ञानम् = अज्ञान
च	= और	एव = भी (यह सब)
अभिमानः	= अभिमान	आसुरीम् = आसुरी
च	= तथा	संपदम् = सपदाको
क्रोधः	= क्रोध	अभि- = { प्राप्त हुए पुरुषके
च	= और	जातस्य = { (लक्षण है)

दैवी और आसुरी दैवी संपद्विमोक्षाय निबन्धाय आसुरी मता ।

सपदाका फल ।

मा शुचः संपद दैवीमभिजातोऽसि पाण्डव ॥५॥

दैवी, सपत्, विमोक्षाय, निबन्धाय, आसुरी, मता,

मा, शुच , सपदम्, दैवीम्, अभिजात , असि, पाण्डव ॥५॥

उन दोनों प्रकारकी सपदाओंमें-

दैवी संपत् = दैवी सपदा (तो)	मा शुचः = शोक मत कर
विमोक्षाय = मुक्तिके लिये (और)	(यतः) = क्योंकि (त्)
आसुरी = आसुरी (सपदा)	दैवीम् = दैवी
निबन्धाय = बाधनेके लिये	सपदम् = सपदाको
मता = मानी गई है	अभिजातः = प्राप्त हुआ
(अतः) = इसलिये	असि = है
पाण्डव = हे अर्जुन (त्)	

विस्तरने द्वौ भूतसर्गौ लोकेऽस्मिन्दैव आसुर एव च ।
 द्वौ विस्तरशः प्रोक्त आसुरं पार्थ मे शृणु ॥६॥
 द्वौ, भूतसर्गौ, लोके, अस्मिन्, दैवः, आसुर, एव च,
 द्वौ विस्तरशः, प्रोक्त, आसुरम्, पार्थ, मे, शृणु ॥६॥
 आर-

पार्थ	= हे अर्जुन	दैवः	= देवोंका स्वभाव
अस्मिन्	= इस	एव	= ही
लोके	= लोकमें	विस्तरशः	= विस्तारपूर्वक
भूतसर्गौ	= भूतोंके स्वभाव	प्रोक्तः	= कहा गया है
द्वौ	= दो प्रकारके	(अतः)	= इसलिए (अब)
(मर्ता)	= माने गये हैं (एक तो)		[असुरोंके
दैव	= देवोंके जैसा	आसुरम्	= स्वभावको (भी)
च	= और (दूसरा)		[विस्तारपूर्वक
आसुरः	= असुरोंके जैसा	मे	= मेरेमे
(उनमें)		शृणु	= सुन

प्रवृत्ति च निवृत्ति च जना न विदुर्गन्तुः ।
 न शौचं नापि चाचारो न मृत्युतेषु विद्यते ॥ ७ ॥
 प्रवृत्तिम् च, निवृत्तिम्, च जना, न विदुः, गन्तुः
 न शौचम्, न, अपि, च आचारः न, न मृत्युतेषु विद्यते ॥ ७ ॥

न	= नदी	न	= न
विदुः	= जानने हे (जगत्पि)	आचारः	= भेष आचरण है
नेषु	= उनमें	न	= और
न	= न (नो)	न	= न
गोचम्	= (नाजर भी नहीं =) देखि हे	मत्तम्	= ग यभाषण
		अपि	ही
		निगते	= है

अमत्यमप्रतिष्ठ ते जगदाहुरनीश्वरम् ।

अपरस्परमंभूत किमन्यत्कामहेतुकम् ॥८॥

अमत्यम्, अप्रतिष्ठम्, ते, जगत, आह, अनीश्वरम्,
अपरस्परमंभूतम्, किम्, अन्यत्, कामहेतुकम् ॥८॥

तथा -

ते	= { ये आसुरी प्रकृति- वाले मनुष्य	अपरस्पर- मंभूतम्	= { अपने आप स्त्री- पुरुषके मयोगमे उत्पन्न हुआ है
आहुः	= कहते हैं (कि)	(अतः)	= इसलिए
जगत्	= जगत्	काम-	= { केवल भोगोको = { भोगनेके लिये
अप्रतिष्ठम्	= आश्रयरहित (और,	हेतुकम्	= ही (है)
असत्यम्	= सर्वथा झूठा (एव)	(एव)	= ही (है)
अनीश्वरम्	= बिना ईश्वरके	अन्यत्	= इसके सिवाय और
		किम्	= क्या है

आसुरी प्रकृति-
वालोंके दुराचार-
का वर्णन ।

एतां दृष्टिमवष्टभ्य नष्टात्मानोऽल्पबुद्धयः ।

प्रभवन्त्युग्रकर्माणः क्षयाय जगतोऽहिताः ॥९॥

एताम्, दृष्टिम्, अवष्टभ्य, नष्टात्मान, अल्पबुद्धय,
प्रभवन्ति, उग्रकर्माण, क्षयाय, जगत्, अहिता ॥९॥

इस प्रकार-

एताम्	= दम्	अहिताः = { सबका अपकार करनेवाले
दृष्टिम्	= मिथ्या ज्ञानको	
अवष्टभ्य	= अवलम्बन करके	उग्र- कर्माणः } = क्रूरकर्मा मनुष्य
नष्टान्मानः	= { नष्ट हो गया है स्वभाव जिनका (तथा जगतः = जगतका	
अल्पबुद्धयः	= { मन्द हैं बुद्धि क्षयाय	= { नाश करनेके लिये ही
	= { जिनकी (ऐसे वे)	
	प्रभवन्ति	= उत्पन्न होते हैं

॥] काममाश्रित्य दुष्पूरं दम्भमानमदान्विताः ।

मोहाद्गृहीत्वासद्राहान्प्रवर्तन्तेऽशुचिब्रताः॥ १०॥

कामम्, आश्रित्य, दुष्पूरम् दम्भमानमदान्विता,

मोहात् गृहीत्वा, अमद्राहान्, प्रवर्तन्ते अशुचिब्रता ॥ १०॥

और वे मनुष्य-

दम्भमान-	= { दम्भ मान और अन-
मदान्विता	
दुष्पूरम्	= { मद्मे युक्त हुए विरमी प्रकार की गृहीत्वा
कामम्	= { न पूर्ण होनेवाली कामनाओका अशुचि-
आश्रित्य	
	- आसरा लेकर ब्रता
	(तथा

मोहात् = अज्ञानसे प्रवर्तन्ते =

चिन्तामपरिमेयां च प्रलयान्तामुपाश्रिताः ।

कामोपभोगपरमा एतावदिति निश्चिताः ॥११॥

चिन्तान्, अपरिमेयाम् च, प्रलयान्ताम्, उपाश्रिताः,

कामोपभोगपरमा, एतावत्, इति, निश्चिता ॥११॥

तथा ये-

प्रलयान्ताम् =	{ मरणपर्यन्त रहने वाली	कामोप- भोग- परमा.	{ विषय भोगोंके भोगनेमें तत्पर हूँ (हूँ)
अपरिमेयाम् =	अनन्त		
चिन्ताम् =	चिन्ताओंको	एतावत् =	{ इतना मात्र ही आनन्द है
उपाश्रिताः -	{ आश्रय किया हुँ	इति =	ऐसे
च -	आर	निश्चिताः =	माननेवाले हैं

॥ १] आशापाशशतैर्वद्धाः कामक्रोधपरायणाः ।

ईहन्ते कामभोगार्थमन्यायेनार्थसञ्चयान् ॥१२॥

आशापाशशतैः, बद्धाः, कामक्रोधपरायणाः,

ईहन्ते, कामभोगार्थम्, अन्यायेन, अर्थसञ्चयान् ॥१२॥

इसलिये-

आशा- पाशशतैः	= { आशारूप सैकड़ों फासियोंसे	काम- भोगार्थम् =	{ विषय भोगोंकी पूर्तिके लिये
बद्धाः	= बंधे हुए (और)	अन्यायेन =	अन्यायपूर्वक
कामक्रोध- परायणाः	= { काम क्रोधके परायण हुए	अर्थ- सञ्चयान् =	{ धनादिक बहुतसे पदार्थोंको (सग्रह करनेकी)
		ईहन्ते =	चेष्टा करते हैं

इदमद्य मया लब्धमिमं प्राप्स्ये मनोरथम् ।
इदमस्तीदमपि मे भविष्यति पुनर्धनम् ॥१३॥
इदम्, अद्य, मया, लब्धम्, इमम्, प्राप्स्ये मनोरथम्,
इदम्, अस्ति, इदम् अपि, मे, भविष्यति, पुन . धनम् ॥१३॥
पुन ।

इदमद्य मया लब्धमिमं प्राप्स्ये मनोरथम् ।

इदमस्तीदमपि मे भविष्यति पुनर्धनम् ॥१३॥

इदम्, अद्य, मया, लब्धम्, इमम्, प्राप्स्ये मनोरथम्,

इदम्, अस्ति, इदम् अपि, मे, भविष्यति, पुन . धनम् ॥१३॥

और इन पुरुषोंके विचार इस प्रकारके होते हैं कि-

मया	= मैंने	मे	= मेरा पाम
अद्य	= आज	इदम्	= यह इतना)
इदम्	= यह (तो)	धनम्	= धन
लब्धम्	= पाया है (आर	अग्नि	= ह (आर)
इमम्	= इस	पुनः	= फिर
मनोरथम्	= मनोरथको	अपि	= भी
प्राप्स्ये	= प्राप्त होऊंगा	इदम्	= यह
	(तथा)	भविष्यति	= होगा

१ अग्रा मया हतः अत्रुहनिधयं चापगनपि ।

इद्वगोऽहमह भोगी मिच्छाऽह वलवान्दुर्ग्वी ॥१४॥

अया, मया हतः अत्र, हनिधयं च अत्र, इद्वगो, अहम अहम भोगी, मिच्छा अह, वलवान्, दुर्ग्वी,

तथा-

अयो	यह	हनिधये	यह
अत्र	- अत्र	अहम्	
मया	मैंने द्वारा	इद्वगः	
हतः	मार मार (ओर	च	
अपगन	हमने पाइलोव,	भोगी	
अपि	भी		
अहम्	मैं	अहम्	

मिदं = (मत्र मिद्विद्येमे वलवान् = वलवान् (और)
 = (युक्त (एव) सुखी = सुखी इ

१ आद्योऽभिजनवानस्मि कोऽन्योऽस्ति सदृशो मया
 यक्ष्ये दास्यामि मोदिष्ये इत्यज्ञानविमोहिताः ॥
 आका, अभिजनवान्, अस्मि, क, अन्य, अग्नि, मज्ज,
 मया, यक्ष्ये, दास्यामि, मोदिष्ये, इति, अज्ञानविमोहिता ॥१५॥

नगा ने-

आद्यः = वडा तनवान् अस्ति = तं (मे)
 (और) यक्ष्ये = यज्ञ करणा
 अभि- } = वडे कुटुम्बपाला दास्यामि = दान देऊगा
 जनवान् }
 अस्मि = इ मोदिष्ये = { हर्षको प्राप्त
 मया = मे होऊगा
 सदृशः = समान इति = इम प्रकारके
 अन्यः = दृमग अज्ञान- = { अज्ञानमे
 कः = कौन विमोहिता = { मोहित हैं

आनुरो प्रकृति
 बालोंको गोर
 नरककी प्राप्ति।

अनेकचित्तविभ्रान्ता मोहजालसमावृताः ।
 प्रसक्ताः कामभोगेषु पतन्ति नरकेऽशुचौ ॥१६॥
 अनेकचित्तविभ्रान्ता , मोहजालसमावृता ,
 प्रसक्ता , कामभोगेषु, पतन्ति, नरके, अशुचौ ॥१६॥
 इसलिये वे-

अनेक- = { अनेक प्रकारसे
 चित्त- = { भ्रमित हुए
 विभ्रान्ताः = { चित्तवाले
 (अज्ञानीजन)
 मोहजाल- = { मोहरूप
 समावृताः = { जालमे फसे
 हुए (एव)

कामभोगेषु = विषयभोगेभ्यः अशुचां = महान् अपवित्र

प्रसक्ताः = { अत्यन्त नरके = नरकमे
आमक्तं हुण पतन्ति = गिरने है

प्रवृत्ति- आत्मसंभाविताः स्तब्धा धनमानमदान्विताः ।

रक्षण । यजन्ते नामयज्ञैस्ते दम्भेनाविधिपूर्वकम् ॥१७॥

आत्मसंभाविता स्तब्धा धनमानमदान्विता .

यजन्ते नामयज्ञैस्ते, दम्भेन अविधिपूर्वकम् ॥१७॥

तथा-

ते	= व	अविधि-	= { शाल्विधिने
आत्म-	{ अपने आपका	पूर्वकम्	{ रहित
संभाविताः	= { ही श्रेष्ठ	नामयज्ञै	{ विष्णु नाम-
	{ माननेवाले		{ मन्त्र पढ़ने-
स्तब्धाः	= घमण्टी पुरुष		{ दान
धनमान-	{ धन और	दम्भेन	{ दम्भेन
मदान्विताः	= { मानके, मन्त्र	यजन्ते	{ यजन्ते
	{ युक्त हुए		

अहंकार बलं दर्पं कामं क्रोधं च मश्रिताः ।

सामात्मपरदेहेषु प्रद्विषन्तांऽभ्युदयया ॥१८॥

च	= ओर	आत्म-	= [अग्ने और
क्रोधम्	= क्रो गदिते	परदेहेषु	= [रुग्नेके
मंथिता	= पराया हन (पन)		[जरीरमें (स्थित)
अभ्य-	= { रुग्नेकी निन्दा	माम्	= मुझ अन्तर्यामीसे
मयकाः	= { करनेवाले पुरुष	प्रक्षिपन्त	= ड्रेप करने वाले हैं

ड्रेप करने वाले नानह द्विपतः क्रूरात्मयोगेषु नराधमान् ।
 नराधमों को क्षिपाम्यजस्रमशुभानासुरीष्वेव योनिषु ॥१६॥
 आसुरः यानिका तान्, अहम् द्विपत, क्रूरात् समारम्, नराधमान्,
 पाप्मि । क्षिपामि, अजस्रम्, अशुभान् आसुरीषु, एव, योनिषु ॥१७॥

एवमे-

तान्	= उन	समारेषु	= समारमें
द्विपतः	= ड्रेप करनेवाले	अजस्रम्	= बारम्बार
अशुभान्	= पापाचारी (आर)	आसुरीषु	= आसुरी
क्रूरान्	= क्रूरकर्मी	योनिषु	= योनियोंमें
नराधमान्	= नराधमोंको	एव	= ही
अहम्	= मैं	क्षिपामि	= गिराता हूँ—

अर्थात् शक्र कूकर आदि नीच योनियोंमें ही उत्पन्न करता हूँ ।

पुन आसुरी आसुरीं योनिमापन्ना मूढा जन्मनि जन्मनि ।
 स्वभाववालोंको मामप्राप्यैव कौन्तेय ततो यान्त्यधमां गतिम् ॥
 अधोगति की आसुरीम्, योनिम्, आपन्ना, मूढा, जन्मनि, जन्मनि,
 प्राप्ति । माम्, अप्राप्य, एव, कौन्तेय, ततो, यान्ति, अधमाम्, गतिम् ॥२०॥

इसलिये—

कौन्तेय = हे अर्जुन | मूढाः = वे मूढ़ पुरुष

जन्मनि	= जन्म	ततः	= उममे भी
जन्मनि	= जन्ममे	अधमाम्	= अति नीच
आसुरीम्	= आसुरी	गतिम्	= गतिको
योनिम्	= योनिको	एव	= ही
आपन्नाः	= प्राप्त हुए	यान्ति	= प्राप्त होते हैं अर्थात्
माम्	= मेरेको		गौर नरकोने
अप्राप्य	= न प्राप्त होकर		पड़ने है

त्रिविध नरकस्यद् द्वार नाशनमात्मनः ।

कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रय त्यजेत् ॥

त्रिविधम्, नरकस्य, द्वारम्, नाशनम्, आत्मनः ।

काम, क्रोध, तथा लोभ तस्मात् एतत्, त्रयम् त्यजेत् ॥२१॥

आर ८ अर्जुन-

काम	= काम	आत्मनः	= आत्मा
क्रोधः	= क्रोध		निज करनेवाले
तथा	= तथा	नाशनम्	= अर्थात् नाश
लोभः	= लोभ		नाश करने
इदम्	यह	तस्मात्	अर्थात्
त्रिविधम्	= तीन प्रकारके	एतत्	यह
नरकस्य	नरकके	त्रयम्	तीन
द्वारम्	द्वार	त्यजेत्	छोड़ दे

एतर्विमुक्तः वागन्तेय तमोद्धारमिच्छति ।

आचरत्य्वात्मनः प्रियस्ततो गतिं परा नान्तिम् ।

एते विमुक्त, कान्तेय, तमोद्वारै, त्रिभि नर,

आचरन्ति आत्मन, श्रेय, तत, याति, परम, गतिम् ॥२२॥

संक्षेप-
-

कौन्तेय = हे अर्जुन

एते = इन

त्रिभिः = तीनों

तमोद्वारैः = नरकके द्वारोंमें

विमुक्तः = मुक्त हुआ*

नरः = पुरुष

आत्मनः = अपने

श्रेयः = कल्याणका

आचरन्ति = { आचरण
करना है†

ततः = इसमें (वह)

परम = परम

गतिम् = गतिको

याति = जाना है अर्थात्
मेरेको प्राप्त
होता है

शास्त्रविधिको यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः ।

त्यागकर इच्छा-

नुकूल वर्तने-

वालोंकी निन्दा ।

न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम् ॥२३॥

य, शास्त्रविधिम्, उत्सृज्य, वर्तते, कामकारत,

न, स, सिद्धिम्, अवाप्नोति, न, सुखम्, न, पराम्, गतिम् ॥२३॥

अर्थ-

यः = जो पुरुष वर्तते = वर्तता है

शास्त्र-विधिम् = { शास्त्रकी
विधिको सः = वह
न = न (तो)

उत्सृज्य = त्यागकर सिद्धिम् = सिद्धिको

कामकारतः = अपनी इच्छासे अवाप्नोति = प्राप्त होता है

* अर्थात् काम, क्रोध और लोभ आदि विकारोंसे छूटा हुआ ।

† अपने उद्धारके लिये भगवत्-आज्ञानुसार वर्तना हो अपने
कल्याणका आचरण करना है ।

	(ओर)	न	= न
न	= न		
पराम्	= परम	मुखम्	= मुखको (ही)
गतिम्	= गतिका (तथा)		(प्राप्त होता है)

अनुष्टुप तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थिता ।

गान्धर्वम् । ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्म कर्तुमिहार्हसि ॥२४॥

तस्मात्, शास्त्रम्, प्रमाणम्, ते, कार्याकार्यव्यवस्थिते ।

ज्ञात्वा, शास्त्रविधानोक्तम्, कर्म, कर्तुम् इह, अर्हसि ॥२४॥

तस्मात्	= तन्मे	(एवम्)	= ऐना
ते	= तेरे लिये	ज्ञात्वा	= जानकर (त)
इह	= यहाँ	शास्त्र-	= शास्त्र-लिखिते
कार्याकार्य-	= कर्तव्य और	विधानोक्तम्	= लिखित-विधान
व्यवस्थिता	= अकार्ययोगी	कर्म	= कर्तव्य
शास्त्रम्	= शास्त्र ही ।	कर्तुम्	= करना
प्रमाणम्	= प्रमाण है	अर्हसि	

अथ सप्तदशोऽध्यायः

अर्जुन उवाच

ये शास्त्रविधिमुत्सृज्य यजन्ते श्रद्धयान्विताः ।

तेषां निष्ठा तु का कृष्ण सत्त्वमाहो रजस्तमः ॥१॥

ये, शास्त्रिणिम्, उत्सृज्य, यजन्ते, श्रद्धया, अन्विता,

तेषाम्, निष्ठा, तु, का, कृष्ण, सत्त्वम्, आहो, रज, तम ॥१॥

इस प्रकार भगवान्‌के घटनाओं सुनकर अर्जुन रोला-

कृष्ण	= हे कृष्ण	तेषाम्	= उनकी
ये	= जो मनुष्य	निष्ठा	= स्थिति
शास्त्र-	} = शास्त्रविधिको	तु	= फिर
विधिम्		का	= कौनसी है
उत्सृज्य	= त्यागकर (केवल)	(क्या)	
श्रद्धया	= श्रद्धासे	सत्त्वम्	= सात्त्विकी है
अन्विताः	= युक्त हुए	आहो	= अथवा
यजन्ते	= { देवादिभ्योका पूजन करते हैं	रजः	= राजसी (किंवा)
		तम	= तामसी है

श्रीभगवानुवाच

गुणोंके अनुसार
तीन प्रकारकी
स्वाभाविक श्रद्धा-
का कथन ।

त्रिविधा भवति श्रद्धा देहिनां सा स्वभावजा ।
सात्त्विकी राजसी चैव तामसी चेति तां शृणु ॥

त्रिविधा, भवति श्रद्धा, देहिनाम्, सा, स्वभावजा,
सात्त्विकी, राजमी, च, एव, ताममी, च, इति, ताम् शृणु ॥२॥

इम प्रकार अर्जुनके पूछनेपर श्रीकृष्ण भगवान बोले है अर्जुन—

देहिनाम्	= मनुष्योक्ती	राजमी	= राजमी
सा	= वह	च	= तथा
	(बिना शास्त्रीय	ताममी	= ताममी
	संस्कारोक्ते	इति	= एते
	केवल)	त्रिविधा	= तीनों प्रकारकी
स्वभावजा	= { स्वभावमे	एव	= ही
	{ उत्पन्न हुई	भवति	= होती है
श्रद्धा	= श्रद्धा	ताम्	= उत्पत्ति (त)
सात्त्विकी	= सात्त्विकी	(मत्)	= मेरे
च	= और	शृणु	= सुन

मत्त्वानुस्मृता सर्वस्य श्रद्धा भवति भाग्य ।

श्रद्धामयोऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धां स एव सः ॥३॥

मत्त्वानुस्मृता सर्वस्य, श्रद्धा भवति भाग्य

श्रद्धामय, अयम्, पुरुष, यो, यच्छ्रद्धां, स एव सः

भाग्य = भाग्य भवति भाग्य

सर्वस्य सभी मत्त्वानुस्मृती अयम्

श्रद्धा श्रद्धा एव सः

मत्त्वानु- मत्त्वानुस्मृती मत्त्वानुस्मृती

३९२

यन्त्रद्वयः = जैमी श्रद्धागाला है एव = भी
 सः = वह स्वयम् = वही है
 अर्थात् जैमी जिमकी श्रद्धा हे वेमा ही उसका स्वरूप है ।

देव, यक्ष और
 प्रेतादिके पूजन
 से विविध श्रद्धा
 युक्त पुरुषोंकी
 पहिचान ।

यजन्ते सात्त्विका देवान्यक्षरक्षांसि राजसाः ।
 प्रेतान्भूतगणाश्चान्ये यजन्ते तामसा जनाः ॥
 यजन्ते, माणिका, देवान् यक्षरक्षामि, राजसा,
 प्रेतान्, भूतगणान्, च, अन्ये, यजन्ते, तामसा, जना ॥४॥
 उनमें-

सात्त्विकाः = सात्त्विक पुरुष (तथा)
 = (तो)
 = देवोंको
 = पूजते हैं (और)
 देवान् = राजस पुरुष
 यजन्ते = यक्ष और
 राजसाः = { राक्षसोंको
 = { (पूजते हैं)
 अन्ये = (तथा)
 तामसाः = अन्य (जो)
 = तामस
 = मनुष्य है (वे)
 जनाः = प्रेत
 प्रेतान् = और
 च = भूतगणोंको
 भूतगणान् = पूजते हैं
 यजन्ते

शास्त्रसे विरुद्ध
 घोर तप करने-
 वालोंकी निन्दा ।

अशास्त्रविहित घोर तप्यन्ते ये तपो जनाः ।
 कामरागबलान्विताः ॥५॥
 अशास्त्रविहितम्, घोरम्, तप्यन्ते, ये, तप, जना,
 दम्भाहंकारसयुक्ता, कामरागबलान्विता ॥ ५ ॥
 और हे अर्जुन-

ये = जो
 जनाः = मनुष्य
 अशास्त्र- = { शास्त्रविधिसे
 विहितम् = { रहित
 घोरम् = घोर
 तपः = तपको
 तप्यन्ते = तपते है (तथा)

(केवल मनोकल्पित)

दम्भाहंकार-संयुक्ताः = { दम्भ और अहंकारसे युक्त (एव) } कामराग-बलान्विताः = { कामना, आसक्ति और बलके अभिमानमे भी युक्त है }

२] कर्षयन्तः शरीरस्थ भूतग्राममचेतसः ।

मां चैवान्तःशरीरस्थ तान्विद्ध्यासुगनिश्चयान् ॥

कर्षयन्तः, शरीरस्थम्, भूतग्रामम् अचेतनं मां च, एव, अन्तःशरीरस्थम्, तान्, विद्धि आसुगनिश्चयान् ॥६॥

तथा जा-

शरीरस्थम् = शरीररूपमे स्थित कर्षयन्तः = कृञ् कर्त्तव्ये ह +
भूतग्रामम् = भूतगमुदायको* तान् = उन
च = और अचेतनः = अज्ञानियेक । १
अन्तः- = { अन्तःकरणमे शरीरस्थम् = { स्थित आसुर- (आसुरः मन्त्र-
मासु = मुञ्च अन्तर्यामावे निश्चयान् = (वा-
एव = भी विद्धि = जान

आह्लासस्त्यपि सर्वग्य त्रिविधां भवति द्वि ।

यज्जगत्तपस्तथा दानं तेषां भेदमिमः शृणु ॥७॥

राम आहार-
के लिये ।

कट्वम्ललवणात्युष्णतीक्ष्णरूक्षविदाहिनः ।

आहारा राजसस्येष्टा दुःखशोकामयप्रदाः ॥६॥

कट्वम्ललवणात्युष्णतीक्ष्णरूक्षविदाहिनः ।

आहार , राजसम्य इष्टा दुःखशोकामयप्रदा ॥ ० ॥

और-

कटु	= कटुत्रे		दुःख चिन्ता
अम्ल	= म्लेच्छ	दुःखशोका-	और रामके
लवण	= लवणयुक्त (आर)	मयप्रदा	= दुःख करने- वाले
अत्युष्ण	= अति गरम (तथा)	आहारा	= शरीर को त- प देने करने-
तीक्ष्ण	= तीक्ष्ण		करने वाले
रूक्ष-	= रूक्ष (आर)	राजसम्य	= राजसम्य
विदाहिनः	= दाहकारक (एव)	इष्टाः	प्रिय-करने

राम आहार-
के लिये ।

यातयाम गतगम प्रति पर्युषित च यत ।

उच्छिष्टमपि चामेय भोजन नाममप्रियम् ॥७॥

यातयाम गतगम प्रति पर्युषित च यत ।

उच्छिष्टमपि , अपि च अमेयम् , नाममप्रियम्

त ॥-

अपि = भी है | तामस- = { तामस पुरुषको
(तत्) = वह (भोजन) | प्रियम् = { प्रिय होता है

सात्त्विक यशके लक्षण । अफलाकाङ्क्षिभिर्यज्ञो विधिदृष्टो य इज्यते ।

यष्टव्यमेवेति मनः समाधाय स सात्त्विकः ॥११॥

अफलाकाङ्क्षिभिः, यज्ञः, विधिदृष्टः, यः, इज्यते,
यष्टव्यम्, एव, इति, मनः, समाधाय, सः, सात्त्विकः ॥११॥

और हे अर्जुन-

यः	= जो	मनः	= मनको
यज्ञः	= यज्ञ	समाधाय	= समाधान करने
विधिदृष्टः	= { शास्त्रविधिसे नियत किया हुआ है (तथा)	अफला- काङ्क्षिभिः	= { फलको न चाहनेवाले पुरुषोंद्वारा
यष्टव्यम्	= { करना ही	इज्यते	= किया जाता है
एव	= { कर्तव्य है	सः	= वह (यज्ञ तो)
इति	= ऐसे	सात्त्विकः	= सात्त्विक है

राजस यशके लक्षण । अभिसन्धाय तु फलं दम्भार्थमपि चैव यत् ।

इज्यते भरतश्रेष्ठ तं यज्ञं विद्धि राजसम् ॥१२॥

अभिसन्धाय, तु, फलम्, दम्भार्थम्, अपि, च, एव, यत्,
इज्यते, भरतश्रेष्ठ, तम्, यज्ञम्, विद्धि, राजसम्, ॥१२॥

तु	= और	च	= अथवा
भरतश्रेष्ठ	= हे अर्जुन	फलम्	= फलको
यत्	= जो (यज्ञ)	अपि	= भी
दम्भार्थम्	= { केवलदम्भाचरण-	अभिसन्धाय	= उद्देश्य रखकर
एव	= { के ही लिये	इज्यते	= किया जाता है

तम् = उम् राजम् = राजम्

यज्ञम् = ऋको (त), विद्मि = जान

नामम ऋदे विधिहीनमसृष्टान्त मन्त्रहीनमदक्षिणम ।

सूत्रम् ।

श्रद्धाविगृहित यज्ञ तामसं पश्चिदधत्ते ॥१३॥

त्रिंशद्भिन्नाम् अमृतानाम् मन्त्राणां अष्टाङ्गम्

श्रद्धाग्रहितम् उडुम् ताम्रम् प्रविशते ॥१३॥

नग-

विधिहीनम् = { गान्धर्वविधिमे (अंर)
हीन आर श्रद्धा- (विना श्रद्धाये

अनुष्ठानम् = { अन्नदाने विहितम् = विधिः
गतिः (पथः) यत्नम् = यत्नः

मन्त्रार्हानम् = विना मन्त्रां तापयन् = तन्त्र =

अदक्षिणसु = विना दक्षिणार्धे परिच्छिन्ने = क = ३

वाराणसि नगरे देवद्विजगुग्गुप्राज्ञपुत्रेन याज्ञवल्क्येण ।

RTM 1

ब्रह्मचर्यमग्निमा च आर्ग्यं नमः ॥३॥

ה'תשנ"ב

יְהוָה יִשְׁמַר אֶת יְהוּדָה וְיִשְׂרָאֵל יִשְׁמַר אֶת יִשְׂרָאֵל

वाणीसंबन्धी तप के लक्षण । शरीरम् = शरीरमवन्धी (यह) तपः = तप उच्यते = कहा जाता है अनुद्वेगकर वाक्यं सत्य प्रियहितं च यत् ।

स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वाङ्मयं तप उच्यते ॥१५॥ अनुद्वेगकरम्, वाक्यम्, सत्यम्, प्रियहितम्, च यत्, स्वाध्यायाभ्यसनम् च, एव वाङ्मयम्, तप, उच्यते ॥१५॥

च = तथा
यत् = जो
अनुद्वेग- = { उद्वेगको न करनेवाला
करम् = { प्रिय और हितकारक
प्रियहितम् = { (एव)
= यथार्थ
= भाषण है *
= और (जो)

स्वाध्याया-भ्यसनम् = { विद शास्त्रोंके पढ़नेका एव परमेस्वरके नाम जपनेका अभ्यास है

(तत्) = वह
एव = नि मन्देह
वाङ्मयम् = वाणीसंबन्धी
तपः = तप
उच्यते = कहा जाता है

मानसिक तपके लक्षण । सत्यम् वाक्यम् च मनःप्रसादः सौम्यत्व मौनमात्मविनिग्रहः । मानसमुच्यते ॥१६॥

भावसशुद्धिरित्येतत्तपो भावसशुद्धि, इति, एतत्, तप, मानसम्, उच्यते ॥१६॥

मनः- = { मनकी प्रसन्नता (और) सौम्यत्वम् = शान्तभाव (एव)

* मन और इन्द्रियोंद्वारा कहनेका नाम यथार्थ भाषण है । अनुभव किया हो, ठीक वैसा ही

मानस्य	= { भगवत्-चिन्तन करनेका स्वभाव	इति = एते एतत् = यह
आत्म- विनिग्रह	= { मनका निग्रह (आर)	मानस्य = मनमय भाव- (अन्तःकरणार्ज) तस्य = तस्य
मगुद्धिः	= { परिग्रहा	उच्यते = कहा जाता है

भक्ति, उपदे श्रद्धया परया तप्त तपस्तन्निविध नरे ।
अफलाकाङ्क्षिभिर्गुणैः सात्त्विक पञ्चिधने ॥१७॥
श्रद्धया परया तप्तम् तपः तप्तं त्रिविधम् न,
अफलाकाङ्क्षिभिः पुनैः सात्त्विकं, त्रिविधम् ॥१८॥

परन्तु इति

अफला- काङ्क्षिभिः	= { फलात् न सात्त्विकं	तप्तम् = तप्तम् तपः = तपः
गुणैः	सात्त्विकं तपः	त्रिविधम् = त्रिविधम्
नरे	परया तपः	तपः = तपः
परया	परया	सात्त्विकं = सात्त्विकं
श्रद्धया	श्रद्धया	परिग्रहा = परिग्रहा

तत्त्वगुणानाम् तपः तपः तपः तपः तपः
विशेषतः तपः तपः तपः तपः तपः

वदन्ति

(वा) = अथवा
 दम्भेन = केवल पावण्डमे
 एव = ही
 क्रियते = किया जाता है
 तत् = वह
 अध्रुवम् = अनिश्चित* (और)

चलम् = क्षणिक फलवाला
 (तप)
 इह = यहा
 गजमम् = गजस
 प्रोक्तम् = कहा गया है

तामस तपके
 लक्षण ।

मूढग्राहेणात्मनो यत्पीडया क्रियते तपः ।
 परम्योत्सादनार्थं वा तत्तामसमुदाहृतम् ॥१६॥

मूढग्राहेण, आत्मन, यत्, पीडया, क्रियते, तप,
 परस्य, उत्सादनार्थम्, वा, तत्, तामसम्, उदाहृतम् ॥१९॥

और-

यत् = जो
 तपः = तप
 मूढग्राहेण = मूढनापूर्वक हठमे
 आत्मन. = { मन, याणी
 = { और गरीरकी
 पीडया = पीडाके सहित
 वा = अथवा
 परस्य = दूसरेका
 उत्साद- = { अनिष्ट करनेके
 नार्थम् = { लिये
 क्रियते = किया जाता है
 तत् = वह (तप)
 तामसम् = तामस
 उदाहृतम् = कहा गया है

सात्त्विक दान के लक्षण ।
 दातव्यमिति यद्दानं
 देशे काले च पात्रे च तद्दानं सात्त्विकं स्मृतम् ॥
 दातव्यम्, इति, यत्, दानम्, दीयते, अनुपकारिणे,
 देशे, काले, च, पात्रे, च, तत्, दानम्, सात्त्विकम्, स्मृतम् ॥२०॥
 * अनिश्चित फलवाला उसको कहते हैं कि जिसका फल देने न होनेमें शङ्का हो ।

च	= आर / हे अर्जुन)	पात्रे	= (पात्रके प्रप
दातव्यम्	= { दान दत्ता हा	अनुप-	= { होनेपर
इति	= ऐसे भावने	काग्नि	= { प्रयुक्त न
यत्	= जो	दीयते	= { करनेवाले लिये
दानम्	= दान	तत्	= वह
दंशे	= दश*	दानम्	= दान तां ।
काले	= काल	माचिकम्	= माचिक
च	= आ	स्मृतम्	= कहा गया है

यत्तु प्रत्युपकारार्थं फलमुद्दिश्य वा पुनः ।

दीयते च परिक्लिष्टं तद्दानं राजन स्मृतम् ॥२१॥

यत्तु, तु, प्रत्युपकारार्थं फलमुद्दिश्य वा पुनः

दायते च परिक्लिष्टं तत् दानं राजन स्मृतम् ॥ २१ ॥

वा = अथवा
फलम् = फलको
उद्दिश्य = उद्देश्य रखकर*
पुनः = फिर
दीयते = दिया जाता है

तत् = वह
दानम् = दान
राजमम् = राजस
स्मृतम् = कहा गया है

तामस दानके
लक्षण ।

अदेशकाले यद्दानमपात्रेभ्यश्च दीयते ।
तत्तामसमुदाहृतम् ॥२२॥

अदेशकाले, यत्, दानम्, अपात्रेभ्य, च, दीयते,
असत्कृतम्, अवज्ञातम्, तत्, तामसम्, उदाहृतम् ॥२२॥

च = और
यत् = जो
दानम् = दान
असत्कृतम् = { विना सत्कार
= किये
(वा) = अथवा
= तिरस्कारपूर्वक

अवज्ञातम् = अयोग्य
अदेशकाले = { देश-कालमे
अपात्रेभ्य = कुपात्रोंके लिये†
दीयते = दिया जाता है
तत् = वह (दान)
तामसम् = तामस
उदाहृतम् = कहा गया है

ॐ तत्सत्की
महिमा ।

ब्राह्मणास्तेन वेदाश्च यज्ञाश्च विहिताः स्मृतः ।
उत्तमत्, इति, निर्देश, ब्रह्मण, त्रिविध, स्मृत,
ब्राह्मणा, तेन, वेदा, च, यज्ञा, च, विहिता, पुरा ॥२३॥

* अथात् मान, बड़ाई, प्रतिष्ठा और स्वर्गादिकी प्राप्तिके लिये अथवा
रोगादिकी निवृत्तिके लिये ।
† अथात् मय-मासादि अमर्त्य वस्तुओंके खानेवालों एवं चोरी जारी
आदि नीचकर्म करनेवालोंके लिये ।

और हैं अर्जुन-

ॐ = ॐ

तेन = उम्मीने

तन = तत्

पुन = { सृष्टिके
अदिकानामे

मत = मत

इति = एते (यह)

ब्राह्मणा = ब्राह्मण

त्रिविधः = तीन प्रकारक

च = और

ब्रह्मणः = { नञ्जिदानन्दवन
ब्रह्मणा

वेदाः = वेद

च = तथा

निदंशः = नाम

यज्ञाः = यज्ञ दिक्

स्मृतः = स्मृत ह

विद्विना = स्वे स्वे हे

नम्यादामित्युदाहृत्य यजदानतपःक्रियाः ।

प्रवर्तन्ते विधानान्तराः सततं ब्रह्मवादिनाम् ॥२॥ ॥१॥

तत्, इति, अनभिधाय, फलम्, यज्ञतप क्रिया,
दानक्रिया, च, विविधा, क्रियन्ते, मोक्षकाङ्क्षिभि ॥२५॥

और-

तत् = { तत् अर्थात् तत् यज्ञतपः- = { यज्ञ तपरूप
नाममे कहे जाने- क्रियाः = { क्रियाए
वाले परमात्माका च = तथा
ही यह सब है दानक्रियाः = { दानरूप
= ऐसे (इस भावमे) = { क्रियाए
= फलको मोक्ष- = { कल्याणकी
काङ्क्षिभिः = { इच्छावाले
क्रियन्ते = { पुरुषोंद्वारा
= की जाती है

प्रयोग
व्याख्या ।

सत् शब्दके की सद्भावे साधुभावे च सदित्येतत्प्रयुज्यते ।
प्रशस्ते कर्मणि तथा सच्छब्दः पार्थ युज्यते ॥२६॥
सद्भावे, साधुभावे, च, सत्, इति, एतत्, प्रयुज्यते,
प्रशस्ते, कर्मणि, तथा, सत्, शब्द, पार्थ, युज्यते ॥२६॥

और-

सत् = सत्
इति = ऐसे
एतत् = यह
सद्भावे (परमात्माका नाम) = सत्यभावमे
च = और
साधुभावे = श्रेष्ठभावमे

प्रयुज्यते = { प्रयोग किया
जाता है
तथा = तथा
पार्थ = हे पार्थ
प्रशस्ते = उत्तम
कर्मणि = कर्ममें (भी)
सत् = सत्

गच्छ

= गच्छ

युज्यते = प्रयत्न किंग जाना है

यज्ञं तपसि दानं च स्थितिः सदिति चाच्यत ।
कर्म संच तदर्थीय सदित्येवाभिधीयते ॥२७॥

यज्ञे, तपसि, दानं च स्थिति, मत इति च उच्यते
कर्म च, एव, तदर्थीयम् मत, इति एव, अभिधीयते ॥२७॥

च

= तथा

इति

- एव

यज्ञे

- यज्ञ

उच्यते

- कर्म, कर्म, इ

तपसि

तप

च

- एव

च

आर

तदर्थीयम्

(उच्यते एव)

दानं

दानम्

कर्म

(उच्यते इति)

(या)

जा

कर्म

स्थिति

स्थितिः

एव

निश्चयम्

(मा)

या

मत

मतः

एव

या

इति

मत

मतः

अभिधीयते

- - -

(तत्) = वह (समस्त)
 असत् = असत्
 इति = ऐसे
 उच्यते = कहा जाता है
 (इसलिये)

नो = न (तो)
 इह = इसलोकमें (लभदायक है)
 च = और
 न = न
 प्रेत्य = मरनेके पीछे
 (ही लभदायक है)

तत् = वह
 इसलिये मनुष्यको चाहिये कि मच्चिदानन्दान परमान्माके

नामका निरन्तर चिन्तन करता हुआ निष्कामभावमें केवल
 परमेस्वरके लिये शास्त्रविधिमें नियत किये हुए कर्मोंका परम
 श्रद्धा और उत्साहके सहित आचरण करे।
 ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतामूपनिषत्सु ब्रह्मविद्याया योगशास्त्रे
 श्रीकृष्णार्जुनसंवादे श्रद्धात्रयविभागयोगो नाम सप्तदशोऽध्यायः ॥

अथाष्टादशोऽध्यायः

प्रधान विषय—१ से १० तक त्यागका विषय। (१३-१८) कर्मोंके
 होनेमें नश्यसिद्धान्तका कथन। (१९-४०) तीनों गुणोंके अनुसार ज्ञान,
 कर्म, वीर्य, बुद्धि धृति और सुखके पृथक् पृथक् भेद। (४१-४८) कल्मषिन
 वर्णधर्मका विषय। (४९-५५) ज्ञाननिष्ठाका विषय। (५६-६६) भक्ति-
 सहित निष्काम कर्मयोगका विषय। (६७-७८) श्रीगीताजीका माहात्म्य।
 अर्जुन उवाच

संन्यास और त्यागका तत्त्व
 ज्ञाननेके लिये प्रश्न।
 संन्यासस्य, महाबाहो, तत्त्वम्, इच्छामि, वेदितुम् ॥ १ ॥
 त्यागस्य च, हृषीकेश, पृथक्केशिनिषूदन ॥ २ ॥
 त्यागस्य, च, हृषीकेश, पृथक्, वेदितुम्, केशिनिषूदन ॥ १ ॥
 उसके उपरान्त अर्जुन बोला—
 महाबाहो = हे महाबाहो
 हृषीकेश = हे अन्तर्यामिन्

केशि-	= { हे वामुदेव	तत्त्वम्	= तत्त्वको
निषेदन	= { (मे)	पृथक्	= पृथक् पृथक्
संन्यासस्य	= संन्यास	वेदितुम्	= जानना
च	= और	इच्छामि	= चाहता हूँ
न्यासस्य	= न्यासके		

श्रीभगवानुवाच

कास्यानां कर्मणां न्यासं संन्यास कवयो विदुः ।

सर्वकर्मफलत्यागं प्राहुस्त्याग विचक्षणाः ॥२॥

याग्यानाम कर्मणाम न्यासम्, संन्यासम् कवयः विदुः
सर्वकर्मफलत्यागम् प्राहुः, त्यागम् विचक्षणाः ॥२॥

एवं प्रकार से अनुसृत पुरुषों पर श्रीभगवानुवाच करते हैं कि वे विद्वान् हैं -

कवयः	= पण्डितजन (तान्) (च)	
याग्यानाम्	याग्य	
कर्मणाम्	= कर्मोंके	विचक्षणा
न्यासम्	त्याग	
संन्यासम्	संन्यास	सर्वकर्म
विदुः	जानने	फलत्यागम्

प्राहुः = कहते हैं

त्यागम् = त्याग

] त्याज्यं दोषवदित्येके कर्म प्राहुर्मनीषिणः ।

यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यमिति चापरे ॥३॥

त्याज्यम्, दोषवत्, इति, एके, कर्म, प्राहुः, मनीषिणः,
यज्ञदानतपःकर्म, न, त्याज्यम्, इति, च, अपरे ॥३॥

न-या-

एके = कई एक

मनीषिणः = विद्वान्

इति = ऐसे

प्राहुः = कहते हैं (कि)

कर्म = कर्म (सभी)

दोषवत् = दोषयुक्त हैं

(इसलिये)

त्याज्यम् = { त्यागनेके
योग्य हैं

च = और

अपरे = दूसरे विद्वान्

इति = ऐसे

(आहुः) = कहते हैं (कि)

यज्ञदान- { यज्ञ, दान और
तपःकर्म { तपस्वरूप कर्म

न { त्यागने योग्य

त्याज्यम् = { नहीं है

त्यागने विषयमें

अपना निश्चय

करनेके लिये

भगवान् का

कथन ।

निश्चय शृणु मे तत्र त्यागे भरतसत्तम ।

त्यागो हि पुरुषव्याघ्र त्रिविधः सप्रकीर्तितः ॥४॥

त्याग, हि, पुरुषव्याघ्र, त्रिविध, त्यागे, भरतसत्तम, सप्रकीर्तित ॥४॥

परन्तु-

मे

= मेरे

निश्चयम्

= निश्चयको

शृणु

= सुन

पुरुषव्याघ्र = है पुरुषश्रेष्ठ (वह)

भरतसत्तम = हे अर्जुन

तत्र

= उस

त्यागे = { त्यागके
विषयमें (त)

त्यागः = त्याग त्रिविधः = तीनो प्रकारका
 (मात्त्विक गजम् हि = ही
 और नामन ऐसे) मंत्रकीर्तित = कहा गया है

यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत् ।

यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम् ॥५॥

यज्ञदानतपःकर्म, न त्याज्यम् कायम् एव तत्

यज्ञ दानम्, तप च, एव पावनानि मनीषिणाम् ॥५॥

न्या-

यज्ञदान-	(यज्ञ, दान और	यज्ञः	= यज्ञ
तपःकर्म	= (तपश्चैव कर्म	दानम्	= दान
न	(त्यागनके याग्य	च	अथ
त्याज्यम्	= (नहीं है (किन्तु)	तपः	= तपः कर्म है
तत्	= तत्	एव	=
एव	= नि मन्त्र	मनीषिणाम्	(मनीषिणाम्)
कार्यम्	करना कार्य है	पावनानि	(पावनानि)
	(वयोपि)		

एतान्यपि तु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा कर्तव्यानि स

कर्तव्यानीति मे पार्थ निश्चितं स्वस्त्विति ॥६॥

इसलिये—

पार्थ	= हे पार्थ	फलानि	= फलोको
एतानि	= { यह यज्ञ, दान और तपस् रूप कर्म	त्यक्त्वा	= त्यागकर (अवश्य)
तु	= तथा	कर्तव्यानि	= करने चाहिये
(अन्यानि)	= और	इति	= ऐसा
अपि	= भी	मे	= मेरा
कर्माणि	= मपूर्ण श्रेष्ठ कर्म	निश्चितम्	= { निश्चय किया हुआ
मङ्गम्	= आसक्तिको	उत्तमम्	= उत्तम
च	= और	मतम्	= मन है

तामस त्यागके
लक्षण ।

नियतस्य तु सन्यासः कर्मणो नोपपद्यते ।

मोहात्तस्य परित्यागस्तामसः परिकीर्तितः ॥७॥

नियतस्य, तु, सन्यास, कर्मण, न, उपपद्यते,
मोहात्, तस्य, परित्याग, तामस, परिकीर्तित ॥७॥

तु	= और (हे अर्जुन)	(इसलिये)
नियतस्य	= नियत*	मोहात् = मोहसे
कर्मणः	= कर्मका	तस्य = उसका
सन्यासः	= त्याग करना	परित्यागः = त्याग करना
न	{ = योग्य नहीं है	तामसः = तामस त्याग
उपपद्यते }		परिकीर्तितः = कहा गया है

राजस त्यागके
लक्षण ।

दुःखमित्येव यत्कर्म कायक्लेशभयात्त्यजेत् ।

स कृत्वा राजसं त्याग नैव त्यागफलं लभेत् ॥८॥

दुःखम्, इति, एव, यत्, कर्म, कायक्लेशभयात्, त्यजेत्,
स, कृत्वा, राजसम्, त्यागम्, न, एव, त्यागफलम्, लभेत् ॥८॥

* इसी अर्थायके श्लोक ४८ की टिप्पणीमें इसका अर्थ दर्शना चाहिये ।

और यदि कोई मनुष्य-

यत्	= जो (कुछ)	न्यजेत्	= गगकर दे। तो।
कर्म	= कर्म हैं	मः	= यह पुण्य, उम।
(तन्)	= वह (मव)	गजसम्	गजस
एव	= ही	न्यागम्	गगक
दुःखम्	= दुःख रूप हैं	कृत्वा	= करके
इति	= ऐसे (ममजकर	एव	ही
कार्यहेतु-	= (आरीतिक	न्यागफलम्	= उगके फलम्
भयान्	= (कलेजके भयमे	न	= प्राप्त नहीं
	(कर्मोंका)	लभेत्	= प्राप्त है

अर्थात् उमका वह त्याग करना उग ही होता है।

कार्यमित्येव यत्कर्म नियत क्रियतेर्जुन।

मङ्गलं त्यक्त्वा फलं चैव म त्याग नाच्छिद्यो मनः॥

कार्यम, 'ति एव, यत् कर्म नियत क्रियते

मङ्गलं, 'यव मा, फलम् च एव, म

और-

इसलिये—

पार्थ	= हे पार्थ	फलानि	= फलोंको
एतानि	= { यह यज्ञ, दान और तपस्सु कर्म	त्यक्त्वा	= त्यागकर (अवश्य)
तु	= तथा	कर्तव्यानि	= करने चाहिये
(अन्यानि)	= और	इति	= ऐसा
अपि	= भी	मे	= मेरा
कर्माणि	= सपूर्ण श्रेष्ठ कर्म	निश्चितम्	= { निश्चय किया हुआ
मङ्गम्	= आत्मिकी	उत्तमम्	= उत्तम
च	= और	मतम्	= मन है

तामस त्यागके नियतस्य तु संन्यासः कर्मणो नोपपद्यते ।
लक्षण ।

मोहात्तस्य परित्यागस्तामसः परिकीर्तितः ॥७॥

नियतस्य, तु, संन्यास, कर्मण, न, उपपद्यते,
मोहात्, तस्य, परित्याग, तामस, परिकीर्तित ॥७॥

तु = और (हे अर्जुन) (इसलिये)
नियतस्य = नियत* मोहात् = मोहसे
कर्मणः = कर्मका तस्य = उसका
संन्यासः = त्याग करना परित्याग. = त्याग करना
न } = योग्य नहीं है तामसः = तामस त्याग
उपपद्यते } परिकीर्तितः = कहा गया है

राजस त्यागके दुःखमित्येव यत्कर्म कायक्लेशभयात्त्यजेत् ।

स कृत्वा राजस त्याग नैव त्यागफलं लभेत् ॥८॥

दुःखम्, इति, एव, यत्, कर्म, कायक्लेशभयात्, त्यजेत्,
स, कृत्वा, राजसम्, त्यागम्, न, एव, त्यागफलम्, लभेत् ॥८॥

* इसी अध्यायके श्लोक ४८ की टिप्पणीमें इसका अर्थ देखना चाहिये ।

आर चद्रि कोंडं मनुष्य-

यन्	= जो (कुछ)	न्यजेन	= याग कर दे (ने)
कर्म	= कर्म है	सः	= वह पुण्य (उम)
(तन)	= वह (मत्र)	गजमम्	= गजम
एव	= ही	न्यागम्	= यागक
दुःखम्	= दुःख रूप है	कृत्वा	= करके
इति	= ऐसे (समझकर)	एव	= भी
कायहेज-	= (शारीरिक	न्यागफलम्	= यागके फलके
भयान	= (क्लेशके भयमे	न	= प्राप्त नहीं
	(कर्मोंका)	लभेन	= (हस्तात्)

अथात उमका वह त्याग करना जरूरी ही होता है ।

कार्यमित्येव यत्कर्म नियत क्रियतेऽर्जुन ।

मद्ग्न्यक्त्वा फलं चैव स त्यागः सान्निवृत्ते मनः ॥

कार्यम्, इति एव, यन् कर्म नियतम्, क्रियतेऽर्जुन

मद्ग्न्यम्, यत्वा या, फलम् च एव स, त्यागः सान्निवृत्ते

त्यागः = त्याग मतः = माना गया है—

अर्थात् कर्तव्य कर्मको स्वरूपमें न त्यागकर उनमें जो आसक्ति और फलका त्यागना है वही सात्त्विक त्याग माना गया है ।

रागद्वेषके त्याग से त्यागी के लक्षण ।

न द्वेष्ट्यकुशलं कर्म कुशले नानुपज्जते ।

त्यागी सत्त्वसमाविष्टो मेधावी छिन्नसंशयः ॥१०॥

न, द्वेष्टि, अकुशलम्, कर्म, कुशले, न, अनुपज्जते,
त्यागी, सत्त्वसमाविष्ट, मेधावी, छिन्नसंशय ॥१०॥

और हे जर्जुन ! जो पुरुष—

अकुशलम् = { अकल्याण- कारक	न अनुपज्जते = { आसक्त नहीं होता है (वह)
कर्म = कर्मसे (तो)	सत्त्व- = { शुद्ध सत्त्वगुण- से युक्त हुआ
न द्वेष्टि = { द्वेष नहीं करता है (और)	समाविष्टः = { पुरुष
कुशले = { कल्याण- कारक कर्ममें	छिन्नसंशय = संशयरहित मेधावी = ज्ञानवान् (और) त्यागी = त्यागी है

स्वरूपसे सर्व कर्म त्यागमें अशयता का वधन और कर्म न, हि, देहभृता, शक्यम्, त्यक्तुम्, कर्माणि, अशेषत, फलके त्यागसे य, तु, कर्मफलत्यागी, स, त्यागी, इति, अभिधीयते ॥११॥

त्यागीका लक्षण हि = क्योंकि अशेषतः = सपूर्णतासे
देहभृता = { देहधारी कर्माणि = सब कर्म
= { पुरुषके द्वारा त्यक्तुम् = त्यागने को

न शक्यम् = शक्य नहीं है	म.	= वह
(तन्मात्र) = उन्मये	तु	= ही
यः = जो पुरुष	त्यागी	= गरी है
कर्मफल-	इति	= ऐसे
न्यागी = { कर्मोंके फलका	अभिधीयते	= कहा जाता है
न्यागी = { न्यागी है		

अनिष्टमिष्टं मिश्रं च त्रिविध कर्मणः फलम् ।

मवत्यत्यागिनां प्रेत्य न तु मन्यागिनां क्वचित् ॥

अनिष्टम्, इष्टम्, मिश्रम्, च, त्रिविधम्, कर्मणः फलम्, मवति, अत्यागिनाम्, प्रेत्य, न, तु, मन्यागिनाम् क्वचित् ॥ १२ ॥

तथा-

अन्यागिनाम् - { नक्रामी	प्रेत्य	(मरनेके
{ पुरुषोंके,		
कर्मणः - कर्मका (ही)	मवति	
इष्टम् - अच्छा	तु	
अनिष्टम् - बुरा	मन्यागिनाम्	
च - और		
मिश्रम् - मिश्र तः ॥		
(गति) - ऐसे		

संपूर्ण व मोक्ष
एनेमें अधिष्ठा-
नादि पञ्च
हेतुओं का
निरूपण ।

पञ्चैतानि महाबाहो कारणानि निबोध मे ।
सांख्ये कृतान्ते प्रोक्तानि सिद्ध्ये सर्वकर्मणाम् ॥
पञ्च, एतानि, महाबाहो, कारणानि, निबोध, मे,
सांख्ये, कृतान्ते, प्रोक्तानि, सिद्ध्ये, सर्वकर्मणाम् ॥१३॥

आर-

महाबाहो	= हे महाबाहो	सांख्ये	= सांख्य
सर्वकर्मणाम्	= संपूर्ण कर्मोंकी	कृतान्ते	= सिद्धान्तमें
सिद्ध्ये	= सिद्धिके लिये*	प्रोक्तानि	= कहे गये हैं
एतानि	= यह	(तानि)	= उनको (त)
पञ्च	= पांच	मे	= मेरेमे
कारणानि	= हेतु	निबोध	= भली प्रकार जान

[”] अधिष्ठानं तथा कर्ता करणं च पृथग्विधम् ।

विविधाश्च पृथक्चेष्टा दैव चैवात्र पञ्चमम् ॥१४॥

अधिष्ठानम्, तथा, कर्ता, करणम्, च, पृथग्विधम्,
विविधा, च, पृथक्, चेष्टा, दैवम्, च, एव, अत्र, पञ्चमम् ॥१४॥

और हे अर्जुन-

अत्र	= इस विषयमे	च	= तथा
अधिष्ठानम्	= आधार†	पृथग्विधम्	= न्यारे न्यारे
च	= और	करणम्	= करण‡
कर्ता	= कर्ता	च	= और

* अर्थात् संपूर्ण कर्मोंके सिद्ध होनेमे ।

† जिनके आश्रय कर्म किये जाय उसका नाम आधार है ।

‡ जिन जिन इन्द्रियादि और साधनोंके द्वारा कर्म किये जाते हैं उनका नाम करण है ।

विविधाः = नाना प्रकारकी एव = ही
 पृथक् = न्यागी न्यागी पञ्चमम् = पञ्चम हेतु
 चेष्टाः = चेष्टा (एव) दंष्टम् = दंष्ट*
 तथा = उन्ने (कहा गया है)

शरीरवाञ्छनाभिर्नृत्तम् प्राग्भवे नरः ।

न्याय्य वा विष्णीत वा पञ्चेते तस्य हेतवः ॥१५॥

शरीरवाञ्छनाभि, नृत्त, नृत्त, प्राग्भवे नर
 न्याय्य, वा, विष्णीत, वा, पञ्चेते तस्य हेतवः ॥१५॥

कर्मणि-

नरः	- मनुष्य	नृत्त	= नृत्त
शरीरवाट्-	(मनुष्य)	नृत्त	= नृत्त
मनोभिः	(अन्तर शरीर)	प्राग्भवे	= प्राग्भवे
न्याय्यम्	न्याय्य, अन्याय	तस्य	= तस्य
वा	वा	तने	= तने
विष्णीतम्	विष्णीत	पञ्चे	= पञ्चे
वा	वा	तने	= तने

तत्र त्वं नति व नीरगात्माने ते

परमपरमनर्गत्माना न शरीरं ते

तत्र	= उम विषयमे	पश्यति	= देखता है
केवलम्	= { केवल शुद्ध- स्वरूप	सः	= वह
आत्मानम्	= आत्माको	दुर्मतिः	= { मलिन बुद्धि- वाला अज्ञानी
कर्ताम्	= कर्ता	न	= { यथार्थ नहीं देखता है
		पश्यति	

आत्माको अज्ञानी
माननेवाले की
प्रशम्भा ।

यस्य नाहंकृतो भावो बुद्धिर्यस्य न लिप्यते ।

हत्वापि स इमल्लोकान्न हन्ति न निबध्यते ॥१७॥

यस्य, न, अहंकृत, भाव, बुद्धि, यस्य, न, लिप्यते,
हत्वा, अपि, स, इमान्, लोकान्, न, हन्ति, न, निबध्यते ॥१७॥

और हे अर्जुन-

यस्य	= जिस पुरुषके (अन्तःकरणमें)	सः	= वह पुरुष
अहंकृतः	= मैं कर्ता हूँ (ऐसा)	इमान्	= इन
भावः	= भाव	लोकान्	= सब लोकोंको
न	= नहीं है (तथा)	हत्वा	= मारकर
यस्य	= जिसकी	अपि	= भी (वास्तवमें)
बुद्धिः	= बुद्धि (सासारिक पदार्थोंमें और संपूर्ण कर्मोंमें)	न	= न (तो)
न	= { लिपायमान नहीं होती	हन्ति	= मारता है (और)
लिप्यते		न	= न
		निबध्यते	= पापसे बधता है*

करनेसे मनुष्यकी बुद्धि शुद्ध होती है इसलिये जो उपरोक्त साधनोंसे रहित
है उसकी बुद्धि अशुद्ध है ऐसा समझना चाहिये ।

* जैसे अग्नि, वायु और जलके द्वारा प्रारब्धवश किन्ना प्राणीकी हिंसा
होती देखनेमें आने तो भी वह वास्तवमें हिंसा नहीं है, वैसे ही जिन

कर्मप्रेरक और
कर्मसंग्रह का
निर्णय ।

ज्ञानं ज्ञेयं परिज्ञाता त्रिविधा कर्मचोदना ।

करणं कर्म कर्तेति त्रिविधः कर्मसंग्रहः ॥१८॥

ज्ञानम्, ज्ञेयम्, परिज्ञाता, त्रिविधा, कर्मचोदना,

करणम्, कर्म, कर्ता, इति, त्रिविधः, कर्मसंग्रह ॥१८॥

तथा हे भारत-

परिज्ञाता	= ज्ञाना*	(और)
ज्ञानम्	= ज्ञान† (और)	कर्ता = कर्ता‡
ज्ञेयम्	= ज्ञेय†	करणम् = करण× (और)
त्रिविधा	= यह तीनो (तो)	कर्म = क्रिया+
कर्मचोदना	= कर्मके प्रेरक है	इति = यह
	अर्थात् इन तीनोंके	त्रिविधः = तीनों
	सयोगसे तो कर्ममें	कर्मसंग्रहः = कर्मके संग्रह है
	प्रवृत्त होनेकी इच्छा	अर्थात् इन तीनोंके
	उत्पन्न होती है	सयोगसे कर्म बनता है

पुरुषका देहमें अभिमान नहीं है और स्वार्थरहित केवल समारके हितके लिये ही जिसकी सम्पूर्ण क्रियायें होती हैं उस पुरुषके शरीर और इन्द्रिया-द्वारा यदि किसी प्राणीकी हिंसा होती हुई लोकदृष्टिमें देखी जाय तो भी वह वास्तवमें हिंसा नहीं है क्योंकि आत्मक्ति, स्वार्थ और ग्रहकारके न होनेसे किसी प्राणीकी हिंसा हो ही नहीं सकती तथा बिना कर्तृत्व अभिमानके किया हुआ कर्म वास्तवमें अकर्म ही है इसलिये वह पुरुष पापमें नहीं बधता है ।

* जाननेवालेका नाम ज्ञाता है ।

† जिसके द्वारा जाना जाय उसका नाम ज्ञान है ।

‡ जाननेमें आनेवाली वस्तुका नाम ज्ञेय है ।

× कर्म करनेवालेका नाम करण बनता है ।

+ जिन माधनोमें कर्म किया जाय उनका नाम क्रिया है ।

+ करनेका नाम क्रिया है ।

तीनों गुणोंके अनुसार ज्ञान, कर्म और कर्ताके भेदोंको सुननेके लिये भगवान् की आज्ञा ।

ज्ञानं कर्म च कर्ता च त्रिधैव गुणभेदतः ।
 प्रोच्यते गुणसंख्याने यथावच्छृणु तान्यपि ॥१६॥

ज्ञानम्, कर्म, च, कर्ता, च, त्रिधा, एव, गुणभेदतः ।
 प्रोच्यते, गुणसंख्याने, यथावत्, शृणु, तानि अपि ॥१९॥

उन स्वयं—

ज्ञानम्	= ज्ञान	गुणसंख्याने	= माख्यशास्त्रमें
च	= और	त्रिधा	= { तीन तीन प्रकारसे
कर्म	= कर्म	प्रोच्यते	= कहे गये हैं
च	= तथा	तानि	= उनको
कर्ता	= कर्ता	अपि	= भी (तु मेरेसे)
एव	= भी	यथावत्	= भली प्रकार
गुणभेदतः	= गुणोंके भेदसे	शृणु	= सुन

सात्त्विक ज्ञानके लक्षण । सर्वभूतेषु येनैकं भावमव्ययमीक्षते ।

अविभक्तं विभक्तेषु तज्ज्ञानं विद्धि सात्त्विकम् ॥

सर्वभूतेषु, येन, एकम्, भावम्, अव्ययम्, ईक्षते,
 अविभक्तम्, विभक्तेषु, तत्, ज्ञानम्, विद्धि, सात्त्विकम् ॥२०॥

हे अर्जुन—

येन	= जिस ज्ञानसे (मनुष्य)	अविभक्तम्	= विभागरहित (समभावसे स्थित)
विभक्तेषु	= पृथक् पृथक्	ईक्षते	= देखना है
सर्वभूतेषु	= सब भूतोंमें	तत्	= उस
एकम्	= एक	ज्ञानम्	= ज्ञानको (तो तू)
अव्ययम्	= अविनाशी	सात्त्विकम्	= सात्त्विक
भावम्	= परमात्मभावको	विद्धि	= जान

रान्त शानके
रक्षण ।

पृथक्त्वेन तु यज्ज्ञानं नानाभावान्पृथग्विधान् ।

वेत्ति सर्वेषु भूतेषु तज्ज्ञान विद्धि राजसम् ॥

पृथक्त्वेन, तु, यत्, ज्ञानम्, नानाभावान्, पृथग्विधान्,

वेत्ति, सर्वेषु, भूतेषु, तत्, ज्ञानम्, विद्धि, राजसम् ॥२१॥

तु	= ओर	नाना-	} = अनेक भावोंको
यत्	= जो	भावान्	
ज्ञानम्	= ज्ञान अर्थात्	पृथक्त्वेन	= न्यारा न्यारा करके
	जिम ज्ञानके	वेत्ति	= जानताहै
	द्वारा मनुष्य	तत्	= उस
सर्वेषु	= सपूर्ण	ज्ञानम्	= ज्ञानको (त)
भूतेषु	= भूतोंमें	राजसम्	= राजस
पृथग्विधान्	= भिन्न भिन्न प्रकारके	विद्धि	= जान

तामस शानके
रक्षण ।

यत्तु कृत्स्नवदेकस्मिन्कार्ये सत्तमहेतुकम् ।

अतत्त्वार्थवदल्प च तत्तामसमुदाहृतम् ॥२२॥

यत्, तु, कृत्स्नवत्, एकस्मिन्, कार्ये, सत्तम्, अहेतुकम्,

अतत्त्वार्थवत्, अल्पम्, च, तत्, तामसम्, उदाहृतम् ॥२२॥

तु	= ओर	कृत्स्नवत्	= (नपूर्णताके
यत्	= जो ज्ञान		=) नदृश
एकस्मिन्	= एक	सत्तम्	= आनक्त है
कार्ये	= (कार्यरूप	च	= तथा (जो)
	=) शरीरमें ही	अहेतुकम्	= बिना युक्तिवात्

अतच्चार्य- = { तत्त्व अर्थमे
वत् = { रहित (और)
अल्पम् = तुच्छ है

तत् = वह (ज्ञान)
तामसम् = तामस
उदाहृतम् = कहा गया है

सात्त्विक कर्मके नियतं सङ्गरहितमरागद्वेषतः कृतम् ।
लक्षण ।

अफलप्रेप्सुना कर्म यत्तत्सात्त्विकमुच्यते ॥२३॥

नियतम्, सङ्गरहितम्, अरागद्वेषतः, कृतम्,
अफलप्रेप्सुना, कर्म, यत्, तत्, सात्त्विकम्, उच्यते ॥२३॥

तथा हे अर्जुन-

यत् = जो
कर्म = कर्म
नियतम् = { शास्त्रविधिसे
नियत किया
हुआ (और)
सङ्गरहितम् = { कर्तापनके अभि-
मानसे रहित

अफल-
प्रेप्सुना
अराग-
द्वेषतः
कृतम्
तत्

= { फलको न चाहने-
वाले पुरुषद्वारा
= बिना रागद्वेषसे
= किया हुआ है
= वह (कर्म तो)

सात्त्विकम् = सात्त्विक
उच्यते = कहा जाता है

राजस कर्मके यत्तु कामेप्सुना कर्म साहकारेण वा पुनः ।
लक्षण ।

क्रियते बहुलायास तद्राजसमुदाहृतम् ॥२४॥

यत्, तु, कामेप्सुना, कर्म, साहकारेण, वा, पुनः,
क्रियते, बहुलायासम्, तत्, राजसम्, उदाहृतम् ॥२४॥

तु = और
यत् = जो
कर्म = कर्म
बहुला-
यासम् = { बहुत परिश्रमसे
युक्त है

पुनः = तथा
कामेप्सुना = { फलको
चाहनेवाले
वा = और

साहंकारेण = { अहंकारयुक्त | तत् = वह (कर्म)
 पुरुषद्वारा | राजसम् = राजस
 क्रियते = किया जाना है । उदाहृतम् = कहा गया है

नामम कर्मके
 रूप ।

अनुबन्धं क्षय हिंसामनवेक्ष्य च पौरुषम् ।

मोहादारभ्यते कर्म यत्तत्तामसमुच्यते ॥२५॥

अनुबन्धम्, क्षयम्, हिंसाम्, अनवेक्ष्य, च, पौरुषम्,
 मोहात्, आरभ्यते, कर्म, यत्, तत्, तामसम्, उच्यते ॥२५॥

तथा—

यत्	= जो	अनवेक्ष्य	= न विचारकर
कर्म	= कर्म	मोहात्	= केवल अज्ञानसे
अनुबन्धम्	= परिणाम	आरभ्यते	= { आरम्भ किया
क्षयम्	= हानि		{ जाता है
हिंसाम्	= हिंसा	तत्	= वह कर्म
च	= और	तामसम्	= तामस
पौरुषम्	= तामसधर्मको	उच्यते	= कहा जाना है

सात्त्विक कर्ताके
 स्थान ।

मुक्तसङ्गोऽनहवादी धृत्युत्साहसमन्वितः ।

सिद्ध्यसिद्ध्योर्निर्विकारः कर्ता सात्त्विक उच्यते ॥

मुक्तान्न अहवादी, धृत्युत्साहसमन्वित
 सिद्ध्यसिद्ध्यो, निर्विकार, कर्ता सात्त्विक उच्यते ॥२६॥

तथा है अर्जुन ! जो कर्ता—

मुक्तसङ्ग	= आसक्तिसे रहित	धृत्युत्साह-	= { वैर्य और उत्साह-
(आर)		समन्वितः	{ से युक्त, एवं,
अनहवादी =	{ अहंकारके वचन	सिद्ध्य-	{ कार्यके सिद्ध होने
	{ न बोलनेवाला	सिद्ध्यो	{ और न होनेमें

निर्विकारः = { हर्ष शोकादि | कर्ता = कर्ता (तो)
 विकारोसे रहित | सात्त्विकः = सात्त्विक
 है (वह) | उच्यते = कहा जाता है

राजस कर्ताके
लक्षण ।

रागी कर्मफलप्रेप्सुर्लुब्धो हिंसात्मकोऽशुचिः ।

हर्षशोकान्वितः कर्ता राजसः परिकीर्तितः ॥

रागी, कर्मफलप्रेप्सु, लुब्ध, हिंसात्मक, अशुचि,
 हर्षशोकान्वित, कर्ता, राजस, परिकीर्तित ॥२७॥

और जो-

रागी = आसक्तिसे युक्त अशुचिः = अशुद्धाचारी
 कर्मफल- = { कर्मोंके फलको (और)
 प्रेप्सुः = { चाहनेवाला हर्ष- = { हर्ष शोकसे
 (और) | शोकान्वितः = { लिपायमान है
 लुब्धः = लोभी है (तथा) (वह)
 हिंसात्मकः = { दूसरोको कष्ट कर्ता = कर्ता
 देनेके स्वभाव- | राजसः = राजस
 वाला | परिकीर्तितः = कहा गया है

तामस कर्ताके
लक्षण ।

अयुक्तः प्राकृतः स्तब्धः शठो नैष्कृतिकोऽलसः ।

विषादी दीर्घसूत्री च कर्ता तामस उच्यते ॥२८॥

अयुक्त, प्राकृत, स्तब्ध, शठ, नैष्कृतिक, अलस,
 विषादी, दीर्घसूत्री, च, कर्ता, तामस, उच्यते ॥२८॥

तथा जो-

अयुक्त = { विक्षेपयुक्त शठ = धूर्त (और)
 चित्तवाला
 प्राकृतः = शिक्षासे रहित नैष्कृतिकः = { दूसरेकी
 स्तब्धः = धमण्डी | आजीविकाका
 नाशक (एव)

विषादी = { शोक करनेके स्वभाववाला	दीर्घसूत्री = दीर्घसूत्री* हैं (वह)
अलसः = आलसी	कर्ता = कर्ता
च = और	तामसः = तामस
	उच्यते = कहा जाता है

तीनों गुणोंके अनुसार बुद्धि और धृतिके मेदोंको धृते- बुद्धे, मेदम्, धृते, च, एव, गुणत, त्रिविधम्, शृणु, के लिये भगवान् की आज्ञा।

बुद्धेर्भेदं धृतेश्चैव गुणतस्त्रिविधं शृणु ।
 प्रोच्यमानमशेषेण पृथक्त्वेन धनंजय ॥२६॥

बुद्धे, मेदम्, धृते, च, एव, गुणत, त्रिविधम्, शृणु,
 प्रोच्यमानम् अशेषेण, पृथक्त्वेन, धनजय ॥२७॥

तथा—

धनंजय = हे अर्जुन (त)	भेदम् = भेद
बुद्धेः = बुद्धिका	अशेषेण = सम्पूर्णतान्त्रे
च = और	पृथक्त्वेन = विभागपूर्वक
धृतेः = धारणशक्तिका	(मया) = मेरेमे
एव = भी	प्रोच्यमानम् = कहा हुआ
गुणतः = गुणोंके कारण	शृणु = सुन
त्रिविधम् = तीन प्रकारका	

सात्त्विकी बुद्धि- प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च कार्याकार्ये भयाभये ।
 येः लक्षण ।

बन्ध मोक्ष च या वेत्ति बुद्धिः सा पार्थ सात्त्विकी ॥

प्रवृत्तिम्, च, निवृत्तिम्, च कार्याकार्ये भयाभये.

बन्धम्, मोक्षम्, च, या, वेत्ति, बुद्धिः सा पार्थ सात्त्विकी ॥३०॥

पार्थ = हे पार्थ प्रवृत्तिम् = प्रवृत्तिमार्ग

च	= और	बन्धम्	= बन्धन
निवृत्तिम्	= निवृत्तिमार्गको *	च	= और
च	= तथा	मोक्षम्	= मोक्षको
कार्या-	= { कर्तव्य और अकर्तव्यको (एव)	या	= जो बुद्धि
कार्ये		वेत्ति	= तत्त्वमे जानती है
भयाभये	= भय और अभयको	सा	= वह
(तथा)		बुद्धिः	= बुद्धि (तो)
		सात्त्विकी	= सात्त्विकी है

राजसी बुद्धिके लक्षण । यया धर्ममधर्मं च कार्यं चाकार्यमेव च ।

अयथावत्प्रजानाति बुद्धिः सा पार्थ राजसी ॥

यया, धर्मम्, अधर्मम्, च, कार्यम्, च, अकार्यम्, एव, च,
अयथावत्, प्रजानाति, बुद्धि, सा, पार्थ, राजसी ॥३१॥

और-

पार्थ	= हे पार्थ	च	= और
यया	= { जिस बुद्धिके द्वारा (मनुष्य)	अकार्यम्	= अकर्तव्यको
धर्मम्	= धर्म	एव	= भी
च	= और	अयथावत्	= यथार्थ नहीं
अधर्मम्	= अधर्मको	प्रजानाति	= जानता है
च	= तथा	सा	= वह
कार्यम्	= कर्तव्य	बुद्धिः	= बुद्धि
		राजसी	= राजसी है

* देहाभिमानको त्यागकर केवल सच्चिदानन्दधन परमात्माने एकीभावसे स्थित हुए श्रीशुकदेवजी और सनकादिकोंकी भांति सत्सारसे उपराम होकर विचरनेका नाम निवृत्तिमार्ग है ।

तामसी बुद्धिके रूप। अधर्म धर्ममिति या मन्यते तमसावृता ।

सर्वार्थान्विपरीतांश्च बुद्धिः सा पार्थ तामसी ॥

अधर्मम्, धर्मम्, इति, या, मन्यते, तमसा, आवृता,

सर्वार्थान्, विपरीतान्, च, बुद्धि, सा, पार्थ, तामसी ॥३२॥

और-

पार्थ	= हे अर्जुन	च	= तथा (और भी)
या	= जो	सर्वार्थान्	= सपूर्ण अर्थोंको
तमसा	= तमोगुणसे	विपरीतान्	= विपरीत ही
आवृता	= आवृत हुई बुद्धि	(मन्यते)	= मानती है
अधर्मम्	= अधर्मको	सा	= वह
धर्मम्	= धर्म	बुद्धिः	= बुद्धि
इति	= ऐसा	तामसी	= तामसी है
मन्यते	= मानती है		

मात्स्विकी धृति धृत्या यया धारयते मनःप्राणेन्द्रियक्रियाः ।

हे लक्ष्मण ।

योगेनाव्यभिचारिण्या धृतिः सा पार्थ मात्स्विकी ॥

वृथा, यया, धारयते, मन प्राणेन्द्रियक्रिया,

योगेन, अव्यभिचारिण्या, धृति, सा पार्थ, मात्स्विकी ॥३३॥

और-

पार्थ	= हे पार्थ	अव्यभि-	{ अव्यभि- चारिण्या = चारिणी }
योगेन	= यानयोगके द्वारा	धृत्या	
यया	= जिम		

मनः-	{ मन प्राण और	सा	= वह
प्राणेन्द्रिय-	{ इन्द्रियोंकी	धृतिः	= धारणा (तो)
क्रियाः	{ क्रियाओंको +	सात्त्विकी	= सात्त्विकी है
धारयते	= धारण करता है		

राजसी धृतिके लक्षण । यया तु धर्मकामार्थान्धृत्या धारयतेऽर्जुन ।

प्रसङ्गेन फलाकाङ्क्षी धृतिः सा पार्थ राजसी ॥३४॥

यया, तु, धर्मकामार्थान्, धृत्या, धारयते, अर्जुन,
प्रसङ्गेन, फलाकाङ्क्षी, धृति, सा, पार्थ, राजसी ॥३४॥

तु	= और	धृत्या	= धारणाके द्वारा
पार्थ	= हे पृथापुत्र	धर्म-	{ धर्म अर्थ और
अर्जुन	= अर्जुन	कामार्थान्	{ कामोंको
फलाकाङ्क्षी	= { फलकी इच्छा-	धारयते	= धारण करता है
	{ वाला मनुष्य	सा	= वह
प्रसङ्गेन	= अति आसक्तिसे	धृतिः	= धारणा
यया	= जिस	राजसी	= राजसी है

तामसी धृतिके लक्षण । यया स्वप्नं भयं शोकं विषादं मदमेव च ।

न विमुञ्चति दुर्मेधा धृतिः सा पार्थ तामसी ॥३५॥

यया, स्वप्नम्, भयम्, शोकम्, विषादम्, मदम्, एव, च,
न, विमुञ्चति, दुर्मेधाः, धृति, सा, पार्थ, तामसी ॥३५॥

पार्थ	= हे पार्थ	यया	= जिस
दुर्मेधाः	= { दुष्ट बुद्धिवाला	(धृत्या)	= धारणाके द्वारा
	{ मनुष्य	स्वप्नम्	= निद्रा

* मन, प्राण और इन्द्रियोंको भगवत्-प्राप्तिके लिये भजन, ध्यान और निष्काम कामोंमें लगानेका नाम उनकी क्रियाओंको धारण करना है ।

भयम्	= भय	न	= { नहीं छोड़ता है
शोकम्	= चिन्ता	विमुञ्चति	= { अर्थात् धारण
च	= और		{ किये रहता है
विपादम्	= दुःखको (एव)	सा	= वह
मदम्	= उन्मत्तताको	धृतिः	= धारणा
एव	= भी	तामसी	= तामसी है

नाना उणोके सुखं त्विदानीं त्रिविधं शृणु मे भरतर्षभ ।
 अनुना सुखके अभ्यासाद्रमते यत्र दुःखान्तं च निगच्छति ॥३६॥
 शौको नूननेके सुखम्, तु, इदानीम्, त्रिविधम्, शृणु, मे, भरतर्षभ,
 नि मावान्सी अभ्यासात्, रमते, यत्र, दुःखान्तम्, च, निगच्छति ॥३६॥
 आरा और हे अर्जुन—
 मत्त्विक सुखके

इदानीम्	= अब		(साधक पुरुष)
सुखम्	= सुख		{ भजन त्यान
तु	= भी (त्)	अभ्यासात्	= { और सेवादिके
त्रिविधम्	= तीन प्रकारका		{ अभ्यासमे
मे	= मेरेमे	रमते	= रमण करना है
शृणु	= सुन	च	= और
भरतर्षभ	= हे भरतश्रेष्ठ	दुःखान्तम्	= दुःखोंके अन्तको
यत्र	= जिन सुखमे	निगच्छति	= प्राप्त होना है

यत्तदग्रे विषमिव परिणामेऽमृतोपमम् ।

तत्सुख सात्त्विक प्रोक्तमात्मबुद्धिप्रसादजम् ॥३७॥

यत्, तत्, अग्रे, विषम्, इव, परिणामे, अमृतोपमम्,
 तत्, सुखम्, सात्त्विकम्, प्रोक्तम्, आत्मबुद्धिप्रसादजम् ॥३७॥

तत् = वह (सुख) , अग्रे = { प्रथम मायनके
 आरम्भकालमे

	(यद्यपि)		
विषम्	= विषके	आत्मबुद्धि-	{ भगवत्-
इव	= मद्दश भासता है +	प्रसादजम्	{ विषयक बुद्धि-
	(परन्तु)		{ के प्रसादसे
			{ उत्पन्न हुआ
परिणामे	= परिणाममें	सुखम्	= सुख है
अमृतोपमम्	= अमृतके तुल्य है	तत्	= वह
(अतः)	= इसलिये	सात्त्विकम्	= सात्त्विक
यत्	= जो	प्रोक्तम्	= कहा गया है

राजस सुखके
लक्षण ।

विषयेन्द्रियसंयोगाद्यत्तदग्रेऽमृतोपमम् ।

परिणामे विषमिव तत्सुखं राजसं स्मृतम् ॥३८॥

विषयेन्द्रियसंयोगात्, यत्, तत्, अग्रे, अमृतोपमम्,

परिणामे, विषम्, इव, तत्, सुखम्, राजसम्, स्मृतम् ॥३८॥

और-

यत्	= जो	तत्	= वह (यद्यपि)
सुखम्	= सुख	अग्रे	= भोगकालमें
विषयेन्द्रिय-	{ विषय और	अमृतो-	{ अमृतके मद्दश
संयोगात्	{ इन्द्रियोके	पमम्	{ (भासता है परन्तु)
	{ संयोगसे	परिणामे	= परिणाममें
(भवति)	= होता है	विषम्	= विषके†

* जैसे खेलमें आमक्तिवाले बालकको विद्याका अभ्यास मूढताके कारण प्रथम विषके तुल्य भासता है वैसे ही विषयोंमें आमक्तिवाले पुरुषको भगवद्-भजन, ध्यान, सेवा आदि साधनोंका अभ्यास मर्म न जाननेके कारण प्रथम विषके मद्दश भासता है ।

† वल्, वीर्य, बुद्धि, धन उत्साह और परलोकका नाश होनेमें विषय और इन्द्रियोंके संयोगमें होनेवाले सुखको परिणाममें विषके मद्दश कहा है ।

इव = मदृश है

(अतः) = इसलिये

तत् = वह (सुख)

राजसम् = राजस

स्मृतम् = कहा गया है

नामन सुखके लक्षण । यदग्रे चानुबन्धे च सुखं मोहनमात्मनः ।

निद्रालस्यप्रमादोत्थं तत्तामसमुदाहृतम् ॥३६॥

यत्, अग्रे, च, अनुबन्धे च, सुखम्, मोहनम्, आत्मन,

निद्रालस्यप्रमादोत्थम्, तत्, तामसम्, उदाहृतम् ॥३९॥

तथा -

यत् = जो

तत् = वह

सुखम् = सुख

अग्रे = भोगकालमें

च = और

अनुबन्धे = परिणाममें

च = भी

आत्मनः = आत्माको

मोहनम् = मोहनेवाला है

निद्रालस्य-
प्रमादोत्थम् = { निद्रा आलस्य
और प्रमादमे
उत्पन्न हुआ

(सुख)

तामसम् = तामस

उदाहृतम् = कहा गया है

न तदस्ति पृथिव्यां वा दिवि देवेषु वा पुनः ।

माना गुणोंके
विषयका रूप
होता ।

सत्त्व प्रकृतिजैर्मुक्त यदेभिः स्यात्त्रिभिर्गुणैः ॥४०॥

न, तत्, अस्ति पृथिव्याम् वा दिवि देवेषु, वा पुनः सत्त्वम्

प्रकृतिजैः, मुक्तम् यत् एभिः स्यात् त्रिभिः गुणैः ॥४०॥

पुनः = और (हे अर्जुन)

वा = अथवा

पृथिव्याम् = पृथिवीमें

देवेषु = दैवताओंमें (देवता)

वा = या

तत् = वह (कोई भी)

दिवि = स्वर्गमें

सत्त्वम् = प्राणी

न	= नहीं	त्रिभिः	= तीनों
अस्ति	= है (कि)	गुणैः	= गुणोंसे
यत्	= जो	मुक्तम्	= रहित
एभिः	= इन	स्यात्	= हो
प्रकृतिजैः	= प्रकृतिसे उत्पन्न हुए		

क्योंकि यावन्मात्र सर्व जगत् त्रिगुणमयी मायाका ही विकार है ।

वर्णधर्म के विषयका आरम्भ ब्राह्मणक्षत्रियविशां शूद्राणां च परतप ।

कर्माणि प्रविभक्तानि स्वभावप्रभवैर्गुणैः ॥४१॥

ब्राह्मणक्षत्रियविशाम्, शूद्राणाम्, च परतप,
कर्माणि, प्रविभक्तानि, स्वभावप्रभवै, गुणै ॥४१॥

हमलिये-

परंतप	= हे परतप	कर्माणि	= कर्म
ब्राह्मण- क्षत्रिय- विशाम्	} ब्राह्मण क्षत्रिय = और वैश्योंके	स्वभाव- प्रभवैः	= { स्वभावसे उत्पन्न हुए गुणों करके
च		गुणैः	
शूद्राणाम्		प्र- विभक्तानि	
	= शूद्रोंके (भी)		= { विभक्त किये गये है

अर्थात् पूर्वकृत कर्मोंके सस्काररूप स्वभावसे उत्पन्न हुए
गुणोंके अनुसार विभक्त किये गये हैं ।

ब्राह्मण के शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च ।
स्वभाविक कर्मों का कथन ।

ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम् ॥४२॥

शम, दम, तप, शौचम्, क्षान्ति, आर्जवम्, एव, च,
ज्ञानम्, विज्ञानम्, आस्तिक्यम्, ब्रह्मकर्म, स्वभावजम् ॥४२॥

उनमें-

शमः = अन्त करणका निग्रह दमः = इन्द्रियोका दमन

शौचम्	= { बाहर भीतरकी शुद्धि*	ज्ञानम्	= { शास्त्रविषयक ज्ञान
तपः	= { धर्मके लिये काष्ठ सहन करना (और)	च	= और
क्षान्तिः	= क्षमाभाव (एव)	विज्ञानम्	= { परमात्मतत्त्व-का अनुभव
आर्जवम्	= { मन इन्द्रिया और शरीरकी सरलता	एव	= भी (ये तो)
आत्मिक्यम्	= आत्मिक बुद्धि	ब्रह्मकर्म	= { ब्राह्मणके स्वाभाविक कर्म हैं
		स्वभावजम्	

भद्रिय के
स्वाभाविक कर्मों
का बयान ।

शौर्य तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम् ।

दानमीश्वरभावश्च क्षात्र कर्म स्वभावजम् ॥४३॥

शौर्यम्, तेज, धृति, दाक्ष्यम् युद्धे, च, अपि अपलायनम्,
दानम्, ईश्वरभाव, च, क्षात्रम् कर्म स्वभावजम् ॥४३॥

और-

शौर्यम्	= शूरवीरता	अपि	= भी
तेजः	= तेज	अपलायनम्	= { न भागनेका स्वभाव (पप)
धृतिः	= धैर्य	दानम्	= दान
दाक्ष्यम्	= चतुरता	च	= और
च	= और	ईश्वरभावः	= स्वामीभाव +
युद्धे	= युद्धमे		

* गीता ७० १६ श्लोक ७ की टिप्पणी में दखना चाहिये ।

+ अर्थात् निस्वार्थतावसे सर्वका हित में चलाया गया कर्म ।

प्रसंग में भवित एतत्प्रसंग प्रत्यक्ष पालन करने के नाते ।

(ये मव) स्वभावजम् = स्वाभाविक
क्षेत्रम् = क्षेत्रियके कर्म = कर्म है

वैश्य और शूद्रके कृपिगौरक्ष्यवाणिज्यं वैश्यकर्म स्वभावजम् ।

स्वाभाविक कर्मों का कथन ।

परिचर्यात्मक कर्म शूद्रस्यापि स्वभावजम् ॥४४॥

कृपिगौरक्ष्यवाणिज्यम्, वैश्यकर्म, स्वभावजम्,
परिचर्यात्मकम्, कर्म, शूद्रस्य, अपि, स्वभावजम् ॥४४॥

तथा—

कृपिगौरक्ष्य- वाणिज्यम्	=	{	खेती, गो- पालन और क्रयविक्रय- रूप मत्त- व्यवहार* (ये)	परि- चर्यात्मकम्	= {	सब वर्णोंकी सेवा करना (यह)
			वैश्यके स्वाभाविक कर्म हैं (और)	शूद्रस्य अपि स्वभावजम्		
वैश्यकर्म स्वभावजम्	=	{	वैश्यके स्वाभाविक कर्म हैं (और)	शूद्रस्य अपि स्वभावजम्	=	शूद्रका = भी = स्वाभाविक

स्वाभाविक स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धिं लभते नरः ।

कर्मोंसे भगवत्
प्राप्तिका कथन
और उनकी
विधि ।

स्वकर्मनिरतः सिद्धिं यथा विन्दति तच्छृणु ॥४५॥

* वस्तुओंके खरीदने और बेचनेमें तौल नाप और गिनती आदिमें कम देना अथवा अधिक लेना एवं वस्तुको बदलकर या एक वस्तुमें दूसरी (खराब) वस्तु मिलाकर देना अथवा (अच्छी) ले लेना तथा नफा भाउन और लालची ठहराकर उसमें अधिक दाम लेना या कम देना तथा झूठ कपट चोरी और जबरनस्तीमें अथवा अन्य किसी प्रकारमें दूसरेके हस्तों को ग्रहण कर लेना इत्यादिक दोषोंमें रहित जो मत्तनापूर्वक पवित्र वस्तुओंका व्यापार है उसका नाम मत्त व्यवहार है ।

स्वे, स्वे, कर्मणि, अभिरत, मग्निद्विम्, लभते, नर,
स्वकर्मनिरत, सिद्धिम्, यथा, विन्दति, तत्, शृणु ॥४५॥

एष इम-

स्वे	=अपने	यथा	=जिम प्रकारसे
स्वे	=अपने (स्वाभाविक)	स्वकर्म-	{अपने स्वाभाविक
कर्मणि	=कर्ममे	निरतः	{कर्ममें लगा हुआ
अभिरतः	=लगा हुआ		{मनुष्य
नरः	=मनुष्य	सिद्धिम्	=परमसिद्धिको
संसिद्धिम्	= { भगवत्-प्राप्तिरूप परमसिद्धिको	विन्दति	=प्राप्त होता है
लभते	=प्राप्त होता है (परन्तु)	तत्	=उम विधिको (त मेरेसे)
		शृणु	=सुन

”] यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदं ततम् ।

स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः॥४६॥

यत, प्रवृत्ति, भूतानाम्, येन, सर्वम्, इदम्, ततम्

स्वकर्मणा, तम्, अभ्यर्च्य सिद्धिम्, विन्दति, मानवः ॥४६॥

हे अर्जुन-

यतः	=जिम परमात्माने	सर्वम्	=सर्व (सगल)
भूतानाम्	=सर्व भूतोंकी	ततम्	=यस है
प्रवृत्तिः	=उत्पत्ति हुई है (ओर)	तम्	=उस परमेश्वरके
येन	=जिमसे	स्वकर्मणा	= { अपने स्वाभाविक कर्मसे
इदम्	=यह		

अभ्यर्च्य = पूजकर*

मानवः = मनुष्य

सिद्धिम् = परमसिद्धिको

विन्दति = प्राप्त होता है

स्वधर्म पालन-
की प्रशंसा ।

श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात् ।

स्वभावनियतं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्बिषम् ॥४७॥

श्रेयान्, स्वधर्म, विगुण, परधर्मात्, स्वनुष्ठितात्,

स्वभावनियतम्, कर्म, कुर्वन्, न, आप्नोति, किल्बिषम् ॥४७॥

इमलिये-

स्वनुष्ठितात्	= { अच्छी प्रकार आचरण किये हुए	स्वभाव- नियतम्	= { स्वभावमे नियत किये हुए
परधर्मात्	= दूसरेके धर्ममे	कर्म	= { स्वधर्मरूप कर्मको
विगुणः	= गुणरहित	कुर्वन्	= करता हुआ
(अपि)	= भी		(मनुष्य)
स्वधर्मः	= अपना धर्म	किल्बिषम्	= पापको
श्रेयान्	= श्रेष्ठ है	न	= नहीं
(यस्मात्)	= क्योंकि	आप्नोति	= प्राप्त होता

स्वधर्म त्याग-
का निषेध ।

सहजं कर्म कौन्तेय सदोषमपि न त्यजेत् ।

सर्वारम्भा हि दोषेण धूमेनाग्निरिवावृताः ॥४८॥

सहजम्, कर्म, कौन्तेय, सदोषम्, अपि, न, त्यजेत्,

सर्वारम्भा, हि, दोषेण, धूमेन अग्नि, इव, आवृता ॥४८॥

* जैसे पतिव्रता स्त्री पतिको ही सर्वस्व समझकर पतिकी चिन्तन करती
हुई पतिकी आज्ञानुसार पतिके ही लिये मन, वाणी, शरीरमे कर्म करती है
वैसे ही परमेश्वरको ही सर्वस्व समझकर परमेश्वरका चिन्तन करने हुए परमेश्वर-
की आज्ञाके अनुसार मन, वाणी और शरीरमे परमेश्वरके ही लिये स्वाभाविक
वर्तव्य कर्मों आचरण करना कमद्वारा परमेश्वरको पूजना है ।

अतएव-

कान्तेय = हे कुन्तीपुत्र	धूमेन = धूएसे
सदोषम् = दोषयुक्त	अग्निः = अग्निके
अपि = भी	इव = मदृश
सहजम् = स्वाभाविक*	सर्वारम्भाः = सब ही कर्म
कर्म = कर्मको	(किमी न किसी)
न = नहीं	दोषेण = दोषसे
त्यजेत् = त्यागना चाहिये	आवृताः = आवृत हैं
हि = क्योंकि	

मारययोगने
नगवत्-आसिका
बधन ।

असक्तबुद्धिः सर्वत्र जितात्मा विगतस्पृहः ।

नैष्कर्म्यसिद्धिं परमां संन्यासेनाधिगच्छति ॥४६॥

असक्तबुद्धि सर्वत्र, जितात्मा, विगतस्पृह,
नैष्कर्म्यसिद्धिम्, परमाम्, संन्यासेन, अधिगच्छति ॥४७॥

तथा हे अर्जुन-

सर्वत्र = सर्वत्र	संन्यासेन = { मान्ययोगके
असक्त- = { आसक्तिरहित	द्वारा (भी)
बुद्धिः = { बुद्धिवाला	परमाम् = परम
विगत- = { स्पृहारहित	नैष्कर्म्य- = { नैष्कर्म्य-
स्पृहः = { (और)	सिद्धिम् = { सिद्धिके
जितात्मा = { जीते हुए अन्त - अधि-	{ गच्छति } = प्राप्त होता है -
{ करणवाला पुरुष	

अर्थात् क्रियारहित शुद्ध मच्चिदानन्दधन परमात्माकी
प्राप्तिरूप परमसिद्धिवा प्राप्त होता है ।

* प्रवृत्तिके अनुसार शास्त्रविधिसे निश्चय कि रूप से व्यवहार करने पर
" सामान्य धर्मस्य वागविव दमः उन्नेति " का अर्थ है

ज्ञानयोगके सिद्धिं प्राप्तो यथा ब्रह्म तथाप्नोति निबोध मे ।
 अनुसार भगवत्-
 प्राप्तिकी विधि- समासेनैव कौन्तेय निष्ठा ज्ञानस्य या परा ॥५०॥
 को समझने के सिद्धिम्, प्राप्त, यथा, ब्रह्म, तथा, आप्नोति, निबोध, मे,
 लिये अर्जुनके प्रति भगवान्की समासेन, एव, कौन्तेय, निष्ठा, ज्ञानस्य, या, परा ॥५०॥
 आशा ।

इसलिये—

कौन्तेय	= हे कुन्तीपुत्र	या	= जो
सिद्धिम्	= { अन्त करणकी शुद्धिरूप सिद्धिको	ज्ञानस्य	= तत्त्वज्ञानकी
प्राप्तः	= प्राप्त हुआ पुरुष	परा	= परा
यथा	= जैसे	निष्ठा	= निष्ठा है
	(साख्ययोगके द्वारा)	(तत्)	= उसको
ब्रह्म	= { सच्चिदानन्दघन ब्रह्मको	एव	= भी (त्)
आप्नोति	= प्राप्त होता है	मे	= मेरेमे
तथा	= तथा	समासेन	= सक्षेपमे
		निबोध	= जान

ज्ञानयोगके बुद्ध्या विशुद्धया युक्तो धृत्यात्मान नियम्य च ।
 अनुसार भगवत्-
 प्राप्तिका पात्र शब्दादीन्विषयास्त्यक्त्वा रागद्वेषौ व्युदस्य च ॥
 बननेकी विधि । विविक्तसेवी लब्धाशी यतवाक्कायमानसः ।

ध्यानयोगपरो नित्य वैगम्यं समुपाश्रितः ॥५२॥

बुद्धया, विशुद्धया, युक्त, धृत्या, आत्मानम्, नियम्य, च,
 शब्दादीन्, विषयान्, त्यक्त्वा, रागद्वेषौ, व्युदस्य, च ॥५१॥

कर्म' 'स्वकर्म' नियत कर्म' 'स्वभावज कर्म' 'स्वभावनियत कर्म' इत्यादि
 नामोमे उक्त । ।

विविक्तमेरी, लवागी, यतवाक्कायमानस ,
ध्यानयोगपर , नित्यम्, वैराग्यम्, समुपाश्रित ॥५२॥

हे अर्जुन-

विशुद्धया	= विशुद्ध	नित्यम्	= निरन्तर
बुद्ध्या	= बुद्धिसे	ध्यान-	= { ध्यानयोगके
युक्तः	= युक्त	योगपरः	= { परायण हुआ
	{ एकान्त ओर	धृत्या	= { सात्त्विक
विविक्तसेवी	= { शुद्ध देशका	आत्मानम्	= अन्त करणको
	{ सेवन करने-	नियम्य	= वगमें करके
	{ वाला (तथा)	च	= तथा
लवागी	= मिताहारी*	शब्दादीन्	= शब्दादिक
यतवाक्काय-	{ जीते हुए मन	विषयान्	= विषयोंको
मानसः	= { वाणी शरीर-	त्यक्त्वा	= त्यागकर
	{ वाला (और)	च	= और
वैराग्यम्	= दृढ वैराग्यको	रागद्वेषां	= रागद्वेषोंको
	{ भली प्रकार	व्युदस्य	= नष्ट करके
समुपाश्रितः	= { प्राप्त हुआ		
	{ पुरुष		

॥] अहंकार बल दर्प काम क्रोध परिग्रहम् ।

विमुच्य निर्ममः शान्तो ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥५३॥

अहंकारम्, बलम्, दर्पम्, कामम्, क्रोधम्, परिग्रहम्,
विमुच्य निर्मम शान्त , ब्रह्मभूयाय, कल्पते ॥५३॥

* एल्वा और ० रूप ० रार व-ने-जाला ।

† गाना अध्याय १८ श्लोक ३३ में निम्न दिखाने हैं ।

तथा—

अहंकारम्	= अहंकार	(और)
बलम्	= बल	
दर्पम्	= घमंड	शान्तः = { शान्त अन्त -
कामम्	= काम	{ करण हुआ
क्रोधम्	= क्रोध (और)	
परिग्रहम्	= संप्रहको	ब्रह्मभूयाय = { सच्चिदानन्दघन
विमुच्य	= त्यागकर	{ ब्रह्ममें एकीभाव
निर्ममः	= ममतारहित	{ होनेके लिये
		कल्पते = योग्य होता है

ज्ञानयोगसे परा
भक्तिकी प्राप्ति ।

ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचति न काङ्क्षति ।

समः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम् ॥५४॥

ब्रह्मभूत , प्रसन्नात्मा , न , शोचति , न , काङ्क्षति ,

सम , सर्वेषु , भूतेषु , मद्भक्तिम् , लभते , पराम् ॥५४॥

फिर वह—

ब्रह्मभूतः	= { सच्चिदानन्दघन	न	= न (किमीकी)
	{ ब्रह्ममें एकीभाव-	काङ्क्षति	= { आकाङ्क्षा (ही)
	{ से स्थित हुआ		{ करता है (एव)
प्रसन्नात्मा	= { प्रमन्नचित्त-	सर्वेषु	= सब
	{ वाला पुरुष	भूतेषु	= भूतोंमें
न	= न (तो किमी	समः	= समभाव हुआ*
	वस्तुके लिये)	पराम्	= { मेरी परा-
शोचति	= शोक करना है	मद्भक्तिम्	= { भक्तिको†
	(और)	लभते	= प्राप्त होता है

* गीता अध्याय ६ श्लोक २० में दर्शना चाहिये ।

† जो तत्त्वज्ञानकी पराकाष्ठा है तथा जिसकी प्राप्त होकर और कुछ

परा भक्तिमे
भावद-प्राप्ति ।

भक्त्या मामभिजानाति यावान्यश्चास्मि तत्त्वतः ।

ततो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा विशते तदनन्तरम् ॥५५॥

भक्त्या, माम्, अभिजानाति, यावान्, य, च, अस्मि तत्त्वतः,
ततः, माम्, तत्त्वतः, ज्ञात्वा, विशते, तदनन्तरम् ॥५५॥

और उस-

भक्त्या	= पराभक्तिके द्वारा	'अस्मि	= ह (तथा)
माम्	= मेरेको	ततः	= उम भक्तिमे
तत्त्वतः	= तत्त्वसे	माम्	= मेरेको
अभि-	{ भली प्रकार जानाति = { जानता है (कि)	तत्त्वतः	= तत्त्वमे
जानाति		ज्ञात्वा	= जानकर
(अहम्) = मैं		तदनन्तरम्	= तत्काल (ही)
यः	= जो	विशते	{ मेरेमे प्रवेग हो जाना है-
च	= और		
यावान्	= जिम प्रभाववाला		

अर्थात् अनन्यभावमे मेरेको प्राप्त हो जाना है फिर उमकी
दृष्टिमे मुझ वासुदेवके मित्राय और कुछ भी नहीं रहता ।

भक्तिसहित

सर्वकर्माण्यपि सदा कुर्वाणो मद्व्यपाश्रयः ।

जिम काम-

मत्प्रसादादवाप्नोति शाश्वतं पदमव्ययम् ॥५६॥

ते भगवत्-

५।

सर्वकर्माणि, अपि, मदा कुर्वाण, मद्व्यपाश्रय,

मत्प्रसादात्, अवाप्नोति, शाश्वतम्, पदम् अव्ययम् ॥५६॥

और-

मद्व्य-	{ मेरे परायण हुआ	सर्वकर्माणि	= { सर्वकर्माणि
पाश्रय	= { निष्कामकर्मयोगी (तो)		= { कर्मके

आजना काम नहीं रहना वही शाश्वत परमेश्वर है नष्ट
परमेश्वर मरता और 'परमेश्वर' इ यदि न हो = वह परमेश्वर

सदा	= सदा	शाश्वतम्	= मनातन
कुर्वाणः	= करता हुआ	अव्ययम्	= अविनाशी
अपि	= भी	पदम्	= परम्पदको
मत्प्रसादात्	= मेरी कृपासे	अवाप्नोति	= प्राप्त हो जाता है

मक्तिसहित

चेतसा सर्वकर्माणि मयि संन्यस्य मत्परः ।

निष्काम कर्म-
योग करनेके
लिये भगवान्-
की आज्ञा ।

बुद्धियोगमुपाश्रित्य मच्चित्तः मततं भव ॥५७॥

चेतसा, सर्वकर्माणि, मयि, संन्यस्य, मत्पर,

बुद्धियोगम्, उपाश्रित्य, मच्चित्त, सततम्, भव ॥ ५७ ॥

इसलिये हे अर्जुन ! तू-

सर्वकर्माणि	= सब कर्मोंको	बुद्धियोगम् = { समत्वबुद्धिरूप निष्काम कर्मयोगको
चेतसा	= मनसे	
मयि	= मेरेमे	उपाश्रित्य = अवलम्बन करके
संन्यस्य	= अर्पण करके*	सततम् = निरन्तर
मत्परः	= { मेरे परायण हुआ	मच्चित्तः = मेरेमें चित्तवाला
		भव = हो

मच्चित्तः सर्वदुर्गाणि मत्प्रसादात्तरिष्यसि ।

अथ चेत्त्वमहकारान्न श्रोष्यसि विनङ्क्ष्यसि ॥५८॥

मच्चित्त, सर्वदुर्गाणि, मत्प्रसादात्, तरिष्यसि,

अथ, चेत्, न्यम्, अहकारात्, न, श्रोष्यसि, विनङ्क्ष्यसि ॥५८॥

इस प्रकार-

त्वम्	= तू	मच्चित्तः = { मेरेमे निरन्तर मनवाला हुआ
-------	------	--

मत्प्रसादात्	= मेरी कृपासे	अहंकारात्	= { अहंकारके कारण (मेरे वचनोको)
सर्वदुर्गाणि	= { जन्म मृत्यु आदि सब सङ्कटोको (अनायास ही)	न	= नहीं
तरिष्यसि	= तर जायगा	श्रोष्यसि	= सुनेगा (तो)
अथ	= और	विनङ्क्ष्यसि	= { नष्ट हो जायगा अर्थात् परमार्थसे भ्रष्ट हो जायगा
चेत्	= यदि		

दिना इच्छा
मी स्वभाविक
इसके होनेमें
इतकी प्रबल-
ता निरूपण।

यदहंकारमाश्रित्य न योत्स्य इति मन्यसे ।

मिथ्यैष व्यवसायस्ते प्रकृतिस्त्वां नियोक्ष्यति ॥

यत्, अहंकारम्, आश्रित्य, न, योत्स्ये, इति, मन्यसे,
मिथ्या, एष, व्यवसाय, ते, प्रकृति, त्वाम्, नियोक्ष्यति ॥५९॥

और-

यत्	= जो (त्)	व्यवसाय	= निश्चय
अहंकारम्	= अहंकारको	मिथ्या	= मिथ्या है
आश्रित्य	= अवलम्बन करके (यत्)		= क्योंकि
इति	= ऐसे	प्रकृतिः	= { क्षत्रियपन- का व्यवहार
मन्यसे	= मानता है (कि)	त्वाम्	= तेरेको
न	= { मैं युद्ध नहीं		
योत्स्ये	= करेगा (तो)	नियोक्ष्यति	= { जबरदस्ती युद्धमें लगे देगा
एष	= यह		
ते	= तेरा		

[„] स्वभावजेन कौन्तेय निबद्धः स्वेन कर्मणा ।
 कर्तुं नेच्छसि यन्मोहात् करिष्यस्यवशोऽपि तत् ॥
 स्वभावजेन, कौन्तेय, निबद्ध, स्वेन, कर्मणा, कर्तुम्,
 न, इच्छसि, यत्, मोहात्, करिष्यमि, अवश, अपि, तत् ॥६०॥

और—

कौन्तेय	= हे अर्जुन	अपि	= भी
यत्	= जिस कर्मको (त्)	स्वेन	= अपने (पूर्वकृत)
मोहात्	= मोहसे	स्वभावजेन	= स्वाभाविक
न	= नहीं	कर्मणा	= कर्मसे
कर्तुम्	= करना	निबद्ध.	= बंधा हुआ
इच्छसि	= चाहता है	अवशः	= परवश होकर
तत्	= उसको	करिष्यसि	= करेगा

मयके हृदय ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति ।
 म अन्तर्यामी भ्रामयन्सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया ॥६१॥
 परमात्मा की ईश्वर, सर्वभूतानाम्, हृद्देशे, अर्जुन, तिष्ठति,
 व्यापकता का भ्रामयन्, सर्वभूतानि, यन्त्रारूढानि, मायया ॥६१॥
 कथन ।

क्योंकि—

अर्जुन	= हे अर्जुन	(उनके कर्मोंके
यन्त्रा-	= { शरीररूप यन्त्रमें	अनुसार)
रूढानि	= { आरूढ हुए	
सर्व-	} = मपूर्ण प्राणियोंको	भ्रामयन् = भ्रमाता हुआ
भूतानि		सर्व-
ईश्वर	= { अन्तर्यामी	भूतानाम् = { सब भूत-
	= { परमेश्वर	हृद्देशे = हृदयमे
मायया	= अपनी मायामे	तिष्ठति = स्थित है

इसके शरण लेने के लिये शरण तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत ।
 तत्प्रसादात्परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम् ॥
 तम्, एव, शरणम्, गच्छ, सर्वभावेन, भारत, तत्प्रसादात्,
 पराम्, शान्तिम्, स्थानम्, प्राप्स्यसि, शाश्वतम् ॥६२॥

इसलिये—

भारत	= हे भारत	तत्प्रसादात्	= { उस परमात्मा-
सर्वभावेन	= सब प्रकारसे		की कृपासे (ही)
तम्	= उस परमेश्वरकी	पराम्	= परम
एव	= ही	शान्तिम्	= शान्तिको (ओर)
शरणम्	= अनन्यशरणको *	शाश्वतम्	= सनातन
गच्छ	= प्राप्त हो	स्थानम्	= परमश्रामको
		प्राप्स्यसि	= प्राप्त होगा

प्राप्त करेगा

इति ते ज्ञानमाख्यातं गुह्याद्गुह्यतरं मया ।

विमृश्यैतदशेषेण यथेच्छसि तथा कुरु ॥६३॥

इति, ते, ज्ञानम्, आख्यातम्, गुह्यात्, गुह्यतरम्, मया,

विमृश्य, एतत्, अशेषेण, यथा, इच्छामि, तथा, कुरु ॥६३॥

इति = इस प्रकार (यह) गुह्यात् = गोपनीयमे (भी)

* लज्जा भय मान बढ़ाई और आत्मिको त्यागकर एव शरीर ही-
 समान अहंता ममतासे रहित होकर केवल एक परमात्माके ही परम शरण
 परम गति और सर्वस्व समझना तथा अनन्यभावसे अतिशय श्रद्धा भक्ति
 और प्रेमपूर्वक निरन्तर भगवान्‌के नाम पुण प्रभाव और स्वरूपका चिन्तन
 कात जानना एव भगवान्‌का भजन स्मरण रखने का ही उनकी आज्ञा
 कृत्य कर्मोंका निःस्वार्थभावसे केवल परमेश्वरके लिए करना कहते हैं
 'नद प्रदाने परमात्माके अनन्यशरण होना है ।

गुह्यतरम्	= अति गोपनीय	विमृश्य	= { अच्छी प्रकार विचारके
ज्ञानम्	= ज्ञान		(फिर तं)
मया	= मैंने	यथा	= जेमे
ते	= तेरे लिये	इच्छसि	= चाहता है
आख्यातम्	= कहा है	तथा	= वैसे ही
एतत्	= { इम रहस्ययुक्त ज्ञानको	कुरु	= कर
अशेषेण	= सपूर्णतासे		

अर्थात् जैसी तेरी इच्छा हो वैसे ही कर ।

अर्जुनकी प्रीति-
के कारण पुनः
उपदेश का
आरम्भ ।

सर्वगुह्यतमं भूयः शृणु मे परमं वचः ।

इष्टोऽसि मे दृढमिति ततो वक्ष्यामि ते हितम् ॥

सर्वगुह्यतमम्, भूय, शृणु, मे, परमम्, वच,
इष्ट, अमि, मे, दृढम्, इति, तत, वक्ष्यामि, ते, हितम् ॥६४॥

इतना कहनेपर भी अर्जुनका कोई उत्तर नहीं मिलनेके कारण
श्रीकृष्ण भगवान् फिर बोले कि हे अर्जुन-

सर्व-	= { सपूर्ण	दृढम्	= अतिशय
गुह्यतमम्	= { गोपनीयोमे भी अति गोपनीय	इष्ट	= प्रिय
मे	= मेरे	असि	= है
परमम्	= परम (रहस्ययुक्त)	ततः	= इससे
वच	= वचनको (व)	इति	= यह
भूय	= फिर (भी)	हितम्	= { परम हित- कारक वचन (मे)
शृणु	= सुन (क्योंकि व)	ते	= तेरे लिये
मे	= मेरा	वक्ष्यामि	= कहूँगा

भगवान्की
भक्ति करनेके
लिए आशा और
उपेक्षा फल ।

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु ।

मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे ॥६५॥

मन्मना , भव , मद्भक्त , मद्याजी , माम् , नमस्कुरु ,

माम् , एव , एष्यसि , सत्यम् , ते , प्रतिजाने , प्रिय , अग्नि , मे ॥६५॥

हे अर्जुन तू-

मन्मनाः
भव

= { केवल मुझ सच्चिदानन्दघन वासुदेव परमात्मामे ही
अनन्य प्रेमसे नित्य निरन्तर अचल मनवाला हो
(और)

मद्भक्तः
(भव)

= { मुझ परमेश्वरको ही अतिशय श्रद्धा भक्तिसहित
निष्कामभावमे नाम गुण और प्रभावके श्रवण ,
कीर्तन , मनन और पठनपाठनद्वारा निरन्तर
भजनेवाला हो (तथा)

मद्याजी
(भव)

= { मेरा (शङ्ख चक्र गदा पद्म और किरीट कुण्डल आदि
भूषणोंसे युक्त पीताम्बर वनमाला और कोस्तुभ-
मणिधारी विष्णुका) मन वाणी और शरीरके द्वारा
सर्वस्व अर्पण करके अतिशय श्रद्धा भक्ति और
प्रेमसे विह्वलतापूर्वक पूजन करनेवाला हो (और)

माम्

= { मुझ सर्वशक्तिमान् विभूति बल ऐश्वर्य माधुर्य
गम्भीरता उदारता वात्मन्य और सुहृदता आदि
गुणोंमे सम्पन्न भवके आश्रयरूप वासुदेवको

नमस्कुरु

= { विनयभावपूर्वक भक्तिमहित नाथाङ्ग दण्डवत्
प्रणाम कर

(एवम्)

= ऐसा करनेमे (त)

माम्

= मेरेको

एव

= ही

एष्यसि = प्राप्त होगा (यह मैं) (यतः) = क्योंकि (तु)

ते = तेरे लिये मे = मेरा

सत्यम् = सत्य प्रियः = अत्यन्त प्रिय (मखा)

प्रतिजाने = प्रतिज्ञा करना इ अमि = है

सर्व धर्मोंका सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं ब्रज ।

आश्रय त्यागकर

केवल भगवत्

शरण होनेके सर्वधर्मान्, परित्यज्य, माम्, एकम्, शरणम्, ब्रज,

लिये आज्ञा ।

अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः॥६६॥

अहम्, त्वा, सर्वपापेभ्य, मोक्षयिष्यामि, मा, शुच ॥६६॥

इसलिये—

सर्व-धर्मान् = { सर्व धर्मोंको
अर्थात् सपूर्ण
कर्मोंके आश्रयको
शरणम् = { अनन्य-
शरणको*

परित्यज्य = त्यागकर

एकम् = केवल एक

माम् = { मुझ सच्चिदानन्द-
वन वासुदेव
परमात्माकी ही
मोक्षयिष्यामि = मुक्त कर दूंगा
मा = { त शोक
शुचः = { मन कर

अप्राप्तके प्रति इदं ते नातपस्काय नाभक्ताय कदाचन ।

श्रयताती ना

उपस्थ करनेके

लि निषेध ।

न चाशुश्रूषवे वाच्यं न च मा योऽभ्यसूयति॥६७॥

इदम् ते न, अतपस्काय न, अभक्ताय, कदाचन,

न च अशुश्रूषवे, वाच्यम्, न च माम्, य, अभ्यसूयति॥६७॥

* इसी अर्थके अर्थ ७८ । शिष्यणीय अनन्यशरणता भाव
रहितता चिति ।

हे अर्जुन इस प्रकार—

ते	= { तेरे (हितके 'च लिये कहे हुए)। न	= तथा = न
इदम्	= { इस गीतारूप परमरहस्यको अशुश्रूषवे	= { बिना सुननेकी इच्छावालेके
कदाचन	= किसी कालमें भी	{ ही प्रति
न	= न (तो)	(वाच्यम्) = कहना चाहिये (एव)
अतपस्काय	= { तपरहित मनुष्यके प्रति	यः = जो माम् = मेरी
वाच्यम्	= कहना चाहिये	अभ्य- }
च	= और	स्यति } = निन्दा करना है
न	= न	(तस्मै) = उमके प्रति भी
अभक्ताय	= { भक्ति* रहितके प्रति	न = { नहीं कहना चाहिये

परन्तु जिनमें यह सब दोष नहीं हो ऐसे भक्तोंके प्रति प्रेमपूर्वक उत्साहके सहित कहना चाहिये ।

*गीतानीके
चार वा
परा ६ ।

य इमं परमं गुह्य मद्भक्तेष्वभिधास्यति ।

भक्तिं मयि परां कृत्वा मामेवैष्यत्यसंशयः ॥६८॥

य, इमम्, परमम्, गुह्यम्, मद्भक्तेषु, अभिधान्यति,
भक्तिम्, मयि, पराम्, कृत्वा, माम् एव, एष्यति, असंशय ॥६८॥

क्योंकि—

यः = जो पुरुष मयि = मेरेमें

* वेद शास्त्र और परमेश्वर तथा महात्मा और पुण्यभावका नाम भक्ति है ।

पराम्	= परम	मद्भक्त्ये	= मेरे भक्तोंमें
भक्तिम्	= प्रेम	अभिधास्यति	= कहेगा *
कृत्वा	= करके	(सः)	= वह
इमम्	= इस	असंगय	= निःसन्देह
परमम्	= परम	माम्	= मेरेको
गुह्यम्	= { रहस्ययुक्त गीता- शास्त्रको	एव	= ही
		एष्यति	= प्राप्त होगा

[,] न च तस्मान्मनुष्येषु कश्चिन्मे प्रियकृत्तमः ।

भविता न च मे तस्मादन्यः प्रियतरो भुवि ॥६६॥

न, च, तस्मात्, मनुष्येषु, कश्चित्, मे, प्रियकृत्तम,

भविता, न, च, मे, तस्मात्, अन्य, प्रियतर, भुवि ॥६९॥

च	= और	च	= और
न	= न (तो)	न	= न
तस्मात्	= उमसे बढकर	तस्मात्	= उममे बढकर
मे	= मेरा	मे	= मेरा
प्रिय-	= { अतिशय प्रिय	प्रियतरः	= अत्यन्त प्यारा
कृत्तम	= { कार्य करनेवाला	भुवि	= पृथिवीमे
मनुष्येषु	= मनुष्योंमे	अन्यः	= दूसरा कोई
कश्चित्	= कोई	भविता	= होनेगा
(अस्मि)	= है		

श्रीगीतार्जुने अध्येष्यते च य इम धर्म्य मवादमावयोः ।

पठन
म इत्यर्थः ।

ज्ञानयज्ञेन तेनाहमिष्टः स्यामिति मे मतिः ॥७०॥

* अर्थात् निरामानात्म प्रेमपूर्व मेरे भक्तोंमें प्यारेगा या अथवा

मेरे भक्तोंमें प्रेम प्रचार होगा ।

अध्येष्यते, च, य, इमम्, धर्म्यम्, संवादम्, आपयो,
ज्ञानयज्ञेन, तेन, अहम्, इष्ट, स्याम्, इति, मे, मतिः ॥७०॥

च	= तथा (हे अर्जुन)	तेन	= उसके द्वारा
यः	= जो (पुरुष)	अहम्	= मैं
इमम्	= इस	ज्ञानयज्ञेन	= ज्ञानयज्ञसे*
धर्म्यम्	= धर्ममय	इष्ट.	= पूजित
आवयोः	= हम दोनोंके	स्याम्	= होऊंगा
संवादम्	= { संवादरूप गीताशास्त्रको	इति	= ऐसा
अध्येष्यते	= { पढ़ेगा अर्थात् नित्य पाठ करेगा	मे	= मेरा
		मतिः	= मत है

श्रीगीताजीके
का
मन्त्रम् ।

श्रद्धावाननसूयश्च शृणुयादपि यो नरः ।

सोऽपि मुक्तः शुभल्लोकान्प्राप्नुयात्पुण्यकर्मणाम्॥

श्रद्धावान्, अनसूय, च, शृणुयात्, अपि, य, नर, म, अपि,
मुक्त, शुभान्, लोकान्, प्राप्नुयात्, पुण्यकर्मणाम् ॥७१॥

तथा-

यः	= जो	शृणुयात्	= { श्रवणमात्र
नरः	= पुरुष	अपि	= { भी करेगा
श्रद्धावान्	= श्रद्धायुक्त	मः	= वह
च	= और	अपि	= भी
अनसूयः	= { दोषदृष्टिसे रहित हुआ	मुक्त	= पापोंसे मुक्त हुआ
		पुण्य-	= { उत्तम कर्म
		कर्मणाम्	= { करनेवालोंके
	(इस गीताशास्त्रका)	शुभान्	= श्रेष्ठ

* गीता अध्याय, श्लोक ३३ का अर्थ देखना चाहिये ।

लोकान् = लोकोको | प्राप्नुयात् = प्राप्त होवेगा

गीताश्रवणसे
अर्जुनका मोह
नष्ट हुआ या
नहीं यह जानने-
के लिये भगवान्-
का प्रदत्त ।

कच्चिदेतच्छ्रुतं पार्थ त्वयैकाग्रेण चेतसा ।

कच्चिदज्ञानसंमोहः प्रनष्टस्ते धनजय ॥७२॥

कच्चित्, एतत्, श्रुतम्, पार्थ, त्वया, एकाग्रेण, चेतसा,

कच्चित्, अज्ञानसंमोहः, प्रनष्टः, ते, धनजय ॥७२॥

इस प्रकार गीताका माहात्म्य कहकर भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र
आनन्दकन्दने अर्जुनसे पूछा-

पार्थ = हे पार्थ

(और)

कच्चित् = क्या

धनजय = हे धनजय

एतत् = यह (मेरा वचन)

कच्चित् = क्या

त्वया = तैने

ते = तेरा

एकाग्रेण = एकाग्र

अज्ञान- = { अज्ञानसे उत्पन्न

चेतसा = चित्तमे

संमोहः = हुआ मोह

श्रुतम् = श्रवण किया

प्रनष्टः = नष्ट हुआ

अर्जुन उवाच

नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा त्वत्प्रसादान्मयाच्युत ।

स्थितोऽस्मि गतसन्देहः करिष्ये वचनं तव ॥७३॥

नष्टः, मोहः, स्मृतिः, लब्धा, त्वत्प्रसादात्, मया, अच्युतः,

स्थितः, अस्मि, गतसन्देहः, करिष्ये, वचनम्, तव ॥७३॥

अपने मोहना
नाश होना
स्मृति रक्के
अर्जुन भगवत्-
कृपा मानने की
प्रतिज्ञा करना ।

इस प्रकार भगवान् ने पूछनेपर अर्जुन याग-

अच्युत = हे अच्युत

नष्टः = { नष्ट हो गया

त्वत्प्रसादात् = आपकी कृपामे

(और)

(मम) = मेरा

मया = मुझे

मोहः = मोह

स्मृतिः = स्मृति

लब्धा	= प्राप्त हुई है (इसलिये मैं)	अस्मि	= हूँ (और)
गतसन्देहः	= सगयरहित हुआ	तव	= आपकी
स्थितः	= स्थित	वचनम्	= आज्ञा
		करिष्ये	= पालन करूँगा

सजय उवाच

श्रीकृष्ण और
अर्जुनके सवाद-
की मरिमा ।

इत्यहं वासुदेवस्य पार्थस्य च महात्मनः ।

संवादमिममश्रौषमद्भुतं रोमहर्षणम् ॥७४॥

इति, अहम्, वासुदेवस्य, पार्थस्य, च, महात्मन,
सवादम्, इमम्, अश्रौषम्, अद्भुतम्, रोमहर्षणम् ॥७४॥

इसके उपरान्त सजय बोला हे राजन्—

इति	= इस प्रकार	इमम्	= इस
अहम्	= मैंने	अद्भुतम्	= अद्भुत रहस्ययुक्त (और)
वासुदेवस्य	= श्रीवासुदेवके	रोमहर्षणम्	= रोमाञ्चकारक
च	= और	संवादम्	= सवादको
महात्मनः	= महात्मा	अश्रौषम्	= सुना
पार्थस्य	= अर्जुनके		

] व्यासप्रसादाच्छ्रुतवानेतद्गुह्यमहं परम् ।

योगं योगेश्वरात्कृष्णात्साक्षात्कथयतः स्वयम् ॥

व्यासप्रसादात्, श्रुतवान्, एतत्, गुह्यम्, अहम्, परम्,
योगम्, योगेश्वरात्, कृष्णात्, साक्षात्, कथयत, स्वयम् ॥७५॥

वैसे कि—

व्यास-	श्रीव्यासजीकी	अहम्	= मैंने
प्रसादात्	कृपासे दिव्य	एतन्	= वत
	दृष्टिद्वारा	परम्	= परम (रहस्ययुक्त)

गुह्यम् = गोपनीय

योगम् = योगको

साक्षात् = साक्षात्

कथयतः = कहते हुए

स्वयम् = स्वयम्

योगेश्वरात् = योगेश्वर

कृष्णात् = { श्रीकृष्ण
भगवान्मे

श्रुतवान् = सुना है

श्रीकृष्ण और

अर्जुनके संवाद

से संजयका

वर्णित होना ।

राजन्सस्मृत्य संस्मृत्य सवादमिममद्भुतम् ।

केशवार्जुनयोः पुण्य हृष्यामि च मुहुर्मुहुः ॥७६॥

राजन्, सस्मृत्य, संस्मृत्य, सवादम्, इमम्, अद्भुतम्,

केशवार्जुनयोः, पुण्यम्, हृष्यामि, च, मुहुर्मुहुः ॥७६॥

इमलिये-

राजन् = हे राजन्

च = और

अद्भुतम् = अद्भुत

केशवार्जुनयोः = { श्रीकृष्ण
भगवान् और
अर्जुनके

संवादम् = संवादको

संस्मृत्य

सस्मृत्य

मुहुर्मुहुः

= बारम्बार

इमम् = इम (रहस्ययुक्त)

पुण्यम् = कल्याणकारक

हृष्यामि

= हर्षित होता हूँ

तच्च मस्मृत्य संस्मृत्य रूपमत्यद्भुतं हरः ।

विस्मयो मे महान् राजन्हायामि च पुनः पुनः ॥७७॥

तत्, च, मस्मृत्य, संस्मृत्य, रूपम्, अति, अद्भुतम्, हरे,

विस्मय, मे, महान्, राजन्, हायामि, च, पुन, पुन ॥७७॥

तथा-

राजन् = हे राजन्

हरः

श्रीहरिक

तत्	= उन्	मे	= मेरे (चित्तमे)
अति	= अति	महान्	= महान्
अद्भुतम्	= अद्भुत	विस्मयः	= आश्चर्य (होता है)
रूपम्	= रूपको	च	= और
च	= भी	(अहम्)	= मे
संस्मृत्य	= { पुन पुन	पुनः पुनः	= बारम्बार
संस्मृत्य	= { स्मरण करके	हृष्यामि	= हर्षित होता हू

श्रीकृष्ण की-
यर्जुनके प्रभाव-
का वाचन ।

यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः ।

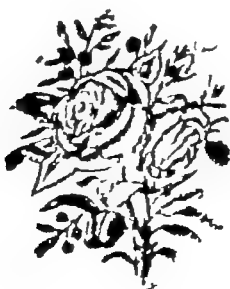
तत्र श्रीविजयो भूतिर्धुवा नीतिर्मतिर्मम ॥७८॥

यत्र, योगेश्वर, कृष्ण, यत्र, पार्थ, धनुर्धरः,
तत्र, श्री, विजयः, भूति धुवा, नीति मति, मम ॥७८॥

हे राजन ! विशेष क्या कहू-

यत्र	= जहा	तत्र	= वहीँ
योगेश्वरः	= योगेश्वर	श्रीः	= श्री
कृष्णः	= { श्रीकृष्ण भगवान् । (और)	विजयः	= विजय
		भूति	= भूति (ईश्वर)
		धुवा	= धुवा
यत्र	= जहा	नाति	= नाति
धनुर्धरः	= { गाण्डीव धनुर्धर	(इति)	= इति
पार्थ	= अर्जुन	मम	= मम
		मति	= मति

“श्रीमद्भगवद्गीता” यह एक परम रहस्यका विषय है। इसको परम कृपालु श्रीकृष्ण भगवान् ने अर्जुनको निमित्त करके सभी प्राणियोंके हितके लिये कहा है। परन्तु इसके प्रभावको वे ही पुरुष जान सकते हैं कि जो भगवान् के शरण होकर श्रद्धा, भक्तिसहित इसका अभ्यास करते हैं। इसलिये अपना कल्याण चाहनेवाले मनुष्योंको उचित है कि जितना शीघ्र हो सके अज्ञाननिद्रामे चैनकर एव अपना मुख्य कर्तव्य समझकर श्रद्धा, भक्तिसहित सदा इसका श्रवण, मनन और पठनपाठनद्वारा अभ्यास करते हुए भगवान् की आज्ञानुसार साधनमे लग जाय। क्योंकि जो मनुष्य श्रद्धा, भक्तिमहित इसका मर्म जाननेके लिये इसके अन्तर प्रवेश करके सदा इसका मनन करते हैं, एव भगवत्-आज्ञानुसार साधन करनेमे तत्पर रहते हैं, उनके अन्तःकरणमे प्रतिदिन नये-नये सदाव उत्पन्न होते हे आर वे शुद्धान्त करण हुए शीघ्र ही परमात्माको प्राप्त हो जाते हे।



ॐ श्रीपरमात्मने नमः.

त्यागसे भगवत्-प्राप्ति

— ❦ —
त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देवदेव ॥

— ❦ —
त्यक्त्वा कर्मफलासङ्गं नित्यतृप्तो निराश्रय ।
कर्मण्यभिप्रवृत्तोऽपि नैव किञ्चित्करोति न ॥
न हि देहभृता शक्यं त्यक्तुं कर्माण्यशेषतः ।
यस्तु कर्मफलत्यागी स त्यागोऽन्यभिधीयते ॥

श्रीविष्णु



ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ श्रीविष्णुः सर्वभूतहिते रतः ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ श्रीविष्णुः सर्वभूतहिते रतः ॥

ॐ श्रीपरमात्मने नमः

त्यागसे भगवत्-प्राप्ति

गृहस्थाश्रममें रहता हुआ भी मनुष्य त्यागके द्वारा परमात्माको प्राप्त कर सकता है। परमात्माको प्राप्त करनेके लिये “त्याग” ही मुख्य साधन है। अतएव सात श्रेणियोंमें विभक्त करके त्यागके लक्षण संक्षेपमें लिखे जाते हैं।

(१) निषिद्ध कर्मोंका सर्वथा त्याग।

चोरी, व्यभिचार, झूठ, कपट, छल, जवरदस्ती हिसा, अभक्ष्य-भोजन और प्रमाद आदि शास्त्रविरुद्ध नीच कर्मोंको मन, वाणी और शरीरसे किसी प्रकार भी न करना। यह पहिली श्रेणीका त्याग है।

(२) काम्य कर्मोंका त्याग।

स्त्री, पुत्र और धन आदि प्रिय वस्तुओंकी प्राप्तिके उद्देश्यमें एष रोग-संकटादिकी निवृत्तिके उद्देश्यसे किये जानेवाले यग, दान, तप और उपासनादि सकाम कर्मोंको अपने न्यार्यके लिये न करना*। यह दूसरी श्रेणीका त्याग है।

(३) तृष्णाका सर्वथा त्याग।

मान, दयाई, प्रतिष्ठा एवं स्त्री, पुत्र और धनादि जो कुछ

भी अनित्य पदार्थ प्रारब्धके अनुसार प्राप्त हुए हो उनके बढ़ने-की इच्छाको भगवत्-प्राप्तिमें बाधक समझकर उसका त्याग करना । यह तीसरी श्रेणीका त्याग है ।

(४) स्वार्थके लिये दूसरोंसे सेवा करनेका त्याग ।

अपने सुखके लिये किसीसे भी धनादि पदार्थोंकी अथवा सेवा करानेकी याचना करना एवं विना याचनाके दिये हुए पदार्थोंको या की हुई सेवाको स्वीकार करना तथा किसी प्रकार भी किसीसे अपना स्वार्थ सिद्ध करनेकी मनमें इच्छा रखना इत्यादि जो स्वार्थके लिये दूसरोंसे सेवा करानेके भाव हैं उन सबका त्याग करना* । यह चौथी श्रेणीका त्याग है ।

(५) संपूर्ण कर्तव्य कर्मोंमें आलस्य और फलही इच्छाका सर्वथा त्याग ।

ईश्वरकी भक्ति, देवताओंका पूजन, मातापितादि गुरुजनाकी सेवा, यज्ञ, दान, तप तथा वर्णाश्रमके अनुसार आजीविकाका गृहस्थका निर्वहण एवं शरीरस्वच्छता रानपान इत्यादि जितने कर्तव्य कर्म हैं उन सबमें आलस्यका और सब प्रकारकी कामनाका त्याग करना ।

(क) ईश्वर-भक्तिमें आलस्यका त्याग ।

अपने जीवनका परम कर्तव्य मानकर परमदयालु, सबके सुहृद्, परमप्रेमी, अन्तर्यामी परमेश्वरके गुण, प्रभाव और प्रेमकी रहस्यमयी कथाका श्रवण, मनन और पठन-पाठन करना तथा आलस्यरहित होकर उनके परमपुनीत नामका उत्साह-पूर्वक ध्यानसहित निरन्तर जप करना ।

(ख) ईश्वर-भक्तिमें कामनाका त्याग ।

इस लोक और परलोकके सपूर्ण भोगोंको क्षणभंगुर नाशवान् और भगवान्की भक्तिमें बाधक समझकर किसी भी वस्तुकी प्राप्तिके लिये न तो भगवान्में प्रार्थना करना और न मनमें इच्छा ही रखना । तथा किसी प्रकारका संकट आ जानेपर भी उसके निवारणके लिये भगवान्से प्रार्थना न करना अर्थात् हृदयमें ऐसा भाव रखना कि प्राण भले ही चले जायं, परन्तु इस मिथ्या जीवनके लिये विशुद्ध भक्तिमें कलङ्क लगाना उचित नहीं है । जन्मे भक्त प्रह्लादने पिताद्वारा बहुत मनाये जानेपर भी अपने कष्ट-निवारणके लिये भगवान्से प्रार्थना नहीं की ।

अपना अनिष्ट करनेवालोंको भी “भगवान् तुम्हारा शुभ करें” इत्यादि किसी प्रकारके कठोर शब्दोंसे मराम न देना और उनका अनिष्ट होनेकी मनमें इच्छा भी न रखना ।

भगवान्की भक्तिमें अभिमानमें आकर किसीको परमानादि भी न देना जैसे कि “भगवान् तुम्हें आरोग्य करें” “भगवान् तुम्हारा दुःख दूर करें” “भगवान् तुम्हारी आत्मा बचावे” इत्यादि ।

पञ्चव्यवहारमें भी सकाम शब्दोंका न लिखना अर्थात् जैसे “ॐ नमो श्रीठाकुरजी महाय है” “ठाकुरजी जिन्ही चलाय” “ठाकुरजी वर्ण करसी” “ठाकुरजी आगम करय” इत्यादि

सासारिक वस्तुओंके लिये ठाकुरजीसे प्रार्थना करनेके रूपमें सकाम शब्द मारवाड़ीसमाजमें प्रायः लिखे जाते हैं वैसे न लिखकर “श्रीपरमात्मादेव आनन्दरूपमे सर्वत्र विराजमान है” “श्रीपरमेश्वरका भजन सार है” इत्यादि निष्काम माहूलिक शब्द लिखना तथा इसके सिवाय अन्य किसी प्रकारसे भी लिखने, बोलने आदिमें सकाम शब्दोंका प्रयोग न करना ।

(ग) देवताओंके पूजनमें आलस्य और कामनाका त्याग ।

शास्त्रमर्यादासे अथवा लोकमर्यादासे पूजनेके योग्य देवताओंको पूजनेका नियत समय आनेपर उनका पूजन करनेके लिये भगवान्की आज्ञा है एवं भगवान्की आज्ञाका पालन करना परम कर्तव्य है ऐसा समझकर उत्साहपूर्वक निश्चिन्ते रहित उनका पूजन करना एवं अपने किसी प्रकारकी भी कामना न करना ।

उनके पूजनके उद्देश्यसे रोकड़ बहीगाने आदिमें भी सकाम शब्द न लिखना अर्थात् जेरो मारवाड़ीसमाजमें नये गानेके दिन अथवा दीपमालिकाके दिन श्रीलक्ष्मीजीका पूजन करके “श्रीलक्ष्मीजी लाभ मेंफलो देगी” “भण्डार भण्डार गरायी” “कृति मिटि करसी” “श्रीकालीजीके आगरे” “श्रीगङ्गाजीके आगरे” इत्यादि बहुतसे सकाम शब्द लिखे जाते हैं वैसे न लिखकर “श्रीलक्ष्मीनारायणजी सब जगत् आनन्दरूपमे विराजमान हैं” तथा “बहुत आनन्द आर उत्साहके सहित श्रीलक्ष्मीजीका पूजन किया” इत्यादि निष्काम माहूलिक शब्द लिखना और जिस शब्द नफ़्त आदि न आरम्भ करनेमें भी उपरोक्त रीतिसे ही लिखना ।

(घ) माता-पितादि गुरुजनोंकी सेवामें आलस्य और कामनाका त्याग ।

सबको सब प्रकारसे नित्य सेवा करना और उनको नित्य प्रणाम करना मनुष्यका परम कर्तव्य है इस भावको हृदयमे रखते हुए आलस्यका सर्वथा त्याग करके, निष्काम भावसे उत्साहपूर्वक भगवद्वाक्यानुसार उनकी सेवा करनेमे तत्पर रहना ।

(ङ) यज्ञ, दान और तप आदि शुभ कर्मोंमे आलस्य और कामनाका त्याग ।

पञ्च महायज्ञादि* नित्य कर्म एवं अन्यान्य नैमित्तिक कर्मरूप यज्ञादिका करना, तथा अन्न, वस्त्र, विद्या, औषध और धनादि पदार्थोंके दानद्वारा संपूर्ण जीवोंको यथायोग्य सुख पहुंचानेके लिये मन, वाणी और शरीरमे अपनी शक्तिके अनुसार चेष्टा करना तथा अपने धर्मका पालन करनेके लिये हर प्रकारसे कष्ट सहन करना इत्यादि शास्त्रविहित कर्मोंमे इस लोक और परलोकके संपूर्ण भोगोंका कामनाका सर्वथा त्याग करके एवं अपना परम कर्तव्य मानकर श्रद्धासहित उत्साहपूर्वक भगवद्वाक्यानुसार केवल भगवद्दर्श ही उनका आचरण करना ।

(च) आजीविकाद्वारा गृहस्थ-निर्वाहके उपयुक्त कर्मोंमे आलस्य और कामनाका त्याग ।

आजीविकाके कर्म जैसे वैश्यक लिये कृषि, गोपध्वज और वाणिज्यादि वाहे हैं वेमे ही जो अपने अपने वर्ण आश्रमके अनुसार शास्त्रमें विधान किये गये हैं उन सबके पालनद्वारा संसारका हित करते हुए ही गृहस्थका निर्वाह करनेके लिये भगवानकी आज्ञा है । इसलिये अपना कर्तव्य मानकर त्याग-हानिको समान समझते हुए सब प्रकारकी कामनाओंका त्याग करने उत्साहपूर्वक उपरोक्त कर्मोंका करना ।

* पञ्च महायज्ञ यह हैं । देवयज्ञ (ऋषिशास्त्रादि) जपियज्ञ (वेद-पाठ मन्त्रा, गायत्रीनपादि) पित्रयज्ञ (नरप आदि) मनुष्ययज्ञ (अतिथिसेवा) और भूतयज्ञ (दलितश्च) ।

* उपरोक्त भाष्यमे करनेवाले पुरुषके मन में होनेवाले विचार हैं

(छ) शरीरसंवन्धी कर्मोंमें आलस्य
और कामनाका त्याग ।

शरीरनिर्वाहके लिये शास्त्रोक्त रीतिमें भोजन, वस्त्र और औषधादिके सेवनरूप जो शरीरसंवन्धी कर्म हैं उनमें मन प्रकारके भोगविलासोंकी कामनाका त्याग करके एवं सुग, दुःग, लाभ हानि और जीवन मरण आदिको समान समझकर केवल भगवत्-प्राप्तिके लिये ही योग्यताके अनुसार उनका आचरण करना ।

पूर्वोक्त नार श्रेणियोंके त्यागसहित इस पाचवीं श्रेणीके त्यागानुसार संपूर्ण दोषोंका और सब प्रकारकी कामनाओंका नाश होकर केवल एक भगवत्-प्राप्ति ही ही तीव्र इच्छाका होना जानकी पटिली भूमिकामें परिपक्व अस्थिता हो प्राप्त हुए पुरुषके लक्षण समझने नाहिये ।

(६) संसारके संपूर्ण पदार्थोंमें और कर्मोंमें
ममता और आसक्तिका समाप्ति या त्याग ।

धन, भवन और वस्त्रादि संपूर्ण वस्तुएं तथा स्त्री, पुत्र और मित्रादि संपूर्ण वान् प्रयत्न एवं मान, तर्का और प्रतिष्ठा इत्यादि इस लोकमें और परलोकमें जितने विषय-भोगरूप पदार्थ हैं उन सबको शून्यमंगुर और नाशवान् होनेके कारण अतित्व समझकर उनमें ममता और आसक्तिका न रहना तथा केवल हृदय उत्तम स्थिति प्रसारण की गयी है आसक्तिका समाप्ति प्राप्ति ।

एक सच्चिदानन्दघन परमात्मामे ही अनन्यभावसे विशुद्ध प्रेम होनेके कारण मन, वाणी और शरीरद्वारा होनेवाली संपूर्ण क्रियाओंमें और शरीरमें भी ममता और आसक्तिका सर्वथा अभाव हो जाना । यह छठी श्रेणीका त्याग है ।

उक्त छठी श्रेणीके त्यागको प्राप्त हुए पुरुषोंका ससारके संपूर्ण पदार्थोंमें वैराग्य होकर केवल एक परम प्रेममय भगवान्-में ही अनन्य प्रेम हो जाता है । इसलिये उनको भगवान्के गुण-प्रभाव और रहस्यसे भरी हुई विशुद्ध प्रेमके विषयकी कथाओंका सुनना-सुनाना और मनन करना तथा एकान्त देशमें रहकर निरन्तर भगवान्का भजन, ध्यान और शास्त्रोंके मर्मका विचार करना ही प्रिय लगता है । विषयासक्त मनुष्योंमें रहकर हास्य, विलास, प्रमाद, निन्दा, विषयभोग और व्यर्थ वार्तादिमें अपने अमूल्य समयका एक क्षण भी बिताना अच्छा नहीं लगता एवं उनके द्वारा संपूर्ण कर्तव्य कर्म भगवान्के स्वरूप और नामका मनन रहते हुए ही बिना आसक्तिके केवल भगवद्दर्श होते हैं ।

इस प्रकार संपूर्ण पदार्थोंमें और कर्मोंमें ममता और आसक्तिका त्याग होकर केवल एक सच्चिदानन्दघन परमात्मामे ही विशुद्ध प्रेमका होना तानकी दूसरी भूमिमें पण्डित अवस्थाको प्राप्त हुए पुरुषके लक्षण समझने चाहिये ।

(७) संसार, शरीर और संपूर्ण कर्मोंमें सूक्ष्म
वासना और अहंभावका सर्वथा त्याग ।

संसारके संपूर्ण पदार्थ मायाके कार्य होनेसे सर्वथा अनित्य हैं और एक सच्चिदानन्दमय परमात्मा ही सर्वत्र समभावसे परिपूर्ण है ऐसा दृढ़ निश्चय होकर शरीरमहित संसारके संपूर्ण पदार्थोंमें और संपूर्ण कर्मोंमें सूक्ष्म वासनाका सर्वथा अभान हो जाना अर्थात् अन्तःकरणमें उनके निर्वोक्त संस्काररूपमें भी न रहना एवं शरीरमें अहंभावका सर्वथा अभान होकर मन, वाणी और शरीरद्वारा होनेवाले संपूर्ण कर्मोंमें कर्तापनके अभिमानका लेजमान भी न रहना । यह सान्त्वना श्रेणीका त्याग है* ।

इस सान्त्वना श्रेणीके त्यागरूप परबेराग्यको प्राप्त हुए पुरुषोंके अन्तःकरणकी वृत्तियाँ संपूर्ण रागादयो अत्यन्त उपशान्त हो जाती हैं । यदि किसी कालमें कोई रागादयिक पुनरावृत्ति भी होती है तो भी उसके साक्षात् नहीं जन्मते, क्योंकि उनही एक सच्चिदानन्दमय वागदत्त परमात्मामें ही अनन्यभावे गालि स्थिति निरन्तर बनी रहती है ।

इसलिये उनके अन्तःकरणमें संपूर्ण अवगुणोंका अभाव होकर अहिंसा १, सत्य २, अस्तेय ३, ब्रह्मचर्य ४, अपैशुनता ५, लज्जा, अमानित्व ६, निष्कपटता, शौच ७, सन्तोष ८, तितिक्षा ९, सत्सङ्ग, सेवा, यज्ञ, दान, तप १०, स्वाध्याय ११, शम १२, दम १३, विनय, आर्जव १४, दया १५, श्रद्धा १६, विवेक १७, वैराग्य १८, एकान्तवास अपरिग्रह १९, समाधान २०, उपरामता, तेज २१

१ मन वाणी और शरीरमें किसी प्रकार किसीको कष्ट न देना । २ अन्तःकरण और इन्द्रियोंके द्वारा जैसा निश्चय किया हो वगैरका वगैर ही प्रिय शब्दोंमें कहना । ३ चोरीका सर्वथा अभाव । ४ आठ प्रकारके मैथुनोंका अभाव । ५ किसीकी भी निन्दा न करना । ६ मन्त्र, मान और पूजादिका न चाहना । ७ बाहर और भीतरकी पवित्रता (मन्त्र-पूर्वक शुद्ध व्यवहारमें द्रव्यकी और उसके अन्नमें आहारकी एवं यथा-योग्य वर्तवमें आचरणोंकी और जल-मृत्तिकादिमें शरीरकी शुद्धिका तो बाहरकी शुद्धि कहते हैं और रागद्वेष तथा कपटादि चित्ताराज नाश होकर अन्तःकरणका स्वच्छ और शुद्ध हो जाना, भीतरकी शुद्धि कह्यगी है) । ८ नृणांका सर्वथा अभाव । ९ शीत, उष्ण, सुख, दुःखादि इन्द्रियासहन करना । १० स्वधर्मपालनके लिये कष्ट सहना । ११ वेद और मन शास्त्रोंका अध्ययन एवं भगवान्‌के नाम और गुणोंका कीर्तन । १२ मनका धनमें होना । १३ इन्द्रियोंका धनमें होना । १४ शरीर और इन्द्रियोंके

क्षमा १, धैर्य २, अद्रोह ३, अभय ४, निरहंकारता, शान्ति ५ और ईश्वरमें अनन्य भक्ति इत्यादि सद्गुणोंका आविर्भाव स्वभावसे ही हो जाता है ।

इस प्रकार शरीरसहित सपूर्ण पदार्थोंमें और कर्मोंमें वासना और अहंभावका अत्यन्त अभाव होकर एक सज्जिज्ञानरूपन परमात्माके स्वरूपमें ही एकीभावसे नित्य निरन्तर दृढ़ स्थिति रहना ज्ञानकी तीसरी भूमिकामें परिष्कृत अवस्थाको प्राप्त हुए पुरुषके लक्षण है ।

उपरोक्त गुणोंमेंसे कितने ही तो पहिली और दूसरी भूमिका-में ही प्राप्त हो जाते हैं परन्तु सपूर्ण गुणोंका आविर्भाव तो प्रायः तीसरी भूमिकामें ही होता है । क्योंकि यह सब भगवत्-प्राप्ति-के अनि गभीर पटुंच रूप पुरुषके लक्षण का भगवत्-स्वरूपके साक्षात् ज्ञानमें हेतु है इगीन्द्रिये श्रीकृष्ण भगवान्ने प्रायः इन्हीं गुणोंको श्रीगीताकी १३ व अ-ध्यायमें (श्लोक ७ से ११ तक) ज्ञानके नामसे तथा १६ व अ-ध्यायमें (श्लोक १ से ३ तक) वैवी गणोंके नामसे कहा है ।

तथा उक्त गुणोंको ज्ञानकागम सामान्य नाम माना है । उमन्द्रिये मनुष्यमात्रका ही उत्तम अधिकार है अतएव उपरोक्त सद्गुणोंका अपने अन्तःकरणमें आविर्भाव करनेके लिए सभीको भगवान्के शरण होकर विशेषरूपसे प्रयत्न करना चाहिये ।

इन्द्रिय मनुष्य ना प्रायः पलाययति रुद्ध इति श्रुत्यानुसारं श्री गतेन प्रायः यो गतिः ।

उपसंहार

इस लेखमें सात श्रेणियोंके त्यागद्वारा भगवत्-प्राप्ति होना कहा गया है। उनमें पहिली ५ श्रेणियोंके त्यागतक तो ज्ञानकी प्रथम भूमिकाके लक्षण और छठी श्रेणीके त्यागतक दूसरी भूमिकाके लक्षण तथा सातवीं श्रेणीके त्यागतक तीसरी भूमिकाके लक्षण बताये गये हैं। उक्त तीसरी भूमिकामें परिष्कृत अवस्थाको प्राप्त हुआ पुरुष तत्काल ही सच्चिदानन्दघन परमात्माको प्राप्त हो जाता है। फिर उसका इस क्षणभङ्गुर नाशवान् अनित्य संसारसे कुछ भी सम्बन्ध नहीं रहता, अर्थात् जैसे स्वप्नमें जगे हुए पुरुषका स्वप्नके संसारमें कुछ भी सम्बन्ध नहीं रहता वैसे ही अज्ञाननिद्रासे जगे हुए पुरुषका भी मायाके कार्यरूप अनित्य संसारमें कुछ भी सम्बन्ध नहीं रहता। यद्यपि लोक-दृष्टिमें उस ज्ञानी पुरुषके शरीरद्वारा प्रारब्धमें स्वपूर्ण कर्म होते हुए दिखाई देते हैं एवं उन कर्मोंद्वारा संसारमें ग्रहण हो लाभ पहुँचता है। क्योंकि कामना, आसक्ति और कर्तव्य अभिमानमें रगित होनेके कारण उस महात्माके मन वाणी और शरीरद्वारा किये हुए आचरण लोकमें प्रमाणस्वरूप समझे जाते हैं और ऐसे पुरुषोंमें भावनें ही शास्त्र ब्रह्म होते हैं, परन्तु यह सब होते हुए भी वह सच्चिदानन्दघन वासुदेवको प्राप्त हुआ पुरुष तो इन त्रिगुणमयी मायामें सर्वथा अतीत ही है, इसलिये वह न तो गुणोंके कार्यरूप प्रकाश, प्रवृत्ति और निद्रा आदिमें प्राप्त होनेपर उन्नत रूप धारता है और न निवृत्त होनेपर उसकी आकांक्षा ही ब्रह्म है क्योंकि सुख-दुःख, लाभ-हानि, मान-अपमान और निद्रा-स्तुति आदिमें एवं मिट्टी, पत्थर और लुण्ठन आदिमें सर्वत्र

उसका समभाव हो जाता है इसलिये उस महात्माको न तो किसी प्रिय वस्तुकी प्राप्ति और अप्रियकी निवृत्तिमें हर्ष होता है, न किसी अप्रियकी प्राप्ति और प्रियके वियोगमें शोक ही होता है। यदि उस धीर पुरुषका शरीर किसी कारणसे शस्त्र-द्वारा काटा भी जाय या उसको कोई अन्य प्रकारका भारी दुःख आकर प्राप्त हो जाय तो भी वह सच्चिदानन्दवन नाम्बुरेवमें अनन्यभावसे स्थित हुआ पुरुष उस स्थितिसे नलज्जमान नहीं होता। क्योंकि उसके अन्तःकरणमें संपूर्ण संसार मुगद्वेषाके जलकी भांति प्रतीत होता है और एक सच्चिदानन्दवन परमात्मा-के अनिर्दिष्ट अन्य किसीका भी होनापना नहीं भागता। विशेष किया कहा जाय, नाम्नामे उक्त सच्चिदानन्दवन परमात्माको प्राप्त हुए पुरुषका भाव वह साय ही जानता है। मन, बुद्धि और इन्द्रियों-द्वारा प्रकाश करनेके लिये किसीका भी सामर्थ्य नहीं है। अतएव जितना शक्ति हो सके अज्ञाननिद्रासे चेतकर उक्त सात श्रेणियों-में रहे हुए व्यागद्वारा परमात्माकी प्राप्ति करनेके लिये सत्पुरुषों-की शरण ग्रहण करके उनके कथनानुसार साधन करनेमें लग्न होना चाहिये। क्योंकि यह अति दुर्लभ मनुष्यका शरीर बहुत बन्धनों के अन्तर्गत परम व्याकुल भगवानकी कृपासे ही मिलता है। इसलिये तादात्म्य शणभङ्ग सगारह अनित्य भोगोंकी भाषनमें अपने जीवन का समस्त समय नष्ट नहीं करना चाहिये।

शान्ति शान्ति शान्ति



संस्कृतकी कुछ सानुवाद पुस्तकें—

श्रीमद्भागवत-महापुराण—(दो खण्डोमे) सानुवाद, पृष्ठ १७७६,

२१ गीन तथा १ सुनहरी चित्र, मूल्य मजिल्द ८)

श्रीविष्णुपुराण—सानुवाद, पृष्ठ ६२८, चित्र ८, मू० २॥), मजिल्द २॥॥)

अध्यात्मरामायण—सानुवाद, पृष्ठ ४०८, चित्र ८, मूल्य १॥॥), स० २)

भागवतस्तुतिसंग्रह—सानुवाद, कथाप्रसंग और शब्दकोपसहित स० २॥)

ईशावास्योपनिषद्—सानुवाद, शाङ्करभाष्यसहित, मन्त्रिच, पृष्ठ ५२, मू० ३)

केनोपनिषद्—सानुवाद, शाङ्करभाष्यसहित, मन्त्रिच, पृष्ठ १४६, मूल्य ॥)

कठोपनिषद्—सानुवाद, शाङ्करभाष्यसहित, मन्त्रिच, पृष्ठ १७८, मूल्य ॥-)

मुण्डकोपनिषद्—सानुवाद, शाङ्करभाष्यसहित, मन्त्रिच, पृष्ठ १३२, मू० ॥३)

प्रश्नोपनिषद्—सानुवाद, शाङ्करभाष्यसहित, मन्त्रिच, पृष्ठ १३०, मूल्य ॥३)

उपरोक्त पाँचों उपनिषद् एक जिल्दमें, मजिल्द [उपनिषद्-

भाष्य खण्ड १] हिन्दी-अनुवाद और शाङ्करभाष्यसहित, मूल्य २॥-)

माण्डूक्योपनिषद्—श्रीगोडपादीय काशिकासहित, सानुवाद,

शाङ्करभाष्यसहित, मन्त्रिच, पृष्ठ ३०४, मूल्य १)

पेनरेयोपनिषद्—सानुवाद, शाङ्करभाष्यसहित, मन्त्रिच, पृष्ठ १०८, मू० ॥-)

तैत्तिरीयोपनिषद्—सानुवाद, शाङ्करभाष्यसहित, मन्त्रिच पृष्ठ २९२ मू० ॥॥-)

उपरोक्त तीनों उपनिषद् एक जिल्दमें, मजिल्द [उपनिषद्-

भाष्य खण्ड २] हिन्दी-अनुवाद और शाङ्करभाष्यसहित, मूल्य २॥-)

छान्दोग्योपनिषद्—सानुवाद, शाङ्करभाष्यसहित, पृष्ठ ९६८ चित्र ९,

मजिल्द [उपनिषद् भाष्य खण्ड ३] मूल्य २॥॥)

श्वेताश्वतरोपनिषद्—सानुवाद, शाङ्करभाष्यसहित मन्त्रिच, पृष्ठ २७२, ॥॥-)

सुसुक्ष्मसर्वस्वसार—भाष्यसहित, पृष्ठ ४१६, मूल्य ॥॥-)

विष्णुसहस्रनाम—सानुवाद, शाङ्करभाष्यसहित, मन्त्रिच पृष्ठ २८६, मू० ॥-)

मूर्ति-सुधाकर—मुन्दर श्लोकसंग्रह, सानुवाद मन्त्रिच पृष्ठ २७६ मू० ॥-)

स्तोत्ररत्नावली—चुने हुए स्तोत्र, हिन्दी अनुवादसहित मन्त्रिच, पृष्ठ ३१२, ॥)

प्रतिरत्नावली—चुनी हुई श्रुतियाँ, सानुवाद, मन्त्रिच, पृष्ठ २८८ मूल्य ॥)

विवेकचूडामणि—सानुवाद, मन्त्रिच, पृष्ठ १९२, मूल्य ॥-)

प्रबोध-सुधाकर—सानुवाद, एक चित्र, पृष्ठ ८०, मूल्य ३॥॥)

पता—गीताप्रेम, गोरखपुर ।

श्रीजयदयालजी गोयन्दकाद्वारा लिखित कुछ पुस्तकें—

तत्त्व-चिन्तामणि भाग १ (सचित्र)

प्रस्तुत पुस्तकमें भक्ति, ज्ञान, वेदग्य और निष्काम कर्मयोग आदि विषयोंके लेखकके समय समयपर 'कल्याण' में प्रकाशित २९ निबन्धों का संग्रह है।

आकार २०×३० इंच काउन, मोलहोपेजी, पृष्ठ संख्या ३६०, दो सुन्दर तिरंगे चित्र, मूल्य ॥=) सजिल्द ॥।=)

तत्त्व-चिन्तामणि भाग २ (सचित्र)

(छोटे आकार का मुद्रित संस्करण)

माइज २०×२९, पत्तीसपेजी, पृष्ठ ४४८, मूल्य ॥=) सजिल्द ॥=)

तत्त्व-चिन्तामणि भाग २ (सचित्र)

इसमें ४८ निबन्धों का संग्रह है, जो समय समयपर 'कल्याण' में प्रकाशित हुए हैं। जिनको परमार्थ तत्ताही नाह है, जिनको सगारमें सुग-
शान्तिही आशपाता है, उनके लिये यह पुस्तक मार्गदर्शक है।

पृष्ठ ६३७, मूल्य प्रतागर्भ वेत ॥।=), सजिल्द १=) मा।

तत्त्व-चिन्तामणि भाग ३ (सचित्र)

(छोटे आकार का मुद्रित संस्करण)

सचित्र, संक्षिप्त भक्त-चरित-मालाकी पुस्तकें

सम्पादक—श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार

भक्त-बालक—४ रगीन, १ सादा चित्र, पृष्ठ ८०, मूल्य	१८)
भक्त-नारी—३ रगीन, ३ सादे चित्र, पृष्ठ ८०, मूल्य	१८)
भक्त-पञ्चरत्न—४ रगीन, २ सादे चित्र, पृष्ठ १००, मूल्य	१८)
आदर्श भक्त—७ चित्र, पृष्ठ-संख्या १०० मूल्य	१८)
भक्त-चन्द्रिका—७ सुन्दर रगीन चित्र, पृष्ठ ०६, मूल्य	१८)
भक्त-सप्तरत्न—७ सुन्दर रगीन चित्र, पृष्ठ १००, मूल्य	१८)
भक्त-कुसुम—६ सुन्दर निर्गुण चित्र, पृष्ठ ९४, मूल्य	१८)
प्रेमी भक्त—५ रगीन, ४ सादे चित्र, पृष्ठ १०८, मूल्य	१८)
प्राचीन भक्त—१२ रगीन, १ सादा चित्र पृष्ठ १५२, मूल्य	॥)
भक्त-सारथ—५ रगीन चित्र, पृष्ठ ११६ मूल्य	१८)
भक्त-सरोज—९ रगीन चित्र, पृष्ठ ११६, मूल्य	१८)
भक्त-सुमन—७ रगीन, २ सादे चित्र, पृष्ठ १२०, मूल्य	१८)

आदर्श चरित-मालाकी पुस्तकें

संयक—पं० श्रीशान्तनुजीराजी निगंज

सम्पादक—श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार

गीताप्रेस, गोरखपुरके सुन्दर सस्ते, धार्मिक दर्शनीय
छोटे-बड़े रंगीन और मादे चित्र

श्रीकृष्ण, श्रीराम, श्रीविष्णु, श्रीशिव, श्रीशक्ति और
संत भक्तोंके दिव्यदर्शन

जिसको देखकर हमें भगवान् याद आतें, वह तबु हमारे लिये
संग्रहणीय है। किसी भी उपायसे हमें भगवान् का मरा स्मरण होता रहे,
तो हमारा भव्य भाग्य हो। भक्तों और भगवान् के स्वरूप एवं उनकी
देवदूत योड़ी देरके लिये हमारा मन भगवान् स्मरणमें लग जाता है और
हम सामानिक पाप तापोको भूल जाते हैं।

ये सुन्दर चित्र किसी जगहमें हमारे डग भगवान् स्मरणके उद्देश्यसे
पूर्ण कर सकते हैं। उनका संग्रहकर प्रेमसे जहाँ आपसी इच्छा मिल
पड़ती हो, वहाँ परम, बैठकमें और मन्त्रिरोम लगाइये एवं चित्रोंके लिये
भगवान् का यादकर अपने मन प्राणको प्रफुल्लित कीजिये। भगवान् की
मोहिनी मूर्तिका ध्यान कीजिये।

